ध्येयIAS®
most trusted since 2003

परफेक्ट 7

dhyeyaias.com

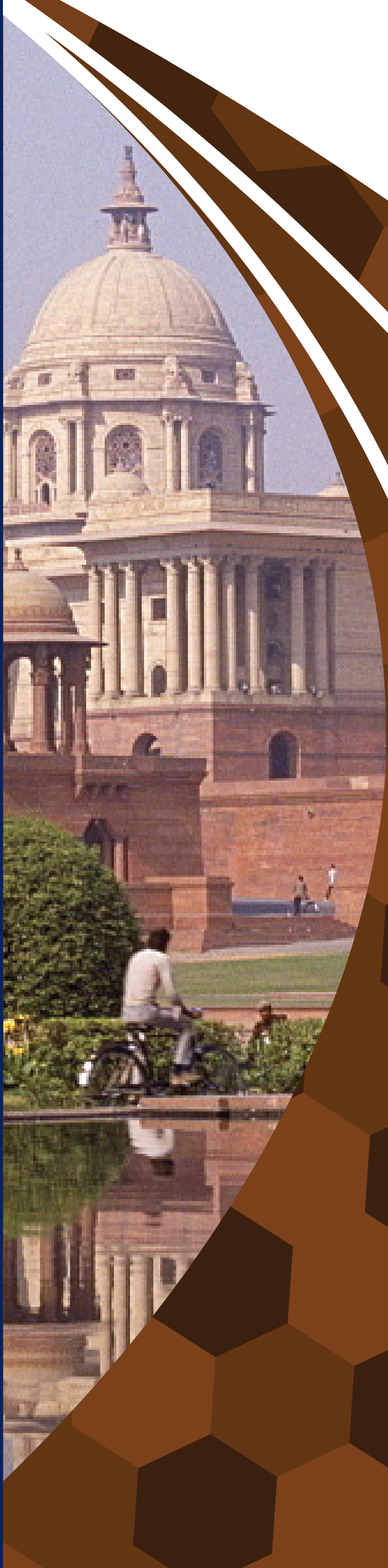

यूपीपीसीएस मुख्य परीक्षा 2024
(करंट अफेयर्स संकलन)

राजव्यवस्था और शासन

(मुख्य परीक्षा के लिए
पूरक अध्ययन सामग्री)

ध्येय IAS®
most trusted since 2003

ALIGANJ

UPSC (IAS) Foundation Batch

9th June 2025

Timing: 08:30 AM

UP - PCS Foundation Batch

11th June 2025

Timing: 09:00 AM | 06:00 PM

FOR
ONLINE COURSES

IAS- 9506256789, PCS - 7619903300

A-12 Sector-J, Aliganj, Lucknow

अपराजिता महिला एवं बाल विधेयक

चर्चा में क्यों?

हाल ही में पश्चिम बंगाल विधानसभा ने अपराजिता महिला एवं बाल (पश्चिम बंगाल आपराधिक कानून संशोधन) विधेयक, 2024 को सर्वसम्मति से पारित किया। विधेयक में यौन उत्पीड़न के मामलों में सजा बढ़ाने, जांच में तेजी लाने और त्वरित न्याय सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रमुख सुधार पेश किए गए हैं। यह विशेष रूप से भारतीय न्याय संहिता (बीएनएस) और यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (POCSO) अधिनियम के तहत अपराधों को लक्षित करता है।

मुख्य बिंदु:

- इस कानून का उद्देश्य यौन उत्पीड़न के मामलों को संबोधित करने, कठोर दंड और तेजी से जांच सुनिश्चित करने के लिए राज्य के कानूनी ढांचे को बढ़ाना है, साथ ही एफआईआर दर्ज करने में लापरवाही के लिए कानून प्रवर्तन को जवाबदेह बनाना है।
- जांच को समय पर पूरा करने के लिए राज्य पुलिस के बीच से एक विशेष 'अपराजिता टास्क फोर्स' बनाई जाएगी।
- यौन उत्पीड़न के मामलों में प्रथम सूचना रिपोर्ट (एफआईआर) दर्ज करने से इनकार करने वाले पुलिस अधिकारियों के लिए अनिवार्य दंड शामिल है।
- विधेयक में बलात्कार के दोषी व्यक्तियों के लिए मृत्युदंड का प्रावधान शामिल है, यदि पीड़िता की मृत्यु हो जाती है या उसे निष्क्रिय अवस्था में छोड़ दिया जाता है।
- बलात्कार के मामलों की समयबद्ध जांच प्रारंभिक रिपोर्ट के 21 दिनों के भीतर पूरी की जानी चाहिए।

भारतीय न्याय संहिता की धारा 64 के तहत बलात्कार की सजा:

भारतीय न्याय संहिता की धारा 64 के तहत बलात्कार के लिए सजा को अपराध की गंभीरता के अनुसार 2 उपधाराओं के अंदर बताया गया है:

- **धारा 64 (1) के तहत सजा:** इसमें बताया गया है कि जो कोई भी व्यक्ति उपधारा (2) में बताई गई बातों व परिस्थितियों को छोड़कर बलात्कार करता है। उसे कम से कम दस वर्ष तक की कठोर कारावास की सजा जिसे आजीवन कारावास (Life Imprisonment) तक बढ़ाया जा सकता है। इसके साथ ही दोषी व्यक्ति पर जुर्माना (Fine) भी लगाया जा सकता है।
- **धारा 64 (2) के तहत सजा:** इसमें बलात्कार के गंभीर रुपों के बारे में बताया गया है, यदि कोई व्यक्ति इस धारा के तहत दोषी पाया जाता है, तो उसे धारा 64(1) में दी गई सजा से अधिक सजा से दंडित (Punished) किया जा सकता है। इसके साथ ही यदि कोई व्यक्ति किसी 12 वर्ष से कम आयु की लड़की के साथ रेप का दोषी पाया जाता है तो उसे मृत्युदंड की सजा भी दी जा सकती है।

बलात्कार के गंभीर रुप:

- धारा 64(2)-किसी पुलिस अधिकारी के द्वारा अपने पद (Post) का दुरुपयोग (Misuse) करते हुए किसी महिला के साथ बलात्कार करना।
- लोक सेवक के रुप में ऐसे लोग आते है जिनको लोगों के हितों के लिए किए जाने वाले कार्य सौंपे गये है। जैसे सरकारी अधिकारी और कर्मचारी। जब कोई लोक सेवक बलात्कार करने के लिए अपने पद का दुरुपयोग करता है, तो इसे भी गंभीर अपराध माना जाता है।
- सशस्त्र बलों या सेना (Armed Forces Or Military) के जवानों या अधिकारियों द्वारा अपने पद का गलत इस्तेमाल करके किसी महिला के साथ रेप करना।
- जब कोई अधिकारी अपनी जेल में कैद किसी महिला के साथ रेप करता है।
- महिला व बाल संस्थानों के कर्मचारियों द्वारा किसी महिला के साथ रेप जैसा गंभीर अपराध करना।
- ऐसे संस्थान जो महिलाओं और बच्चों को देखभाल और सुरक्षा प्रदान करने के लिए बनाए गए हैं।

उचित परिश्रम दायित्व:

- भारत महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (CEDAW) का एक हस्ताक्षरकर्ता है, जिसके तहत देश को महिलाओं के मानवाधिकारों का सम्मान, सुरक्षा और संरक्षण करना आवश्यक है, जिसमें उनके खिलाफ हिंसा को संबोधित करना भी शामिल है।
- उचित परिश्रम की अवधारणा का यह मतलब है कि राज्य महिलाओं को हिंसा से बचाने के लिए अपने दायित्वों को कितनी अच्छी तरह पूरा करता है। यह रूपरेखा पाँच प्रमुख क्षेत्रों पर आधारित है:
  - **रोकथाम:** राज्य को हिंसा के मूल कारणों को संबोधित करना चाहिए, सामाजिक दृष्टिकोण को बदलने के लिए काम करना चाहिए, जोखिम कारकों को खत्म करना चाहिए, पीड़ितों तक पहुँचना चाहिए और यह सुनिश्चित करना चाहिए कि व्यापक कानून प्रभावी रूप से लागू हों। इसमें डेटा संग्रह, महिला संगठनों के साथ सहयोग और जोखिम वाले समूहों पर विचार करना भी शामिल होना चाहिए।
  - **सुरक्षा:** राज्य को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि पीड़ितों के लिए सहायता सेवाएँ उपलब्ध और सुलभ हों, पहले उत्तरदाताओं को प्रशिक्षित करें और संबंधित कर्मियों को प्रशिक्षित करके सकारात्मक दृष्टिकोण को बढ़ावा दें।
  - **अभियोजन:** राज्य का कर्तव्य है कि वह मामलों की कुशलतापूर्वक, निष्पक्ष और संवेदनशील तरीके से जाँच करे और मुकदमा चलाए। पीड़ितों को कानूनी सहायता और समर्थन प्रदान किया जाना चाहिए और आपराधिक न्याय प्रणाली को कुशलता से काम करना चाहिए।

» **सजा:** अपराधियों के लिए सजा निश्चित और अपराध के अनुपात में होनी चाहिए।

- **निवारण और क्षतिपूर्ति का प्रावधान:** राज्य को पीड़ित-केंद्रित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, यह सुनिश्चित करना चाहिए कि क्षतिपूर्ति प्रदान की जाए और स्थायी परिवर्तन लाने के लिए संस्थागत सुधारों पर काम करना चाहिए।
- अपने उचित परिश्रम दायित्वों को पूरा करने के लिए, राज्य को इनमें से अधिकांश या सभी क्षेत्रों को संबोधित करना चाहिए।

बुलडोजर न्याय

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने 'बुलडोजर न्याय' से संबंधित चिंताओं को संबोधित करने के लिए व्यापक दिशा-निर्देश स्थापित करने का प्रस्ताव किया है।

प्रस्तावित दिशा-निर्देश:

- सुप्रीम कोर्ट के प्रस्तावित दिशा-निर्देशों का उद्देश्य 'बुलडोजर न्याय' से संबंधित शिकायतों को रोकना है। कोर्ट ने स्पष्ट किया है कि संपत्तियों का ध्वस्तिकरण केवल आरोपों के आधार पर नहीं किया जा सकता; इसके लिए कानूनी प्रक्रिया का पालन अनिवार्य है।
- **आरोपित अपराध का प्रमाण:** बिना कानूनी प्रक्रिया और सजा के संपत्तियों का ध्वस्तिकरण उचित नहीं है।
- **कानूनी प्रोटोकॉल:** अवैध निर्माणों के मामले में भी ध्वस्तिकरण को स्थापित कानूनी प्रक्रियाओं का पालन करना चाहिए।

कानूनी प्रक्रिया को सुनिश्चित करना :

कोर्ट ने ध्वस्तिकरण में निष्पक्षता सुनिश्चित करने के लिए एक विभिन्न चरणों कों प्रस्तावित किया है:

- **पूर्व-ध्वस्तिकरण चरण:** प्राधिकृत अधिकारियों को ध्वस्तिकरण की आवश्यकता को उचित ठहराना होगा, भूमि अभिलेखों और पुनर्वास योजनाओं की जानकारी प्रकाशित करनी होगी और प्रभावित व्यक्तियों को प्रतिक्रिया देने का समय देना होगा। एक स्वतंत्र समिति को प्रस्तावित कार्यों की समीक्षा करनी चाहिए।
- **ध्वस्तिकरण चरण:** बल का उपयोग न्यूनतम किया जाना चाहिए, भारी मशीनरी से बचना चाहिए और ध्वस्तिकरण पूर्व-निर्धारित किया जाना चाहिए। आश्चर्यजनक ध्वस्तिकरणों को दंडित किया जाएगा।
- **पुनर्वास चरण:** उचित मुआवजा और पुनर्वास प्रदान किया जाना चाहिए, और एक शिकायत निवारण तंत्र स्थापित किया जाना चाहिए।

बुलडोजर न्याय क्या है?

- बुलडोजर न्याय उन व्यक्तियों की संपत्तियों का अतिरिक्त-वैधानिक ध्वस्तिकरण होता है जिन पर अपराध के आरोप होते हैं। यह तरीका, जो बुलडोजरों का उपयोग करके लागू किया जाता है, यह भारत के विभिन्न हिस्सों में देखा गया है।
- यह रणनीति आमतौर पर दंड के रूप में इस्तेमाल की जाती है, उन घरों और व्यवसायों को लक्ष्य बनाते हुए जिन्हें दंगों या अन्य अपराधों में शामिल माना जाता है।

हाल के उदाहरण:

- **नूह, हरियाणा (2023):** धार्मिक समूहों के बीच झगड़ों के परिणामस्वरूप कई घरों का ध्वस्तिकरण हुआ।
- **खरगोन, मध्य प्रदेश:** साम्प्रदायिक दंगों के बाद भी इसी तरह के ध्वस्तिकरण हुए, जिसमें उन लोगों की संपत्तियों को प्रभावित किया गया जो दंगों में शामिल माने गए थे।
- इन उदाहरणों में, ध्वस्तिकरणों को नगरपालिका कानूनों के तहत उचित ठहराया गया है, अक्सर अतिक्रमणों या अवैध निर्माणों के खिलाफ कार्रवाई के रूप में इसे पेश किया जाता है। हालांकि, यह तरीका अक्सर सुप्रीम कोर्ट और उच्च न्यायालयों के पूर्ववर्ती निर्णयों जैसे कि सुदामा सिंह बनाम दिल्ली सरकार और अजय माकन बनाम केंद्र सरकार के मामलों द्वारा निर्धारित कानूनी प्रक्रियाओं को नजरअंदाज करता है।

कानून के उल्लंघन:

- **पुनरावृत्ति उपाय:** बुलडोजर न्याय का तरीका, जो "आंख के बदले आंख" की मानसिकता से प्रेरित है, इसमें कानूनी औचित्य और प्रक्रिया की कमी है।
- **मूल अधिकार:** कानूनी प्रक्रियाओं का पालन किए बिना किए गए ध्वस्तिकरण मूल अधिकारों का उल्लंघन करते हैं, जिससे संभावित संवैधानिक उल्लंघन हो सकता है।
- **संपत्ति का नुकसान:** ऐसे कार्यों के परिणामस्वरूप मूल्यवान संपत्तियों का नुकसान हो सकता है, जो प्रभावित परिवारों की वित्तीय स्थिरता को प्रभावित करता है।
- **नैतिक चिंताएँ:** यह तरीका निष्पक्षता और न्याय के सवाल उठाता है, विशेषकर जब यह पूरे परिवारों को विस्थापित करता है।

सुप्रीम कोर्ट के नये ध्वज और प्रतीक का अनावरण

चर्चा में क्यों?

हाल ही में राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने भारत के सुप्रीम कोर्ट के 75वें स्थापना वर्ष के उपलक्ष्य में सुप्रीम कोर्ट के नए ध्वज और प्रतीक का अनावरण किया।

नया ध्वज और प्रतीक के बारे में:

- नए ध्वज में नीले रंग की पृष्ठभूमि पर अशोक चक्र, सुप्रीम कोर्ट की इमारत और भारतीय संविधान की पुस्तक को दर्शाया गया है।
- अशोक चक्र का उपयोग न्याय के धर्मचक्र या 'कानून के पहिए' को दर्शाने के लिए किया गया है, जो मौर्य साम्राज्य के तीसरे

सदी के सम्राट अशोक द्वारा निर्मित सारनाथ लायन कैपिटल से प्रेरित है। ध्वज पर 'सुप्रीम कोर्ट ऑफ इंडिया' और 'यतो धर्मस्ततो जय:' (देवनागरी लिपि में) लिखा हुआ है।

- **'यतो धर्मस्ततो जय'**: संस्कृत में एक महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति है, जिसका अनुवाद है 'जहां धर्म है, वहीं विजय है' या 'विजय वहीं होती है जहां धर्म (सच्चाई) प्रबल होता है।' यह सूत्र न्याय और सच्चाई की विजय की पुष्टि करता है और सुप्रीम कोर्ट के आदर्शों को व्यक्त करता है।

सुप्रीम कोर्ट की स्थापना:

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 124 के अनुसार, 'भारत का एक सुप्रीम कोर्ट होगा।' 28 जनवरी 1950 को सुप्रीम कोर्ट की स्थापना की गई थी। भारत के पहले राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने 4 अगस्त 1958 को सुप्रीम कोर्ट की वर्तमान इमारत का उद्घाटन किया।
- मूल संविधान 1950 में एक मुख्य न्यायाधीश और 7 न्यायाधीशों के साथ सुप्रीम कोर्ट की कल्पना की गई थी और संसद को इस संख्या को बढ़ाने का अधिकार दिया गया था। कार्यभार बढ़ने के कारण, संसद ने न्यायाधीशों की संख्या 1950 में 8 से बढ़ाकर 1956 में 11, 1960 में 14, 1978 में 18, 1986 में 26, 2009 में 31 और 2019 में 34 (वर्तमान संख्या) कर दी।

सुप्रीम कोर्ट का कार्यभार और संरचना:

- सुप्रीम कोर्ट भारत का सर्वोच्च न्यायालय है, जिसकी जिम्मेदारी संविधान की व्याख्या, राज्यों और केंद्र के बीच विवादों का निपटान और कानूनों और सरकारी कार्यों की वैधता की निगरानी करना है।
- **न्यायिक समीक्षा:** सुप्रीम कोर्ट कानूनों और कार्यकारी कार्यों की संवैधानिकता की समीक्षा करता है और यदि कोई कानून संविधान का उल्लंघन करता है, तो उसे निरस्त कर सकता है।
- **मूल अधिकार:** सुप्रीम कोर्ट मूल अधिकारों की रक्षा करता है जो संविधान द्वारा गारंटीकृत हैं।
- **संविधान की व्याख्या:** यह संविधान के प्रावधानों की व्याख्या करता है, जिससे संवैधानिक सिद्धांतों की समझ और लागू करने में मदद मिलती है।
- **जनहित याचिका (PIL):** कोर्ट जनहित याचिकाओं को स्वीकार करता है, जो लोगों या समूहों को सार्वजनिक मुद्दों पर न्याय की मांग करने की अनुमति देती है।

सुभद्रा योजना

चर्चा में क्यों?

हाल ही में ओडिशा सरकार ने सुभद्रा योजना की शुरुआत की, जो एक महिला-केंद्रित कल्याण योजना है। इसका उद्देश्य 21 से 60 वर्ष की आयु की महिलाओं को आर्थिक सहायता प्रदान करना है। इस योजना का लाभ 1 करोड़ से अधिक महिलाओं को मिलने का अनुमान है।

सुभद्रा योजना के बारे में:

उद्देश्य:

- सुभद्रा योजना का मुख्य उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग की महिलाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करना है। योजना के तहत, योग्य महिलाएं अगले पांच वर्षों में कुल 50,000 रूपए की सहायता प्राप्त करेंगी। यह धन सीधे आधार-संबंधित बैंक खातों में दो किस्तों में ट्रांसफर किया जाएगा, जो राखी पूर्णिमा और अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर 5,000 रूपए की किस्त के रूप में जारी किया जायेंगे।

मुख्य विशेषताएँ:

- पात्रता: 21 से 60 वर्ष की आयु की महिलाएं, जो आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि से आती हैं। सरकारी कर्मचारी, आयकरदाता, और अन्य सरकारी योजनाओं से 1,500 रूपए प्रति माह से अधिक सहायता प्राप्त करने वाली महिलाएं पात्र नहीं होंगी।
- **किस्तें:** प्रत्येक योग्य महिला को वार्षिक 10,000 रूपए जो दो किस्तों में दी जाएंगी।
- **अवधि:** योजना की अवधि 2024 से 2029 तक निर्धारित है।
- पंजीकरण: योजना के लिए पंजीकरण 1 सितंबर 2024 से शुरू हुआ, और अब तक 50 लाख से अधिक महिलाएं लाभार्थी के रूप में पंजीकृत हो चुकी हैं। पंजीकरण के लिए कोई अंतिम तिथि नहीं है।
- **प्रोत्साहन:** प्रत्येक ग्राम पंचायत और शहरी क्षेत्र में शीर्ष 100 डिजिटल लेनदेन करने वाली महिलाओं को अतिरिक्त 500 रूपए दिए जाएंगे।
- **डेबिट कार्ड:** लाभार्थियों को 'सुभद्रा डेबिट कार्ड' प्रदान किया जाएगा, जिससे लेनदेन आसान होगा।

कार्यान्वयन:

- सरकार JAM त्रिकोण (जन धन-आधार-मोबाइल) का उपयोग करके धन के कुशल वितरण को सुनिश्चित करने का प्रयास कर रही है। योजना के लिए पात्रता प्राप्त करने के लिए लाभार्थियों को ई-केवाईसी पूरा करना होगा। 17 सितंबर 2024 तक,1,250 करोड़ रूपए 25 लाख पंजीकृत महिलाओं के खातों में ट्रांसफर किए जा चुके हैं।

एनपीएस वात्सल्य योजना

चर्चा में क्यों?

जुलाई 2024 के संघीय बजट के अनुरूप, वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने नाबालिगों के लिए एक पेंशन योजना एनपीएस वात्सल्य योजना पेश की है। इस पहल को भारत के 75 स्थानों पर लॉन्च किया गया है, जिसमें 250 से अधिक स्थायी रिटायरमेंट अकाउंट नंबर (PRAN) युवा ग्राहकों को जारी किए गए हैं।

एनपीएस वात्सल्य योजना के बारे में :

- एनपीएस वात्सल्य योजना एक बचत-सहित-पेंशन योजना के

रूप में लागू की गई है, जोकि माता-पिता को अपने नाबालिग बच्चों के लिए NPS खाते में निवेश करने की अनुमति देती है। यह मौजूदा राष्ट्रीय पेंशन योजना (NPS) का विस्तार है, लेकिन इसका ध्यान बच्चों पर है।

- खाता नाबालिग के नाम पर पंजीकृत होगा और इसे माता-पिता/अभिभावक द्वारा संचालित किया जाएगा। बाद में, जब बच्चा 18 वर्ष का हो जाएगा, तो खाता नियमित NPS टियर-1 खाते में स्थानांतरित किया जा सकता है। यह योजना पेंशन फंड रेगुलेटरी और डेवलपमेंट अथॉरिटी (PFRDA) द्वारा प्रबंधित की जा रही है, और इसका उद्देश्य बच्चों के लिए दीर्घकालिक संपत्ति को सुरक्षित करना है। नए पंजीकृत नाबालिग ग्राहकों को स्थायी रिटायरमेंट अकाउंट नंबर (PRAN) कार्ड जारी किए जाएंगे।

NPS वात्सल्य की विशेषताएँ:

- **पात्रता मानदंड:** 18 वर्ष से कम आयु का कोई भी नाबालिग, जिसके पास PAN कार्ड और आधार कार्ड है, पात्र है।
- **न्यूनतम योगदान:** न्यूनतम 1,000 रुपये प्रति वर्ष का योगदान किया जा सकता है, जबकि अधिकतम योगदान पर कोई सीमा नहीं है।
- **योजना के लिए योगदानकर्ता:** माता-पिता/अभिभावक अपने बच्चों की ओर से योगदान कर सकते हैं।
- **18 वर्ष की आयु के बाद संक्रमण:** नाबालिग का NPS खाता आवश्यक KYC दस्तावेजों की प्रस्तुति के बाद एक मानक NPS खाते में परिवर्तित हो जाएगा।

पेंशन फंड रेगुलेटरी और डेवलपमेंट अथॉरिटी (PFRDA) के बारे में:

- पेंशन फंड रेगुलेटरी और डेवलपमेंट अथॉरिटी (PFRDA) अधिनियम, 19 सितंबर 2013 को पारित हुआ और 1 फरवरी 2014 को अधिसूचित किया गया, जो राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (NPS) को नियंत्रित करता है।
- PFRDA केंद्रीय और राज्य सरकारों, निजी संस्थानों और असंगठित क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए NPS की देखरेख करता है।
- इसका मुख्य उद्देश्य पेंशन फंडों को नियंत्रित करके बुजुर्गों की आय सुरक्षा को बढ़ावा देना और ग्राहकों के हितों की रक्षा करना है।

मैरिटल रेप: सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई और भविष्य

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत में मैरिटल रेप, अर्थात् वैवाहिक बलात्कार, एक संवेदनशील एवं विवादास्पद विषय बना हुआ है।

सुप्रीम कोर्ट की पक्ष:

- सुप्रीम कोर्ट की बेंच, जिसकी अध्यक्षता चीफ जस्टिस डीवाई चंद्रचूड़ कर रहे हैं, ने इन याचिकाओं पर सुनवाई का निर्णय लिया है। बेंच ने स्पष्ट किया कि केंद्र सरकार के द्वारा कोई उत्तर न दिए जाने के बावजूद, यह एक कानून का मामला है और सरकार को इस पर चर्चा करनी होगी। वरिष्ठ अधिवक्ता इंदिरा जयसिंह ने अदालत से शीघ्र सुनवाई की अपील की, जिसे स्वीकार कर लिया गया।

मैरिटल रेप:

- मैरिटल रेप (वैवाहिक बलात्कार) उस स्थिति को कहते हैं जब एक पति अपनी पत्नी के साथ उसकी सहमति के बिना शारीरिक संबंध बनाता है।
- भारत में, वैवाहिक बलात्कार को कानूनी रूप से अपराध नहीं माना जाता, यदि पत्नी की आयु 18 वर्ष से अधिक हो। इसका अर्थ है कि विवाह के बाद पति को पत्नी के साथ जबरन यौन संबंध बनाने की अनुमति होती है।

कानूनी प्रावधान:

- वर्तमान में, भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 375 में एक अपवाद है, जिसके अनुसार यदि पति अपनी पत्नी के साथ जबरन शारीरिक संबंध बनाता है, तो इसे बलात्कार नहीं माना जाता। यह अपवाद महिलाओं के लिए अत्यंत विवादास्पद है, क्योंकि यह उन्हें सुरक्षा और न्याय से वंचित करता है।

महिलायें इस मुद्दे का खुलकर विरोध क्यों नहीं करती?

- **पितृसत्तात्मक मानदंड:** समाज में विवाह को अक्सर सहमति मान लिया जाता है, जिससे पीड़ितों को आवाज उठाने में कठिनाई होती है।
- **सामाजिक कलंक:** कई महिलाएँ परिवार और समाज के डर से शिकायत नहीं करतीं।
- **आंकड़ों की कमी:** वैवाहिक बलात्कार के मामलों पर कोई आधिकारिक आंकड़े नहीं हैं।
- **कानूनी अस्पष्टता:** यह स्पष्ट नहीं है कि वैवाहिक बलात्कार के अंतर्गत क्या आता है।

पूर्व के निर्णय:

- इस मुद्दे पर कई महत्वपूर्ण टिप्पणियां पहले की गई हैं। 2022 में, दिल्ली हाईकोर्ट ने मैरिटल रेप को असंवैधानिक बताया था, जबकि कर्नाटक हाईकोर्ट ने इसे चुनौती देने वाले याचिकाकर्ता को सुप्रीम कोर्ट जाने की अनुमति दी थी।
- राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-5) के आंकड़ों से स्पष्ट होता है कि भारत में 29% से अधिक महिलाएं अपने पतियों द्वारा शारीरिक या यौन हिंसा का सामना कर रही हैं।

केंद्र का पक्ष:

- केंद्र सरकार का रुख स्पष्ट नहीं है। सॉलिसिटर जनरल तुषार मेहता ने कहा था कि इस मुद्दे को सिर्फ कानूनी दृष्टिकोण से नहीं देखा जा सकता, बल्कि इसके सामाजिक परिणामों पर भी विचार किया जाना चाहिए। कुछ विशेषज्ञ मानते हैं कि यदि

मैरिटल रेप को अपराध माना जाता है, तो इससे शादी जैसी संस्था को खतरा हो सकता है।

बाल पोर्नोग्राफी पर सुप्रीम कोर्ट

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण निर्णय में कहा कि बच्चों से संबंधित पोर्नोग्राफिक गतिविधिया यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण करने संबंधी अधिनियम (POCSO) और सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम के अंतर्गत आपराधिक कृत्य है।

अदालत द्वारा उठाए गए मुख्य बिंदु:

- बच्चों से जुड़ी पोर्नोग्राफिक गतिविधियों को देखना, डाउनलोड करना, स्टोर करना, रखना, वितरित करना या दिखाना निम्नलिखित के तहत आपराधिक दायित्व को आकर्षित करता है:
  - यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (POCSO)
  - सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम
- अदालत ने स्पष्ट किया कि यौन क्रिया केवल बच्चे के उत्पीड़न की प्रारंभिक अवस्था है। ऐसे कार्यों की रिकॉर्डिंग और वितरण से उत्पन्न आघात न केवल तत्काल प्रभाव डालता है, बल्कि यह बच्चे के मनोवैज्ञानिक स्वास्थ्य को दीर्घकालिक रूप से भी प्रभावित करता है।
- सर्वोच्च न्यायालय ने संसद से अनुरोध किया कि यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (POCSO) में आवश्यक संशोधन किया जाए, जिसमें 'बाल पोर्नोग्राफी' की परिभाषा को 'बाल यौन शोषण और दुर्व्यवहार सामग्री' (CSEAM) में परिवर्तित किया जाए। यह परिवर्तन बच्चों के प्रति समाज के उत्तरदायित्व को और स्पष्ट करेगा।
- न्यायालय ने सभी न्यायालयों को निर्देश दिया कि वे इन अपराध ों की प्रकृति को अधिक सटीक रूप से दर्शाने के लिए अपने निर्णयों और आदेशों में CSEAM शब्द का उपयोग करें। यह सुनिश्चित करेगा कि न्यायालयी प्रक्रिया में बच्चों के अधिकारों और सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाए।
- न्यायालय ने स्पष्ट किया कि बाल यौन शोषण और दुर्व्यवहार सामग्री (CSEAM) का अवलोकन और बाल यौन शोषण के वास्तविक कृत्यों में संलग्न होना दोनों के बीच कोई महत्वपूर्ण भेद नहीं है। दोनों गतिविधियाँ एक समान उद्देश्य को दर्शाती हैं, जिसमें बच्चे का शोषण करना और उसे अपमानित करना शामिल है, जो बच्चों की सुरक्षा के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न करता है।
- यह निर्णय मद्रास उच्च न्यायालय के पूर्व में लिए गए फैसले के खिलाफ NGO "जस्ट राइट फॉर चिल्ड्रन अलायंस" द्वारा दायर की गई अपील के परिणामस्वरूप आया। अदालत ने यह निर्णय सुनाया था कि बाल पोर्नोग्राफिक सामग्री का संग्रहण या भंडारण यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण अधिनियम (POCSO) के अंतर्गत अपराध नहीं है, जिसे सर्वोच्च न्यायालय ने निराधार मानते हुए खारिज कर दिया।

कानूनी संदर्भ:

- **POCSO अधिनियम, धारा 15:** यह बाल पोर्नोग्राफिक सामग्री के भंडारण और कब्जे को अपराध बनाता है।
- **सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, धारा 67B:** बाल पोर्नोग्राफी सहित अश्लील सामग्रियों के उपयोग, प्रसारण और प्रकाशन को दंडित करता है, और बाल शोषण सामग्री को ब्राउज करना या बनाना अपराध बनाता है।

बाल पोर्नोग्राफी के बारे में:

- बाल पोर्नोग्राफी 'किसी नाबालिग (18 वर्ष से कम आयु) से जुड़े यौन रूप से स्पष्ट आचरण के किसी भी दृश्य चित्रण' को संदर्भित करता है। ये चित्रण विभिन्न स्वरूपों में हो सकते हैं, जिनमें शामिल हैं: तस्वीरें, वीडियो, डिजिटल चित्र या वीडियो, अविकसित फिल्म और कंप्यूटर से उत्पन्न चित्र।
- अमेरिका स्थित नेशनल सेंटर फॉर मिसिंग एंड एक्सप्लॉइटेड चिल्ड्रन (NCMEC) के अनुसार, भारत ऑनलाइन बाल यौन शोषण सामग्री के मामले में अग्रणी देश है। भारतीय उपयोगकर्ताओं ने 2024 की पहली छमाही के दौरान बाल यौन शोषण से संबंधित लगभग 25,000 चित्र या वीडियो अपलोड किए।
- बाल पोर्नोग्राफी अपलोड की संख्या के मामले में दिल्ली सबसे ऊपर है, उसके बाद महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल का स्थान है।
- राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) की 2018 की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में बाल पोर्नोग्राफिक सामग्री बनाने या संग्रहीत करने के 781 मामले दर्ज किए गए, जिसमें ओडिशा में सबसे अधिक 333 मामले दर्ज किए गए। NCRB का यह भी अनुमान है कि भारत में हर 15 मिनट में एक बच्चे का यौन शोषण होता है।

न्यायालय में स्थगन और न्याय सुनिश्चित करने की आवश्यकता

चर्चा में क्यों?

राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने भारत की न्यायपालिका में मामलों में देरी की संस्कृति को समाप्त करने की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने न्यायालयों में लंबित मामलों की प्रक्रिया को 'काले कोट सिंड्रोम' की संज्ञा दी, जो विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र के लोगों के लिए देरी और तनाव का स्रोत बन गई है।

लंबित मामलों के कारण:

- **न्यायाधीशों की कमी:** उच्च न्यायालयों में औसतन 30% और अधीनस्थ न्यायालयों में 22% पद रिक्त हैं, जिससे न्यायिक प्रणाली गंभीर रूप से कमजोर हो गई है।

- **आवश्यक स्थगन:** वकील अक्सर प्रक्रियात्मक देरी का लाभ उठाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मामलों की संख्या बढ़ती है और न्यायिक प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न होता है।
- **सरकारी मामलों की उच्च मात्रा:** सरकारी मामलों की संख्या में वृद्धि न्यायालयों में देरी का एक महत्वपूर्ण कारण बनती है, जिससे न्यायिक संसाधनों पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है।
- **प्रक्रियागत जटिलताएँ:** न्यायिक प्रक्रियाएँ जटिल और समय लेने वाली होती हैं, जिसमें दस्तावेजों की जांच, गवाहों की सुनवाई और कानूनी दावों की प्रक्रिया शामिल होती है, जिससे निपटारे में देरी होती है।
- **समुदाय में जागरूकता की कमी:** ग्रामीण क्षेत्रों में लोग न्यायिक प्रक्रियाओं और अपने अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं होते, जिससे उन्हें उचित कानूनी सहायता नहीं मिलती और मामले लंबित रह जाते हैं।
- **न्यायालयों में अवसंरचनात्मक समस्याएँ:** कई न्यायालयों में अवसंरचना की कमी, जैसे कि पर्याप्त कोर्ट रूम, तकनीकी सुविधाएँ और मानव संसाधनों की कमी, भी मामलों की सुनवाई में देरी का कारण बनती है।

प्रस्तावित समाधान:

इन चुनौतियों का सामना करने के लिए राष्ट्रपति मुर्मू ने कई व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किए हैं:

- **नियमित सम्मेलन:** उन्होंने हर दो से तीन महीने में जिला न्यायपालिका का राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित करने का सुझाव दिया। यह सम्मेलन लंबित मामलों को प्राथमिकता देने और न्यायिक अधिकारियों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने में मदद करेगा।
- **समग्र विकास:** राष्ट्रपति ने न्यायपालिका के सभी पहलुओं में तेज विकास की आवश्यकता पर जोर दिया, जिसमें प्रशासन, अवसंरचना, सुविधाएँ और मानव संसाधनों में सुधार शामिल है।

भारत की न्यायपालिका:

- भारत की न्यायपालिका संविधान के तहत स्थापित एक स्वतंत्र और महत्वपूर्ण संस्थान है, जिसका मुख्य उद्देश्य न्याय सुनिश्चित करना और कानून के शासन को बनाए रखना है।

संरचना:

- **सर्वोच्च न्यायालय:** भारत का सर्वोच्च न्यायालय, नई दिल्ली में स्थित, देश का सबसे उच्च न्यायालय है। यह संविधान की व्याख्या और रक्षा के लिए जिम्मेदार है (अनुच्छेद 124)।
- **उच्च न्यायालय:** प्रत्येक राज्य और संघ प्रदेश में उच्च न्यायालय होते हैं, जो संबंधित क्षेत्राधिकार में अपीलों और मामलों की सुनवाई करते हैं (अनुच्छेद 214)।
- **अधीनस्थ न्यायालय:** इसमें सिविल और आपराधिक मामलों की सुनवाई करने वाले जिला अदालतें और अन्य निचली अदालतें शामिल होती हैं।

स्वतंत्रता और निष्पक्षता:

- भारत की न्यायपालिका संविधान के अनुच्छेद 50 के तहत कार्यपालिका और विधायिका से स्वतंत्र है। यह स्वतंत्रता न्याय के निष्पक्ष वितरण को सुनिश्चित करती है।

न्यायिक समीक्षा:

- न्यायपालिका का एक प्रमुख कार्य विधायिका द्वारा पारित कानूनों और कार्यपालिका के आदेशों की समीक्षा करना है, ताकि वे संविधान के अनुरूप हों (अनुच्छेद 13)।

जनहित याचिकाएँ:

- न्यायपालिका में जनहित याचिकाओं की व्यवस्था है, जिससे आम जनता के हित में मामलों को उठाया जा सकता है (अनुच्छेद 32)।

भारत में निष्क्रिय इच्छामृत्यु: करुणा, स्वायत्तता और कानूनी सुरक्षा के मध्य संतुलन

सन्दर्भ:

निष्क्रिय इच्छामृत्यु घातक रूप से बीमार रोगियों से जीवन-रक्षक उपचार को रोकने या वापस लेने की प्रक्रिया है, जोकि भारत में एक विवादास्पद विषय रहा है। हाल ही में, स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय (DGHS) ने भारत के स्वास्थ्य सेवा परिदृश्य में कानूनी, नैतिक और व्यावहारिक चिंताओं का समाधान करते हुए इस प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने के लिए नए मसौदा दिशानिर्देश पेश किए हैं।

भारत में निष्क्रिय इच्छामृत्यु का कानूनी विकास:

- सर्वोच्च न्यायालय ने 2018 के कॉमन कॉज बनाम भारत संघ के निर्णय में गरिमा के साथ मरने के अधिकार को मान्यता दी। इस निर्णय के तहत, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत निष्क्रिय इच्छामृत्यु के लिए एक कानूनी ढांचा स्थापित किया गया। इसके परिणामस्वरूप एडवांस मेडिकल डायरेक्टिव (AMD) की अनुमति मिली, जिससे रोगियों को जीवन के अंत में अपनी देखभाल के संबंध में प्राथमिकताएँ दर्ज करने का अधिकार मिला, जिसमें जीवन रक्षक वापस लेने के अधिकार भी शामिल थे। हालाँकि, 2018 के दिशा-निर्देशों ने न्यायिक और चिकित्सा समीक्षा की कई परतों को अनिवार्य किया, जिसे इंडियन सोसाइटी फॉर क्रिटिकल केयर मेडिसिन सहित विभिन्न हितधारकों ने इसे अत्यधिक बोझिल माना।
- इन चुनौतियों का समाधान करने के लिए, स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय (DGHS) ने हाल ही में निष्क्रिय इच्छामृत्यु की प्रक्रिया को सरल बनाने के लिए नए मसौदा दिशानिर्देश प्रस्तुत किए हैं, जिनमें करुणा, रोगी की स्वायत्तता के प्रति सम्मान और नैतिक जिम्मेदारी पर बल दिया गया है। अद्यतन दिशानिर्देश जीवन के अंत के निर्णयों को अधिक सुलभ, कानूनी रूप से उपयुक्त और रोगी-केंद्रित बनाने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता को प्रतिबिंबित करते हैं।

डीजीएचएस दिशानिर्देशों के प्रमुख प्रावधान:

- नए डीजीएचएस दिशा-निर्देश रोगी के अधिकारों की रक्षा तथा कानूनी अनुपालन सुनिश्चित करते हुए निष्क्रिय इच्छामृत्यु को सुविधाजनक बनाने के लिए मानदंड और प्रक्रियाओं की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। प्रमुख प्रावधानों में शामिल हैं:
- **जीवन रक्षक प्रणाली वापस लेने की शर्तें:** निष्क्रिय इच्छामृत्यु पर विचार तब किया जा सकता है जब:
  - » मानव अंग प्रत्यारोपण अधिनियम (THOA) के अंतर्गत मरीज को मृत (ब्रेनस्टेम) घोषित किया गया हो।
  - » चिकित्सा आकलन से यह स्पष्ट हो कि निरंतर उपचार से कोई लाभ नहीं होगा, जैसे कि असाध्य रोगों के मामले में।
  - » रोगी या उसके कानूनी प्रतिनिधि द्वारा लिखित रूप में जीवन-रक्षक उपचार को छोड़ने की इच्छा व्यक्त की गई हो।
  - » सभी प्रक्रियाएं सुप्रीम कोर्ट के प्रोटोकॉल का पालन करें, जिससे कानूनी और नैतिक सुदृढ़ता सुनिश्चित हो सके।
- **सुव्यवस्थित मेडिकल बोर्ड की आवश्यकताएँ:** 2018 के दिशा-निर्देशों के अनुसार, मेडिकल बोर्ड द्वारा दो-चरणीय समीक्षा की आवश्यकता थी, जिसमें प्रत्येक में कम से कम 20 वर्ष का अनुभव रखने वाले डॉक्टर शामिल थे। अब डीजीएचएस न्यूनतम पाँच वर्ष के अनुभव वाले डॉक्टरों को अनुमति देता है, जिसमें बोर्ड में तीन सदस्य रहेंगे। यह विशेष रूप से छोटी सुविधाओं वाले अस्पतालों के लिए दिशा-निर्देशों का पालन करना सरल बनाता है।
- **निर्णय लेने की समय सीमा:** डीजीएचएस ने प्राथमिक और द्वितीयक मेडिकल बोर्ड दोनों को निर्णय देने के लिए 48 घंटे की अवधि निर्धारित की है। इस प्रावधान का उद्देश्य समय पर और सहानुभूतिपूर्ण निर्णय लेना सुनिश्चित करना है, जिससे गंभीर रूप से बीमार रोगियों की देखभाल में तेजी लाई जा सके।
- **सीपीआर न करने के निर्देश (डीएनएआर):** दिशा निर्देशों में डॉक्टरों को पुनर्जीवन प्रयासों (सीपीआर) से परहेज करने की अनुमति मिलती है जब बचने की संभावना नगण्य होती है। यह अतिरिक्त आदेश अनावश्यक चिकित्सा हस्तक्षेपों से बचने और रोगी के अधिकार को सम्मान देने के महत्व को उजागर करता है।
- **कानूनी और नैतिक सुरक्षा:** दिशा-निर्देश रोगी की स्वायत्तता की पुष्टि करते हैं, जिससे निर्णय लेने की क्षमता वाले लोगों को जीवन-रक्षक उपचार से इनकार करने की अनुमति मिलती है। ऐसे मामलों में जहां रोगी अक्षम हैं, एक प्राथमिक चिकित्सा बोर्ड (पीएमबी) की सहमति, जिसे द्वितीयक बोर्ड (एसएमबी) द्वारा मान्य किया जाता है, की आवश्यकता होती है। यह स्तरित दृष्टिकोण नैतिक निगरानी और कानूनी जवाबदेही सुनिश्चित करता है।

डीजीएचएस दिशानिर्देशों के संभावित लाभ:

- **रोगी की स्वायत्तता को बढ़ाना:** एडवांस मेडिकल डायरेक्टिव (AMD) के माध्यम से रोगियों को जीवन के अंत की प्राथमिकताओं को स्पष्ट करने की अनुमति देकर, दिशानिर्देश व्यक्तिगत अधिकारों और गरिमा के सम्मान को बढ़ावा देते हैं। इससे रोगियों को यह आश्वासन मिलता है कि उनके मूल्यों और विकल्पों का सम्मान किया जाएगा, जो एक अधिक मानवीय स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में योगदान करता है।
- **परिवारों पर वित्तीय और भावनात्मक बोझ कम करना:** जीवन-रक्षक उपचार अक्सर परिवारों के लिए महत्वपूर्ण वित्तीय

और भावनात्मक तनाव का कारण बनते हैं। उपचार को वापस लेने की सुविधा प्रदान करने से परिवार अपने प्रियजनों के साथ सहायक देखभाल और व्यक्तिगत समय पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं।

- **स्वास्थ्य सेवा के बुनियादी ढांचे पर दबाव को कम करना:** निष्क्रिय इच्छामृत्यु उपचार योग्य स्थितियों वाले रोगियों के लिए महत्वपूर्ण देखभाल बिस्तरों और उपकरणों का पुनः आवंटन करके स्वास्थ्य सेवा संसाधनों के अनुकूलन में मदद करती है। इस संसाधनों के कुशल उपयोग का एक लहर जैसा प्रभाव पड़ता है, जो भारत में स्वास्थ्य सेवा की समग्र गुणवत्ता और उपलब्धता को बढ़ाता है।
- **चिकित्सकों के लिए स्पष्टता प्रदान करना:** जीवन के अंत में देखभाल के निर्णयों के लिए एक संरचित ढांचा स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को कानूनी अस्पष्टता के बिना इन संवेदनशील निर्णयों को समझने में सहायता करता है। स्पष्ट प्रोटोकॉल चिकित्सकों के बीच अस्पष्टता को कम करते हैं और उन्हें कानूनी रूप से संरक्षित ढांचे के भीतर दयालु देखभाल प्रदान करने के लिए सशक्त बनाते हैं।

चुनौतियाँ और आलोचनाएँ:

- **दुरुपयोग का जोखिम और कानूनी चुनौतियाँ:** भारतीय चिकित्सा संघ (IMA) और अन्य संगठनों ने चिंता व्यक्त की है कि परिवार यदि जीवन-रक्षक प्रणाली का विरोध करते हैं, तो मुकदमेबाजी की संभावना बढ़ सकती है, जिससे अतिरिक्त कानूनी सुरक्षा की आवश्यकता का संकेत मिलता है।
- **सांस्कृतिक और धार्मिक संवेदनशीलताएँ:** भारत का विविध धार्मिक परिदृश्य निष्क्रिय इच्छामृत्यु के प्रति प्रतिरोध प्रस्तुत कर सकता है, क्योंकि कुछ समुदाय इसे नैतिक रूप से अस्वीकार्य मान सकते हैं।
- **सूचित सहमति और स्वास्थ्य साक्षरता:** बदलती साक्षरता दरों को देखते हुए, यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि रोगी और उनके परिवार निष्क्रिय इच्छामृत्यु को पूरी तरह से समझें, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में। इस दिशा में सार्वजनिक शिक्षा अभियान आवश्यक हैं।
- **परिवारों पर भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक प्रभाव:** जीवन के अंतिम चरण के निर्णय कष्टदायक हो सकते हैं, और भारत में परिवार की देखभाल पर सांस्कृतिक जोर इस भावनात्मक बोझ को बढ़ाता है। परामर्श और उपशामक देखभाल परिवारों को कठिन निर्णयों से निपटने में मदद कर सकती है।

इच्छामृत्यु और सहायता प्राप्त मृत्यु पर वैश्विक परिप्रेक्ष्य:

- **यूरोप:** नीदरलैंड, बेल्जियम और लक्जमबर्ग जैसे देशों में सक्रिय इच्छामृत्यु और चिकित्सक-सहायता प्राप्त आत्महत्या को सख्त शर्तों के तहत अनुमति दी गई है। मरीजों को असहनीय पीड़ा का अनुभव करने और कई चिकित्सा मूल्यांकन से गुजरने की आवश्यकता होती है।
- **स्विटजरलैंड:** स्विस कानून, डिग्निटास जैसे संगठनों के माध्यम से, गैर-निवासियों सहित चिकित्सक-सहायता प्राप्त आत्महत्या की अनुमति देता है। नैतिक बहस के बावजूद, इस मॉडल ने अंतरराष्ट्रीय ध्यान आकर्षित किया है।
- **कनाडा:** 2016 में, कनाडा ने चिकित्सा सहायता के साथ मृत्यु (MAID) की शुरुआत की, जिसमें अनिवार्य मूल्यांकन और सूचित सहमति सुनिश्चित करने के लिए प्रतीक्षा अवधि निर्धारित की गई।
- **संयुक्त राज्य अमेरिका:** ओरेगन और वाशिंगटन जैसे राज्यों में 'सम्मान के साथ मृत्यु' कानून लागू हैं, जो चिकित्सक-सहायता प्राप्त आत्महत्या की अनुमति देते हैं, जबकि सक्रिय इच्छामृत्यु पर प्रतिबंध है।

डीजीएचएस दिशा-निर्देश भारत में करुणामय और रोगी-केंद्रित जीवन-पर्यंत देखभाल की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हैं। हालाँकि, प्रभावी कार्यान्वयन के लिए निम्नलिखित की आवश्यकता होगी:

» **देखभाल का विस्तार:** उन्नत देखभाल सेवाएँ दर्द प्रबंधन और भावनात्मक समर्थन प्रदान करके निष्क्रिय इच्छामृत्यु के विकल्प की पेशकश कर सकती हैं, जिससे गंभीर रूप से बीमार रोगियों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार संभव है।

» **कानूनी सुरक्षा को स्पष्ट करना:** अतिरिक्त कानूनी ढांचे की स्थापना से स्वास्थ्य सेवा प्रदाताओं को यह आश्वासन मिल सकता है कि वे दिशानिर्देशों के अनुसार कार्य करते हुए सुरक्षित हैं। इससे उनके कानूनी जोखिम कम होंगे और अनुपालन को प्रोत्साहित किया जा सकेगा।

» **स्वास्थ्य साक्षरता और सार्वजनिक जागरूकता को बढ़ावा देना:** सार्वजनिक जागरूकता और शिक्षा अभियानों के माध्यम से निष्क्रिय इच्छामृत्यु और उपलब्ध विकल्पों की समझ में सुधार लाया जा सकता है, जिससे रोगियों और परिवारों को उनके मूल्यों के अनुरूप सूचित निर्णय लेने में सशक्त बनाया जा सके।

सुप्रीम कोर्ट ने नाबालिगों के अधिकारों की रक्षा के लिए बाल सगाई पर रोक लगाने की वकालत

संदर्भ:

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बाल सगाई के महत्वपूर्ण मुद्दे पर विचार करते हुए निर्णय दिया कि बाल सगाई, बाल विवाह निषेध अधिनियम (पीसीएमए) के अंतर्गत दंड से बचने का एक उपाय है। न्यायाधीश चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली तीन न्यायाधीशों की पीठ ने इस बात पर जोर दिया कि बाल सगाई से स्वतंत्र विकल्प, व्यक्तिगत स्वायत्तता और बचपन की अंतर्निहित गरिमा सहित मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता है।

बाल विवाह कानून को प्रासंगिक बनाने की आवश्यकता:

- सर्वोच्च न्यायालय ने 2006 में अधिनियमित बाल विवाह निषेध अधिनियम (PCMA) के मौजूदा ढांचे में बाल सगाई से संबंधित कानूनी अस्पष्टताओं को उजागर किया। यह कानून 18 वर्ष से कम आयु की महिलाओं और 21 वर्ष से कम आयु के पुरुषों को 'बालक' के रूप में वर्गीकृत करता है तथा बाल विवाह की प्रथा को एक सामाजिक कुप्रथा मानते हुए इसे अपराध घोषित करता है।
- बाल विवाह पर रोक लगाने के उद्देश्य से कानूनी प्रावधानों के बावजूद, न्यायालय ने इन प्रथाओं के निरंतर प्रचलन और प्रवर्तन तंत्र की कमी पर ध्यान आकृष्ट किया। मुख्य न्यायाधीश चंद्रचूड़ ने बताया कि सरकार ने व्यक्तिगत कानूनों (पर्सनल लॉ) पर बाल विवाह निषेध अधिनियम (PCMA) की सर्वोच्चता के संबंध में न्यायिक स्पष्टीकरण के लिए एक नोट प्रस्तुत किया था। हालांकि, इस मुद्दे पर उच्च न्यायालयों के विरोधाभासी निर्णयों के अभाव ने एक व्यापक कानूनी समाधान में बाधा उत्पन्न की। न्यायालय ने उन कानूनी खामियों को दूर करने के लिए विधायी स्पष्टता की आवश्यकता पर बल दिया, जो बाल विवाह जैसी प्रथाओं के निरंतर जारी रहने में सहायक हैं।

नीति सुधार के लिए न्यायिक सिफारिशें:

सर्वोच्च न्यायालय ने बाल विवाह और बाल सगाई के विरुद्ध सरकारी नीतियों को सुदृढ़ करने के लिए निम्नलिखित सिफारिशें प्रस्तुत की हैं:

- **आयु-उपयुक्त यौन शिक्षा का समावेश:** न्यायालय ने स्कूल पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील यौन शिक्षा को अनिवार्य करने का सुझाव दिया, ताकि बच्चों को उनके अधिकारों और स्वास्थ्य के प्रति जागरूक किया जा सके।
- **बाल विवाह मुक्त गांव अभियान:** 'खुले में शौच मुक्त गांव' अभियान की तर्ज पर, न्यायालय ने समुदाय आधारित अभियान चलाने का प्रस्ताव दिया, जिसमें स्थानीय नेताओं की सक्रिय भागीदारी से बाल विवाह की समाप्ति का प्रयास किया जाए।
- **ऑनलाइन रिपोर्टिंग पोर्टल की स्थापना:** न्यायालय ने बाल विवाह की घटनाओं की समय पर रिपोर्टिंग और हस्तक्षेप सुनिश्चित करने के लिए एक समर्पित ऑनलाइन प्लेटफॉर्म स्थापित करने की सिफारिश की।
- **मुआवजा योजना का निर्माण:** बाल विवाह से बाहर निकलने वाली लड़कियों के लिए न्यायालय ने वित्तीय सहायता योजनाएं विकसित करने का सुझाव दिया, ताकि उन्हें सामाजिक और आर्थिक रूप से सशक्त किया जा सके।
- **वार्षिक बजट आवंटन:** न्यायालय ने बाल विवाह रोकथाम और इससे प्रभावित व्यक्तियों की सहायता के लिए समर्पित वित्तीय प्रावधान सुनिश्चित करने पर जोर दिया, जिससे नाबालिगों के अधिकारों की प्रभावी सुरक्षा हो सके।

भारत में बाल विवाह:

- द लैंसेट ग्लोबल हेल्थ में प्रकाशित हालिया अध्ययन के अनुसार, भारत में प्रत्येक पाँच में से एक लड़की और छह में से एक लड़के का विवाह अभी भी कानूनी आयु से पहले हो रहा है। यद्यपि बाल विवाह की दर में धीमी गिरावट आई है, फिर भी 1.4 अरब की आबादी वाले देश में 23.3% की मौजूदा व्यापकता चिंताजनक बनी हुई है।
- भारत के आठ राज्यों में बाल विवाह की दर राष्ट्रीय औसत से अधिक है, जिनमें पश्चिम बंगाल, बिहार और त्रिपुरा प्रमुख हैं। इन राज्यों में 20-24 आयु वर्ग की 40% से अधिक महिलाओं का विवाह 18 वर्ष से पहले हो जाता है।
- इसके विपरीत, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हरियाणा जैसे राज्यों ने बाल विवाह को कम करने में सराहनीय प्रगति की है, जहां राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के हालिया आंकड़ों में उल्लेखनीय गिरावट दर्ज की गई है।

वैश्विक संदर्भ:

- यूनिसेफ की रिपोर्ट के अनुसार, विश्व स्तर पर प्रतिवर्ष लगभग 12 मिलियन लड़कियों का विवाह वयस्कता से पहले कर दिया जाता है।
- संयुक्त राष्ट्र सतत विकास लक्ष्य (एसडीजी) 5 का उद्देश्य 2030 तक बाल विवाह और महिला जननांग विकृति जैसी हानिकारक प्रथाओं को समाप्त करना है।
- दक्षिण एशिया में बाल विवाह की दर 50% से घटकर 30% से नीचे आ गई है, लेकिन प्रगति असमान और अपर्याप्त है।

कानूनी ढांचा:

भारत ने बच्चों के अधिकारों के उल्लंघन से बचाने के लिए कई कानून लागू किए हैं, जिनमें शामिल हैं:

- **बाल विवाह निषेध अधिनियम (2006):** इस अधिनियम के अनुसार 'बच्चा' वह है जो 21 वर्ष से कम आयु का पुरुष या 18 वर्ष से कम आयु की महिला है। मुख्य प्रावधानों में निम्नलिखित शामिल हैं:
  - बाल विवाह के लिए मजबूर किए गए लड़के और लड़कियों को वयस्क होने के दो वर्ष बाद तक अपने विवाह को रद्द करने का अधिकार प्राप्त है।
  - बाल विवाह से उत्पन्न संतान को वैध माना जाएगा।
  - यह अधिनियम सुनिश्चित करता है कि बाल हिरासत का निर्णय जिला न्यायालय द्वारा बच्चे के कल्याण को ध्यान में रखते हुए किया जाएगा।
- **अनिवार्य विवाह पंजीकरण अधिनियम (2006):** यह अधिनियम बाल विवाह को रोकने में मदद के लिए धर्म की परवाह किए बिना, सभी विवाहों का पंजीकरण 10 दिनों के भीतर अनिवार्य करता है।
- **कानूनी विवाह आयु की समीक्षा के लिए समिति (2020):** जया जेटली की अध्यक्षता में एक समिति का गठन 2020 में किया गया, जिसका उद्देश्य लड़कियों के लिए कानूनी विवाह की आयु 21 वर्ष करने के प्रभावों का अध्ययन करना था। इस समिति ने मातृ मृत्यु दर और महिला स्वास्थ्य से संबंधित मुद्दों पर भी ध्यान केंद्रित किया।
- **शिक्षा का अधिकार अधिनियम (2009):** शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम 6-14 वर्ष की आयु के बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करता है और शैक्षिक अवसरों को बढ़ावा देकर बाल विवाह को हतोत्साहित करने वाला वातावरण तैयार करता है।
- **यौन अपराधों से बच्चों का संरक्षण (POCSO) अधिनियम:** यह अधिनियम किसी नाबालिग के साथ किसी भी यौन गतिविधि को, चाहे सहमति हो या न हो, बलात्कार मानता है, और बच्चों के शोषण से उनकी सुरक्षा को सुदृढ़ करता है।
- **बाल विवाह निषेध (संशोधन) विधेयक, 2021:** इस प्रस्तावित संशोधन का उद्देश्य महिलाओं के लिए विवाह की कानूनी आयु को 18 से बढ़ाकर 21 वर्ष करना है।

विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाने का औचित्य:

विवाह के लिए न्यूनतम आयु बढ़ाना कई कारणों से महत्वपूर्ण है:

- **शिक्षा और रोजगार तक पहुंच:** कम उम्र में विवाह अक्सर महिलाओं को शिक्षा और आर्थिक अवसरों तक पहुंच से वंचित कर देता है। विवाह की आयु बढ़ाने से अधिक महिलाओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने और वित्तीय स्वतंत्रता हासिल करने का अवसर मिल सकता है।
- **स्वास्थ्य जटिलताएँ:** कम उम्र में विवाह और बाद में गर्भधारण से माताओं और बच्चों दोनों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कम उम्र की माताओं को विभिन्न स्वास्थ्य जटिलताओं का अधिक जोखिम होता है, जिनमें प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य चुनौतियाँ, कुपोषण, और यौन संचारित रोगों के प्रति बढ़ती संवेदनशीलता शामिल है।

सरकारी योजनाएँ और नीतियाँ:

- बाल विवाह से निपटने के लिए भारत सरकार ने कई पहल शुरू की हैं:
  - **सुकन्या समृद्धि योजना (एसएसवाई):** 2015 में शुरू की गई यह योजना माता-पिता को अपनी बेटियों की शिक्षा और विवाह के खर्च के लिए बचत करने के लिए प्रोत्साहित करती है, जिससे बालिकाओं के कल्याण को बढ़ावा मिलता है।
  - **बालिका समृद्धि योजना:** इस पहल का उद्देश्य आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों की लड़कियों को प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में उनका नामांकन और ठहराव सुनिश्चित करके सहायता प्रदान करना है, जिससे बेहतर महिला साक्षरता को बढाया जा सके।
  - **बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ:** इस योजना का मुख्य उद्देश्य शिक्षा के माध्यम से लड़कियों को सामाजिक और वित्तीय रूप से स्वतंत्र बनाना है। इसके साथ ही, लोगों को जागरूक करना और महिलाओं के लिए कल्याणकारी सेवाओं के वितरण में सुधार करना भी आवश्यक है।

सुप्रीम कोर्ट ने नागरिकता अधिनियम की धारा 6ए को वैध ठहराया

चर्चा में क्यों?

एक ऐतिहासिक फैसले में, सुप्रीम कोर्ट ने नागरिकता अधिनियम, 1955 की धारा 6ए की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा, जिसके तहत 24 मार्च, 1971 से पहले असम में प्रवेश करने वाले अप्रवासियों को नागरिकता प्रदान की गई थी। केंद्र में राजीव गांधी सरकार और ऑल असम स्टूडेंट्स यूनियन (AASU) के बीच असम समझौते पर हस्ताक्षर के बाद 1985 में धारा 6ए को कानून में जोड़ा गया था।

धारा 6ए की पृष्ठभूमि:

- 1986 में अधिनियमित, धारा 6ए को बांग्लादेश से प्रवास की विशिष्ट परिस्थितियों को संबोधित करने के लिए जोड़ा गया था, विशेष रूप से 1971 में बांग्लादेश मुक्ति युद्ध के आसपास की उथल-पुथल भरी अवधि के दौरान।
- यह 24 मार्च, 1971 से पहले भारत में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों को नागरिकता प्रदान करता है, जिससे निर्वासन के डर के बिना भारत में रहने के उनके अधिकार को मान्यता मिलती है।

निर्णय:

- न्यायधीशों ने बहुमत की राय में कहा गया कि संसद को विभिन्न परिस्थितियों में नागरिकता प्रदान करने का अधिकार है, बशर्ते कि भेदभाव उचित हो।
- चूंकि उस समय असम में प्रवासी स्थिति शेष भारत की तुलना

में अद्वितीय थी, इसलिए इसे विशेष रूप से संबोधित करने के लिए एक कानून बनाना उचित था और ऐसा करने से संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता के अधिकार का उल्लंघन नहीं होगा।

- याचिकाकर्ताओं ने यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं दिया कि प्रवासियों की आमद ने असम में पहले से रह रहे नागरिकों के सांस्कृतिक अधिकारों को प्रभावित किया है। अनुच्छेद 29(1) नागरिकों को अपनी भाषा और संस्कृति को 'संरक्षित' करने का अधिकार देता है। सीजेआई चंद्रचूड़ ने कहा कि "किसी राज्य में विभिन्न जातीय समूहों की मौजूदगी अनुच्छेद 29(1) द्वारा गारंटीकृत अधिकार का उल्लंघन करने के लिए पर्याप्त नहीं है"।
- 1 जनवरी, 1966 और 24 मार्च, 1971 की कट-ऑफ तिथियां संवैधानिक थीं क्योंकि धारा 6ए और नागरिकता नियम, 2009 नागरिकता प्रदान करने के लिए 'सुपाठ्य' शर्तें और एक उचित प्रक्रिया प्रदान करते हैं।

असहमतिः

- न्यायमूर्ति पारदीवाला ने अपनी असहमतिपूर्ण राय में कहा कि यह प्रावधान असंवैधानिक है और इसमें "समय संबंधी अनुचितता" है, क्योंकि इसमें विदेशियों का पता लगाने और यह निर्धारित करने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है कि वे नागरिक हैं या नहीं।
- उन्होंने कहा कि इससे सरकार को अप्रवासियों की पहचान करने और उन्हें मतदाता सूची से हटाने के बोझ से मुक्ति मिल जाती है, जो असम के लोगों के सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकारों की रक्षा करते हुए नागरिकता प्रदान करने के उद्देश्य के विरुद्ध है।

फैसले के निहितार्थः

- **प्रवासियों के लिए स्थिरताः** यह फैसला उन हजारों व्यक्तियों और परिवारों को कानूनी आश्वासन प्रदान करता है जो पीढ़ियों से भारत में रह रहे हैं। यह उनके अधिकारों की रक्षा करता है और राज्यविहीनता के डर को दूर करता है।
- **राजनीतिक नतीजेः** यह फैसला भारत में नागरिकता और प्रवासन को लेकर चल रही बहसों को प्रभावित कर सकता है, खासकर राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) और नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) के संदर्भ में।
- **क्षेत्रीय गतिशीलताः** पूर्वोत्तर राज्यों में, जहाँ प्रवासन एक विवादास्पद मुद्दा रहा है, यह फैसला या तो तनाव बढ़ा सकता है या ऐतिहासिक प्रवासन की अधिक सूक्ष्म समझ को बढ़ावा दे सकता है।
- **भविष्य के कानूनी ढाँचेः** यह फैसला भविष्य की प्रवासन नीतियों को कैसे तैयार किया जा सकता है, इसके लिए एक मिसाल कायम करता है, जो संभावित रूप से विधायी परिवर्तनों को प्रभावित करता है जो एक विविध राष्ट्र में नागरिकता की जटिलताओं को संबोधित करते हैं।

सुप्रीम कोर्ट ने बेनामी कानून के प्रावधानों को असंवैधानिक घोषित करने वाला फैसला वापस लिया

चर्चा में क्यों?

सुप्रीम कोर्ट की एक विशेष पीठ ने 23 अगस्त, 2022 के अपने फैसले को वापस ले लिया, जिसमें बेनामी संपत्ति कानून में किए गए प्रावधानों और संशोधनों को 'असंवैधानिक और स्पष्ट रूप से मनमाना' घोषित किया गया था।

- 2016 में पेश किए गए संशोधनों को पूर्वव्यापी रूप से लागू किया गया था और किसी व्यक्ति को तीन साल के लिए जेल भेजा जा सकता था। इसने केंद्र को बेनामी लेनदेन के अधीन 'किसी भी संपत्ति' को जब्त करने का अधिकार दिया था।
- इस मुद्दे पर पुनर्विचार करने का निर्णय केंद्र सरकार और आयकर उपायुक्त (बेनामी निषेध) द्वारा दायर समीक्षा याचिकाओं पर आधारित था।

सुप्रीम कोर्ट का 2022 का फैसलाः

- **फैसले का अवलोकनः** 2022 के एक ऐतिहासिक फैसले में, सुप्रीम कोर्ट ने बेनामी लेनदेन अधिनियम में कुछ संशोधनों को असंवैधानिक घोषित करते हुए उन्हें रद्द कर दिया। इस फैसले में सरकार की संपत्तियों को जब्त करने और जुर्माना लगाने की व्यापक शक्तियों पर सवाल उठाया गया, जिसमें तर्क दिया गया कि इससे व्यक्तिगत अधिकारों और उचित प्रक्रिया का उल्लंघन होता है।

निर्णय के कानूनी आधारः

- न्यायालय ने प्राधिकारियों की मनमानी कार्रवाई के विरुद्ध सुरक्षा उपायों की पर्याप्तता के संबंध में चिंताओं पर प्रकाश डाला।
- इसने सबूत के बोझ और बेनामी लेनदेन में शामिल होने के आरोपी व्यक्तियों के अधिकारों से संबंधित मुद्दों को उठाया।

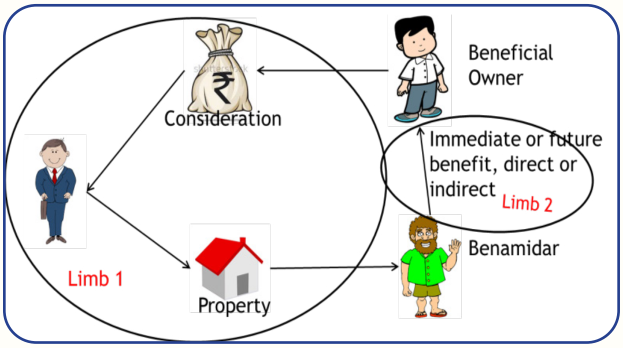

2022 के फैसले को वापस लेनाः

- **हालिया घटनाक्रमः** एक आश्चर्यजनक मोड़ में, सुप्रीम कोर्ट ने अपने 2022 के फैसले को वापस ले लिया है, जो बेनामी लेनदेन

अधिनियम के प्रवर्तन के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ उठाता है।

रिकॉल के निहितार्थ:

- **प्रावधानों की बहाली:** रिकॉल प्रभावी रूप से उन संशोधनों को बहाल करता है जिन्हें असंवैधानिक माना गया था, जिससे अधिकारियों को बेनामी मामलों को और अधिक आक्रामक तरीके से आगे बढ़ाने का अधिकार मिलता है।
- **कानूनी ढांचा:** यह बेनामी लेनदेन की जांच और मुकदमा चलाने के सरकार के प्रयासों के लिए कानूनी आधार को मजबूत करता है, इस प्रकार भ्रष्टाचार और वित्तीय कदाचार से निपटने में इसकी पहुंच का विस्तार करता है।

प्रवर्तन और जांच पर प्रभाव:

- **प्रवर्तन शक्तियों में वृद्धि:** रिकॉल के साथ, सरकार संदिग्ध बेनामी लेनदेन की जांच अधिक प्रभावी ढंग से कर सकती है। इसमें शामिल हो सकते हैं:
  - » **उच्च-मूल्य वाली संपत्तियों को लक्षित करना:** अधिकारी प्रॉक्सी के पीछे छिपे व्यक्तियों के स्वामित्व वाली संपत्तियों की पहचान करने के प्रयासों को तेज कर सकते हैं।
  - » **बढ़ी हुई जांच:** वित्तीय लेनदेन, विशेष रूप से रियल एस्टेट और बड़ी संपत्ति खरीद पर अधिक जांच लागू की जाएगी।
  - » **दुरुपयोग की संभावना:** हालांकि रिकॉल का उद्देश्य प्रवर्तन को मजबूत करना है, लेकिन अधिनियम के संभावित दुरुपयोग के बारे में चिंताएं हैं:
  - » **मनमाना जब्ती:** आलोचकों को डर है कि अधिकारी जरूरत से ज्यादा बल प्रयोग कर सकते हैं, जिससे बिना पर्याप्त सबूत के अनुचित जब्ती हो सकती है।
  - » **संपत्ति के लेन-देन पर नकारात्मक प्रभाव:** अनिश्चितता वैध लेन-देन को रोक सकती है क्योंकि लोग अनुचित जांच से डरते हैं।

बाल विवाह निषेध अधिनियम (पीसीएमए) को समान रूप से लागू करने से इनकार

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने बाल विवाह निषेध अधिनियम (पीसीएमए) को सभी धर्मों पर समान रूप से लागू करने से इनकार किया है। इस संदर्भ में, न्यायालय ने संसद की भूमिका को रेखांकित किया है, जोकि लंबित विधेयक के माध्यम से इस कानून को व्यक्तिगत कानूनों पर लागू करने का विचार कर रही है। न्यायालय ने नाबालिगों को बाल विवाह के खतरों से बचाने के लिए व्यापक और प्रभावी उपायों की तत्काल आवश्यकता पर भी जोर दिया है।

निर्णय का संदर्भ:

- सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय एक जनहित याचिका (पीआईएल) पर आया है, जिसमें 18 वर्ष पहले बाल विवाह निषेध अधिनियम (पीसीएमए) के लागू होने के बावजूद भारत में बाल विवाह की जारी व्यापकता की ओर ध्यान आकर्षित किया गया था।

निर्णय के मुख्य बिंदु:

- **बाल सगाई:** न्यायालय ने संसद को सिफारिश की है कि वह बाल सगाई को गैरकानूनी घोषित करने की संभावनाओं की जांच करे। यह प्रथा अक्सर एक ऐसा उपाय बन जाती है, जिसके द्वारा व्यक्तियों को बाल विवाह निषेध अधिनियम (पीसीएमए) द्वारा निर्धारित दंड से बचने का अवसर मिलता है।
- **नाबालिगों की सुरक्षा:** निर्णय में नाबालिगों को बाल सगाई से बचाने के महत्व पर जोर दिया गया। अदालत ने नाबलिकों की पसंद की स्वतंत्रता, स्वायत्तता और अधिकारों को बनाए रखने की आवश्यकता पर जोर दिया।
- **अंतर्राष्ट्रीय कानून:** न्यायाधीशों ने अंतर्राष्ट्रीय कानूनी ढांचों का संदर्भ दिया, जैसे कि महिलाओं के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन के लिए कन्वेंशन (सीईडीएडब्ल्यू), जो स्पष्ट रूप से नाबालिगों की सगाई पर प्रतिबंध लगाता है। यह घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय मानकों के बीच संरेखण की आवश्यकता को रेखांकित करता है।
- **दंडात्मक दृष्टिकोण:** न्यायालय ने चेतावनी दी कि पीसीएमए के उल्लंघनों को संबोधित करते समय दंडात्मक दृष्टिकोण अंतिम उपाय होना चाहिए। इसके बजाय, इसने जागरूकता और शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करने वाले निवारक उपायों की वकालत की।

भारत में बाल विवाह के बारे में:

- **वर्तमान आँकड़े:** 15 दिसंबर, 2023 को द लैंसेट ग्लोबल हेल्थ में प्रकाशित एक अध्ययन से पता चलता है कि भारत में पाँच में से एक लड़की और छह में से एक लड़के की शादी कानूनी उम्र से कम उम्र में होती है। बाल विवाह का वर्तमान प्रचलन 23.3% है, जो 1.4 बिलियन से अधिक लोगों के देश में चिंताजनक है।

राज्यों में असमानता:

- आठ राज्यों में बाल विवाह की दर राष्ट्रीय औसत से अधिक है।
- **शीर्ष राज्य:** पश्चिम बंगाल, बिहार और त्रिपुरा सबसे आगे हैं, जहाँ 20-24 वर्ष की आयु की 40% से अधिक महिलाओं की शादी 18 वर्ष से पहले हो जाती है।

कानूनी ढांचे के बारे में:

भारत में बच्चों को अधिकारों के उल्लंघन से बचाने के लिए विभिन्न कानून बनाए हैं, जिनमें शामिल हैं:

- **बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम (2006):**
  - 'बच्चे' की परिभाषा के अनुसार, 21 वर्ष से कम आयु का कोई भी पुरुष या 18 वर्ष से कम आयु की कोई भी महिला शामिल है।
  - वयस्क होने के दो वर्ष बाद तक बाल विवाह को रद्द करने की अनुमति देता है।
  - यह सुनिश्चित करता है कि बाल विवाह से उत्पन्न संतान को वैध माना जाए।
  - बच्चे के कल्याण को प्राथमिकता देते हुए हिरासत संबंधी निर्णय जिला न्यायालयों द्वारा लिए जाते हैं।
- **अनिवार्य विवाह पंजीकरण अधिनियम (2006):**
  - बाल विवाह को रोकने के लिए, धर्म की परवाह किए बिना, सभी विवाहों का 10 दिनों के भीतर पंजीकरण अनिवार्य किया गया है।
- **कानूनी विवाह आयु की समीक्षा समिति (2020):**
  - जया जेटली के नेतृत्व में इस समिति की स्थापना लड़कियों की कानूनी विवाह आयु 21 वर्ष करने के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए की गई थी, जिसमें मातृ मृत्यु दर और महिला स्वास्थ्य जैसे मुद्दों पर विचार किया गया था।
- **बाल विवाह प्रतिषेध (संशोधन) विधेयक, 2021:**
  - महिलाओं के लिए विवाह की कानूनी आयु 18 से बढ़ाकर 21 वर्ष करने का प्रस्ताव।

सर्वोच्च न्यायालय ने धर्मनिरपेक्षता को भारत के संविधान का अभिन्न अंग बताया

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि धर्मनिरपेक्षता संविधान का एक मौलिक पहलू है और यह देश के मूल ढांचे का अभिन्न हिस्सा है। यह निर्णय उन याचिकाओं पर सुनवाई करते हुए सुनाया गया, जो संविधान की प्रस्तावना में 'समाजवादी' और 'धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को शामिल करने को चुनौती देती थीं। ये शब्द 1976 में 42वें संविधान संशोधन के दौरान जोड़े गए थे।

निर्णय का मुख्य बिंदु:

- इस निर्णय का मुख्य बिंदु 'समाजवादी' और 'धर्मनिरपेक्ष' शब्दों पर है। इन शब्दों ने प्रस्तावना में भारत के वर्णन को 'संप्रभु, लोकतांत्रिक गणराज्य' से बदलकर 'संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य' बना दिया है।
- न्यायमूर्ति संजीव खन्ना और संजय कुमार ने यह स्पष्ट किया कि धर्मनिरपेक्षता केवल एक संवैधानिक प्रावधान नहीं है, बल्कि यह भारतीय संविधान के संपूर्ण ढांचे की एक प्रमुख विशेषता है। न्यायाधीशों ने धर्मनिरपेक्षता को संविधान में उल्लिखित समानता और बंधुत्व के अधिकारों से भी जोड़ा।
- न्यायमूर्ति खन्ना का यह कहना महत्वपूर्ण है कि समाजवाद को केवल पश्चिमी दृष्टिकोण से नहीं देखा जाना चाहिए। इस ढांचे में समाजवाद केवल संसाधनों पर राज्य के नियंत्रण का मुद्दा नहीं है। इसमें सामाजिक न्याय, अवसरों तक समान पहुँच और हाशिए पर पड़े समुदायों के सशक्तिकरण जैसे व्यापक आदर्श भी शामिल हैं।

धर्मनिरपेक्ष से सम्बंधित संवैधानिक प्रावधान:

- **प्रस्तावना:** भारत को एक 'संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य' के रूप में वर्णित किया गया है।
- **अनुच्छेद 14:** कानून के समक्ष समानता।
- **अनुच्छेद 15:** धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध।
- **अनुच्छेद 16:** सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसर की समानता।
- **अनुच्छेद 25:** अंत:करण की स्वतंत्रता और धर्म की अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता।
- **अनुच्छेद 26:** धार्मिक मामलों के प्रबंधन की स्वतंत्रता।
- **अनुच्छेद 27:** किसी विशेष धर्म के प्रचार के लिए कराधान से स्वतंत्रता।
- **अनुच्छेद 28:** धार्मिक शिक्षा या पूजा में भाग लेने से स्वतंत्रता।
- **अनुच्छेद 51ए (मौलिक कर्तव्य):** धार्मिक, भाषाई या क्षेत्रीय भिन्नताओं की परवाह किए बिना सभी लोगों के बीच सद्भाव और समान भाईचारे की भावना को बढ़ावा देना।

समाजवादी से सम्बंधित संवैधानिक प्रावधान:

- **प्रस्तावना:** भारत को एक 'संप्रभु, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य' के रूप में वर्णित किया गया है।
- **अनुच्छेद 38:** राज्य लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए एक सामाजिक व्यवस्था सुनिश्चित करेगा।
- **अनुच्छेद 39:** राज्य द्वारा अपनाई जाने वाली नीति के कुछ सिद्धांत, जिनमें समान कार्य के लिए समान वेतन और श्रमिकों की सुरक्षा शामिल है।
- **अनुच्छेद 41:** काम, शिक्षा और सार्वजनिक सहायता का अधिकार।
- **अनुच्छेद 43:** कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देना और श्रमिकों के हितों का संरक्षण।
- **अनुच्छेद 43ए:** उद्योगों के प्रबंधन में श्रमिकों की भागीदारी।

मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2024

चर्चा में क्यों?

केंद्रीय विधि मंत्रालय में विधिक मामलों के विभाग ने मध्यस्थता और

सुलह अधिनियम, 1996 में संशोधन करने के लिए मसौदा मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2024 पेश किया है। इस पहल का उद्देश्य भारत में मध्यस्थता कार्यवाही की दक्षता को बढ़ाना है। मसौदा मध्यस्थता और सुलह (संशोधन) विधेयक, 2024 मौजूदा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 में महत्वपूर्ण संशोधनों का प्रस्ताव करता है।

प्राथमिक उद्देश्य:

- संस्थागत मध्यस्थता को बढ़ावा देना।
- न्यायालय के हस्तक्षेप को कम करना।

मध्यस्थता के बारे में:

- वैकल्पिक विवाद समाधान का एक रूप जहां पक्ष तटस्थ मध्यस्थों को विवाद प्रस्तुत करने के लिए सहमत होते हैं।
- मध्यस्थ साक्ष्य की समीक्षा करते हैं, तर्क सुनते हैं और बाध्यकारी निर्णय लेते हैं।
- आम तौर पर वाणिज्यिक विवादों में इस्तेमाल होने वाले न्यायालयी मुकदमों की तुलना में तेज और ज्यादा लचीला।

सुलह के बारे में:

- एक स्वैच्छिक प्रक्रिया जिसमें एक तटस्थ मध्यस्थ पक्षों को परस्पर स्वीकार्य समझौते तक पहुँचने में मदद करता है।
- मध्यस्थता के विपरीत, मध्यस्थ निर्णय नहीं थोपता बल्कि संचार की सुविधा प्रदान करता है।
- अक्सर श्रम विवादों और ऐसी स्थितियों में उपयोग किया जाता है जहाँ रिश्ते मायने रखते हैं।

मसौदा विधेयक की मुख्य विशेषताएँ

- **आपातकालीन मध्यस्थता:** पूर्ण न्यायाधिकरण के गठन से पहले अंतरिम उपाय प्रदान करने के लिए एक आपातकालीन मध्यस्थ की नियुक्ति की अवधारणा पेश करता है। अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप, तत्काल स्थितियों में त्वरित राहत प्रदान करने का लक्ष्य रखता है।
- **संस्थागत मध्यस्थता को बढ़ावा देना:** दक्षता और विश्वसनीयता बढ़ाने के लिए तदर्थ व्यवस्थाओं की तुलना में स्थापित मध्यस्थता संस्थानों के उपयोग पर जोर देता है।
- **भारतीय मध्यस्थता परिषद (ACI):** ACI को आदर्श प्रक्रियात्मक नियम बनाने और मध्यस्थ संस्थानों को मान्यता देने का अधिकार देता है। प्रथाओं को मानकीकृत करने और समग्र गुणवत्ता में सुधार करने का लक्ष्य।
- **वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग:** इसमें वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग के माध्यम से मध्यस्थता कार्यवाही आयोजित करने के प्रावधान शामिल हैं, जिससे प्रक्रिया अधिक सुलभ हो जाती है।
- **अपीलीय मध्यस्थ न्यायाधिकरण:** अपील प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने और अदालती बोझ को कम करने के लिए एक अपीलीय मध्यस्थ न्यायाधिकरण की स्थापना का प्रस्ताव है।
- **सुलह प्रावधानों की चूक:** मध्यस्थता अधिनियम, 2023 में शामिल किए गए सुलह प्रावधानों को छोड़ने का प्रस्ताव है। संशोधित अधिनियम का नाम बदलकर मध्यस्थता अधिनियम, 1996 कर दिया जाएगा।
- **विशेषज्ञ समिति की सिफारिशें:** इसमें टी.के. विश्वनाथन के नेतृत्व वाली एक विशेषज्ञ समिति की सिफारिशें शामिल हैं, जो मध्यस्थता को अधिक प्रभावी बनाने और न्यायिक हस्तक्षेप पर कम निर्भर बनाने पर ध्यान केंद्रित करती हैं।

मुख्य मुद्दे और चिंताएँ:

- **कानूनी मान्यता:** आपातकालीन मध्यस्थता को सभी अधिकार क्षेत्रों में मान्यता नहीं दी जा सकती है, जिससे प्रवर्तनीयता प्रभावित होती है।
- **संस्थागत समर्थन:** स्पष्ट नियमों और योग्य मध्यस्थों सहित मध्यस्थता संस्थानों से मजबूत समर्थन की आवश्यकता होती है।
- **समय की कमी:** त्वरित प्रकृति त्वरित समाधान के दबाव के कारण संपूर्णता से समझौता कर सकती है।
- **लागत:** तीव्र कार्रवाई और गहन संसाधन उपयोग की आवश्यकता से उच्च लागत उत्पन्न हो सकती है।
- **जागरूकता और स्वीकृति:** आपातकालीन मध्यस्थता के बारे में पक्ष संदेहपूर्ण या अपरिचित हो सकते हैं; विश्वास-निर्माण आवश्यक है।
- **अंतरिम उपाय:** प्रभावशीलता अंतरिम उपायों को प्रदान करने और लागू करने पर निर्भर करती है, जो कि अधिकार क्षेत्र में चुनौतीपूर्ण हो सकता है।

मध्यस्थता परिदृश्य के लिए निहितार्थ:

- संशोधनों से भारत के मध्यस्थता परिदृश्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ने की उम्मीद है।
- आपातकालीन मध्यस्थता शुरू करने और संस्थागत ढांचे को बढ़ावा देने के माध्यम से, विधेयक का उद्देश्य विवाद समाधान में दक्षता और विश्वसनीयता को बढ़ाना है।
- अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं के साथ तालमेल बिठाने से विदेशी निवेशकों के बीच विश्वास बढ़ सकता है और अदालती बैकलॉग कम हो सकता है, जिससे व्यापार करने में आसानी होगी।

PMLA अनिश्चितकालीन हिरासत का साधन नहीं बन सकता-सुप्रीम कोर्ट

चर्चा में क्यों?

भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने धन शोधन निवारण अधिनियम (PMLA) पर एक ऐतिहासिक फैसला सुनाया है, जिसमें कहा गया है कि इसके प्रावधानों का दुरुपयोग आरोपी व्यक्तियों की हिरासत को बढ़ाने के लिए नहीं किया जाना चाहिए। यह निर्णय धन शोधन विरोधी उपायों और व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों के बीच संतुलन पर महत्वपूर्ण हस्तक्षेप है।

फैसले का संदर्भ:

- यह फैसला जून 2023 में कैश-फॉर-जॉब घोटाले के सिलसिले में गिरफ्तार किए गए तमिलनाडु के पूर्व मंत्री वी. सेंथिल बालाजी

की जमानत याचिका पर आया।

- सर्वोच्च न्यायालय ने बालाजी के खिलाफ प्रथम दृष्टा में मामले के अस्तित्व को स्वीकार किया, लेकिन उनकी लंबी पूर्व-परीक्षण हिरासत के बारे में गंभीर चिंता व्यक्त की।

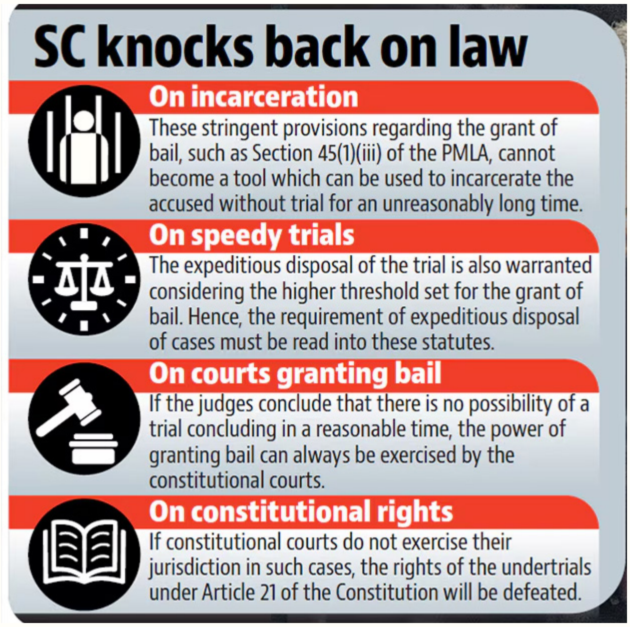

फैसले की मुख्य बातें:

- **लंबे समय तक हिरासत में रखना दुरुपयोग:**
  - » अदालत ने प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) द्वारा PMLA के प्रावधानों के दुरुपयोग पर चिंता व्यक्त की।
  - » अदालत ने स्पष्ट किया कि PMLA की धारा 45(1)(ii) राज्य को किसी आरोपी को अनिश्चितकाल तक हिरासत में रखने का अधिकार नहीं देती है।
- **संवैधानिक अधिकार के रूप में जमानत:**
  - » अदालत ने सिद्धांत की पुष्टि की कि 'जमानत नियम है, और जेल अपवाद है।'
  - » न्यायाधीशों ने कहा कि मुकदमे में अत्यधिक देरी के कारण जमानत आवेदनों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है, जो अनुच्छेद 21 के तहत व्यापक संवैधानिक अधिकारों को दर्शाता है।
- **न्यायिक जिम्मेदारी:**
  - » अदालत ने कहा कि यह संवैधानिक अदालतों की जिम्मेदारी है कि वे सुनिश्चित करें कि PMLA के कठोर जमानत प्रावधान व्यक्तिगत स्वतंत्रता का उल्लंघन न करें।
- **जमानत देने की शर्तें:**
  - » बालाजी को जमानत देते समय, अदालत ने सबूतों से छेड़छाड़ या गवाहों के हस्तक्षेप को रोकने के लिए सख्त शर्तें लगाईं।
- **न्याय पर देरी का प्रभाव:**
  - » निर्णय ने न्याय प्रणाली पर अत्यधिक देरी के नकारात्मक प्रभावों को उजागर किया और शीघ्र सुनवाई की आवश्यकता पर जोर दिया।

निर्णय के निहितार्थ:

- यह निर्णय PMLA जैसे कड़े कानूनों के आवेदन में न्यायिक प्रणाली के दृष्टिकोण में महत्वपूर्ण बदलाव का संकेत देता है।
- यह वित्तीय अपराधों के खिलाफ बनाए गए कानूनों के प्रभावी कार्यान्वयन और व्यक्तिगत अधिकारों की सुरक्षा के बीच संतुलन पर महत्वपूर्ण प्रश्न उठाता है।
- न्यायिक निगरानी पर अदालत का जोर व्यक्तिगत स्वतंत्रता की सुरक्षा की आवश्यकता को दर्शाता है।

सुप्रीम कोर्ट का ऐतिहासिक निर्णय: बुलडोजर जस्टिस की आलोचना और नागरिक अधिकारों की रक्षा

13 नवंबर 2024 को सुप्रीम कोर्ट की न्यायमूर्ति बी.आर. गवई और के.वी. विश्वनाथन की बेंच ने एक महत्वपूर्ण निर्णय सुनाया, जिसमें अवैध ध्वस्तिकरण (Demolition) के मामले को लेकर "बुलडोजर जस्टिस" की आलोचना की गई। इस निर्णय ने राज्य सरकारों द्वारा अपराधों में संलिप्त व्यक्तियों की संपत्ति को दंड स्वरूप ध्वस्त करने की प्रथा पर गंभीर सवाल उठाए। इसे एक ऐतिहासिक निर्णय माना जा रहा है, जो नागरिकों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण है।

बुलडोजर जस्टिस: एक विवादित प्रथा

- भारत में "बुलडोजर जस्टिस" एक विवादित और चर्चा का विषय बन चुकी प्रथा है, जिसमें अधिकारियों द्वारा अपराधों में संलिप्त व्यक्तियों की संपत्ति, जैसे अवैध निर्माण या अन्य अपराधों से जुड़ी संपत्तियों को बुलडोजर और भारी मशीनरी से ध्वस्त किया जाता है। यह कार्य अक्सर बिना कानूनी प्रक्रिया का पालन किए और किसी न्यायिक आदेश के बिना किया जाता है।

मामले की पृष्ठभूमि: तिबरेवाल आकाश मामला

- यह प्रथा 2019 में एक मामले के बाद चर्चा में आई, जब पत्रकार मनोज तिबरेवाल आकाश की उत्तर प्रदेश स्थित उनकी पुश्तैनी संपत्ति को ध्वस्त कर दिया गया।
- अधिकारियों ने इसे राष्ट्रीय राजमार्ग के विस्तार के लिए किया था, लेकिन अदालत ने पाया कि इस प्रक्रिया में कई उल्लंघन हुए थे। अधिकारियों ने बिना लिखित नोटिस जारी किए और निर्धारित सीमा से अधिक भूमि को ध्वस्त किया।
- यह कार्रवाई पत्रकार के पिता द्वारा सड़क परियोजना में अनियमितताओं की जांच की मांग करने के बाद की गई थी, जिससे इसे एक प्रतिशोधात्मक कदम के रूप में देखा गया।

एनएचआरसी (राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग) की रिपोर्ट:

- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC) ने पाया कि इस ध्वस्तीकरण में अत्यधिक कार्रवाई की गई थी। आयोग के अनुसार, जहां केवल 3.7 मीटर भूमि का अतिक्रमण था, वहीं अधिकारियों ने 5 से 8 मीटर भूमि तक को ध्वस्त कर दिया।

बुलडोजर जस्टिस के पक्ष में तर्क:

बुलडोजर जस्टिस को कुछ लोग अपराधों को रोकने और समाज में कानून व्यवस्था बनाए रखने के एक उपाय के रूप में देखते हैं। यह तर्क देते हैं:

- **अपराधों को रोकना:** समर्थक मानते हैं कि अवैध निर्माण या अपराधों से जुड़ी संपत्तियों को ध्वस्त करने से समाज में अपराधी गतिविधियों पर नियंत्रण पाया जा सकता है। यह अन्य लोगों के लिए एक कड़ा संदेश हो सकता है कि कानून का उल्लंघन करने पर उनका क्या हश्र हो सकता है।
- **त्वरित कार्रवाई:** कुछ लोग इसे एक तेज और प्रभावी तरीका मानते हैं, जिससे अवैध निर्माणों को तुरंत हटाया जा सकता है। ऐसे मामलों में लंबे समय तक न्यायिक प्रक्रिया से देरी हो सकती है, जबकि तत्काल कार्रवाई जरूरी होती है।
- **जनभावना और न्याय का अहसास:** यह तर्क भी है कि बुलडोजर जस्टिस न्याय की तुरंत और सशक्त व्यवस्था के रूप में लोगों में विश्वास जगाता है, खासकर उन मामलों में जहां न्यायिक प्रक्रिया में समय लगता है और अपराधी दंड से बच जाते हैं।
- **राज्य के सख्त कदम:** कुछ लोग इसे राज्य सरकार की ओर से अपराधियों और अवैध गतिविधियों को नियंत्रित करने का एक सख्त और त्वरित कदम मानते हैं। उन्हें लगता है कि इससे भ्रष्टाचार और बुरी आदतों का तेजी से समाधान हो सकता है। इससे अपराधियों के मन में डर पैदा होगा।
- **अवैध निर्माणों का त्वरित हटाना:** समर्थक यह भी मानते हैं कि शहरों और महानगरों में अवैध निर्माणों और अतिक्रमणों के खिलाफ कार्रवाई बेहद जरूरी है। इस प्रकार की कार्रवाई से भूमि का सही उपयोग होता है और शहरों की अव्यवस्था को रोका जा सकता है। अवैध इमारतों के ध्वस्तीकरण से जनता की सुरक्षा भी सुनिश्चित होगी।

सुप्रीम कोर्ट का निर्णय: मुख्य बिंदु

- अदालत ने यह स्पष्ट किया कि अवैध ध्वस्तीकरण राज्य द्वारा की गई गलत कार्रवाई हो सकती है, जो नागरिकों के संपत्ति के अधिकार का उल्लंघन करती है। सभी ध्वस्तीकरणों से पहले कानूनी प्रक्रिया का पालन करना अनिवार्य है। सुप्रीम कोर्ट ने अपने निर्णय में अवैध ध्वस्तीकरण के खिलाफ कई अहम बातें उठाई और यह सुनिश्चित करने के लिए कोर्ट ने छह प्रमुख कदमों को स्पष्ट किया जो किसी भी संपत्ति के ध्वस्तीकरण से पहले उठाए जाने चाहिए:
  - भूमि अभिलेखों और मानचित्रों की जांच
  - अतिक्रमणों का सही सर्वेक्षण
  - अतिक्रमणकर्ताओं को लिखित नोटिस देना
  - आपत्तियों की सुनवाई और आदेश जारी करना

» स्वेच्छिक हटाने के लिए उचित समय देना
» यदि आवश्यक हो तो अतिरिक्त भूमि का कानूनी अधिग्रहण

सुप्रीम कोर्ट के विचार: 'बुलडोजर जस्टिस' की आलोचना

सुप्रीम कोर्ट ने इस निर्णय में कई अहम कानूनी सिद्धांतों की समीक्षा की और बुलडोजर जस्टिस के खिलाफ गंभीर चिंताएँ व्यक्त कीं। यह निम्नवत हैं:

- **कानून का शासन:** कोर्ट ने यह बताया कि राज्य को भी कानून का पालन करना अनिवार्य है। बिना कानूनी प्रक्रिया के किसी की संपत्ति को ध्वस्त करना लोकतंत्र और न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन है। अगर ऐसा हुआ तो इससे संवैधानिक संस्थाओं में लोगों का विश्वास कम हो जायेगा।
- **अपराधी की निर्दोषता की अवधारणा:** कोर्ट ने यह भी कहा कि किसी व्यक्ति को दोषी ठहराए बिना उसकी संपत्ति का ध्वस्तीकरण करना निर्दोषता की अवधारणा का उल्लंघन है।
- **आश्रय का अधिकार:** अदालत ने यह भी स्पष्ट किया कि आवास का अधिकार मानव गरिमा का हिस्सा है और किसी को बिना उचित कानूनी प्रक्रिया के इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता। यह अनुच्छेद 21 के तहत मूल अधिकारों का हिस्सा है।
- **शक्तियों का दुरुपयोग:** कोर्ट ने यह भी कहा कि कुछ मामलों में बुलडोजर जस्टिस एक प्रकार से सत्ता का दुरुपयोग हो सकता है, जिसमें किसी विशेष व्यक्ति या समुदाय के खिलाफ भेदभावपूर्ण कार्रवाई की जाती है। इससे समुदाय विशेष के मन में अलगाववाद की भावना बढ़ सकती है।
- **समाज में भय का निर्माण:** कोर्ट ने यह भी कहा कि ऐसी त्वरित कार्रवाइयों से समाज में भय और असुरक्षा का माहौल बन सकता है, जिससे न्याय का अहसास कमजोर होता है।
- **न्याय की देरी से बचने के उपाय:** हालांकि कोर्ट ने न्याय की प्रक्रिया में देरी की समस्या को स्वीकार किया, लेकिन यह भी कहा कि इससे निपटने के लिए बुलडोजर जस्टिस के बजाय न्यायिक प्रक्रिया को बेहतर और तेज किया जाए।
- **साक्ष्य और प्रमाण की अनुपस्थिति:** कोर्ट ने यह भी माना कि अवैध ध्वस्तीकरण के मामलों में यह जरूरी है कि अधिकारियों के पास उचित साक्ष्य और प्रमाण हो, और बिना इस सब के किसी भी कार्रवाई को निषिद्ध किया जाना चाहिए।

निजी संपत्ति अधिग्रहण पर सुप्रीम कोर्ट का ऐतिहासिक फैसला

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक निर्णय में कहा कि राज्य को सार्वजनिक उपयोग हेतु निजी संपत्ति का अधिग्रहण करने का अनियंत्रित अधिकार नहीं है। मुख्य न्यायाधीश डीवाई चंद्रचूड़ की अध्यक्षता वाली नौ न्यायाधीशों की संविधान पीठ द्वारा दिया गया यह निर्णय संपत्ति के अधिकारों और भारत की आर्थिक नीतियों की व्याख्या में एक महत्वपूर्ण बदलाव को दर्शाता है।

- ऐतिहासिक दृष्टि से, राज्य के पास 'सामान्य भलाई' के नाम पर निजी संपत्ति अधिग्रहित करने का व्यापक अधिकार था, लेकिन यह निर्णय उन पारंपरिक सिद्धांतों से भिन्न है, जो भारत के समाजवादी आर्थिक दृष्टिकोण को दर्शाते थे।
- यह निर्णय अब एक अधिक उदार, बाजार-आधारित अर्थव्यवस्था की ओर संकेत करता है। यह निर्णय संविधान के भाग III (मौलिक अधिकार) और भाग IV (राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत) के बीच परस्पर संबंधों पर आधारित है, जो व्यक्तिगत अधिकारों और राज्य की शक्ति के बीच संतुलन को रेखांकित करता है।

अनुच्छेद 300A- संपत्ति का अधिकार:

- भारत के संविधान के अनुच्छेद 31, जो पहले संपत्ति के मौलिक अधिकार की गारंटी प्रदान करता था, को 44वें संशोधन (1978) द्वारा निरस्त कर दिया गया। इसके स्थान पर, अनुच्छेद 300A लागू किया गया, जोकि यह सुनिश्चित करता है कि संपत्ति एक कानूनी अधिकार है, न कि मौलिक अधिकार।
- न्यायालय के निर्णय में इस पर बल दिया गया कि राज्य केवल वैध प्रक्रियाओं के माध्यम से ही संपत्ति का अधिग्रहण कर सकता है, साथ ही उचित मुआवजा और उचित प्रक्रिया सुनिश्चित करनी होगी। यह प्रावधान संपत्ति की मनमानी जब्ती को रोकता है।

अनुच्छेद 19(1)(f)–संपत्ति का अधिकार (1978 से पहले)

- 1978 से पूर्व, अनुच्छेद 19(1)(f) संपत्ति अर्जित करने का मौलिक अधिकार प्रदान करता था। हालांकि, 44वें संशोधन द्वारा इसे निरस्त कर दिया गया था, फिर भी न्यायालय ने इसके ऐतिहासिक महत्व को स्वीकार करते हुए यह सुनिश्चित किया कि राज्य को संवैधानिक सीमाओं के भीतर संपत्ति के अधिकारों का सम्मान करना चाहिए।

'सार्वजनिक उद्देश्य' और प्रख्यात डोमेन का सिद्धांत:

- राज्य को सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए प्रख्यात डोमेन सिद्धांत के तहत संपत्ति का अधिग्रहण करने की शक्ति प्राप्त है, लेकिन न्यायालय ने 'सार्वजनिक उद्देश्य' की परिभाषा को सीमित कर दिया है।
- इसने उन व्यापक व्याख्याओं को अस्वीकार कर दिया है जो मनमाने ढंग से राज्य अधिग्रहण की अनुमति देती हैं, और इस पर जोर दिया है कि ऐसे अधिग्रहणों का उद्देश्य प्रत्यक्ष सार्वजनिक कल्याण, आर्थिक विकास, या राष्ट्रीय हित की सेवा करना चाहिए।

राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (भाग IV):

- राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांत (डीपीएसपी) सरकारी नीति के निर्माण हेतु मार्गदर्शन प्रदान करते हैं, परंतु ये कानूनी रूप से बाध्यकारी नहीं होते। न्यायालय ने अनुच्छेद 39(B) का उल्लेख करते हुए कहा कि यह राज्य को आम भलाई के उद्देश्य से संसाधनों के वितरण का निर्देश देता है।
- न्यायालय ने यह भी रेखांकित किया कि विकसित आर्थिक परिप्रेक्ष्य में निजी संपत्ति के अधिकारों और सार्वजनिक कल्याण के बीच संतुलन बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है।
- 'सार्वजनिक हित' के नाम पर संपत्ति के अधिग्रहण की व्यापक व्याख्या को अस्वीकार करते हुए, न्यायालय ने उचित मुआवजे, उचित प्रक्रिया और स्पष्ट सार्वजनिक उद्देश्य के महत्व पर जोर दिया है।
- यह निर्णय भारत की बाजार अर्थव्यवस्था में व्यक्तिगत संपत्ति अधिकारों की सुरक्षा की दिशा में एक महत्वपूर्ण पड़ाव है।

पीएम-विद्यालक्ष्मी योजना

चर्चा में क्यों?

हाल ही में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने पीएम-विद्यालक्ष्मी योजना को मंजूरी दी है, जिसका उद्देश्य गुणवत्तापूर्ण उच्च शिक्षा संस्थानों (क्यूएचईआई) में अध्ययन करने वाले छात्रों को बिना संपार्श्विक (Collateral Free) और गारंटर के शिक्षा ऋण प्रदान करना है।

योजना की मुख्य विशेषताएं:

- **वित्तीय परिव्यय:** इस योजना के लिए 2024-25 से 2030-31 की अवधि के लिए 3,600 करोड़ रुपये का आवंटन किया गया है।
- **लाभार्थी:** इस योजना के अंतर्गत प्रदान की जाने वाली ब्याज सहायता से लगभग 7 लाख नए छात्रों को लाभ मिलने की संभावना है।
- **ऋण गारंटी:** केंद्र सरकार 7.5 लाख रुपये तक के शिक्षा ऋण के लिए 75% क्रेडिट गारंटी प्रदान करेगी।
- **ब्याज अनुदान:** जिन विद्यार्थियों की वार्षिक पारिवारिक आय 8 लाख रुपये तक है और जो अन्य सरकारी छात्रवृत्तियों या ब्याज अनुदान योजनाओं के लिए पात्र नहीं हैं, उन्हें 3% ब्याज अनुदान मिलेगा। यह ब्याज अनुदान स्थगन अवधि के दौरान 10 लाख रुपये तक के ऋण पर लागू होगा।
- **वार्षिक सहायता:** प्रत्येक वर्ष 1 लाख छात्रों को ब्याज अनुदान सहायता दी जाएगी।
- **वरीयता मानदंड:** सरकारी संस्थानों के छात्रों को प्राथमिकता दी जाएगी। तकनीकी और व्यावसायिक पाठ्यक्रम पढ़ने वाले छात्रों को प्राथमिकता दी जाएगी।

संस्थाओं की पात्रता:

- इस योजना में समग्र और डोमेन-विशिष्ट दोनों श्रेणियों में राष्ट्रीय संस्थागत रैंकिंग फ्रेमवर्क (एनआईआरएफ) में शीर्ष 100 में स्थान पाने वाले संस्थान शामिल होंगे।
- यह 101-200 रैंक वाले राज्य संचालित संस्थानों और सभी केंद्र सरकार संचालित संस्थानों पर भी लागू होगा।
- कुल 860 उच्च शिक्षा संस्थान इसके लिए पात्र होंगे, जिनकी सूची एनआईआरएफ रैंकिंग के आधार पर प्रतिवर्ष अद्यतन की जाएगी।
- **सभी पाठ्यक्रमों के लिए पात्रता:** पिछली योजनाओं के विपरीत, यह योजना केवल तकनीकी या व्यावसायिक ही नहीं, बल्कि सभी प्रकार के पाठ्यक्रमों में नामांकित छात्रों के लिए उपलब्ध होगी।

वर्तमान योजनाओं की स्थिति में:

- यह योजना केंद्रीय क्षेत्र ब्याज सब्सिडी योजना (सीएसआईएस) के अतिरिक्त है, जो तकनीकी या व्यावसायिक पाठ्यक्रम करने वाले उन छात्रों को लाभान्वित करती है जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय 4.5 लाख रुपये तक है।
- इस योजना के तहत, ऐसे छात्रों को 10 लाख रुपये तक के ऋण पर पूर्ण ब्याज सब्सिडी प्रदान की जाती है।
-

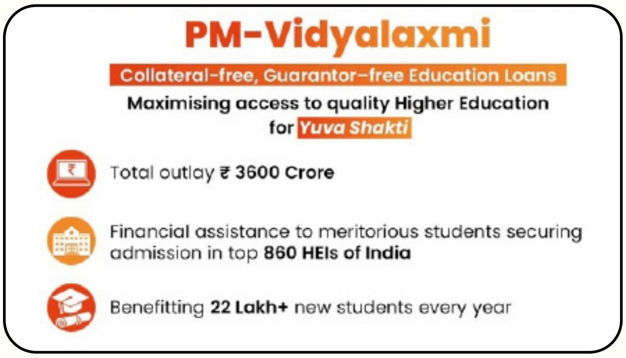

विद्यालक्ष्मी योजना के सकारात्मक पहलू:

- **बढ़ी हुई पहुंच:** गारंटर-मुक्त ऋण आर्थिक रूप से कमजोर पृष्ठभूमि के छात्रों के लिए उच्च शिक्षा को अधिक सुलभ बनाते हैं, जिससे शिक्षा वित्तपोषण में आने वाली बाधाएं दूर होती हैं।
- **योग्यता आधारित शिक्षा को प्रोत्साहन:** गुणवत्तापूर्ण उच्च

शिक्षा संस्थानों (क्यूएचईआई) में प्रवेश लेने वाले छात्रों को ऋण प्रदान करके, यह योजना योग्यता आधारित शिक्षा को बढ़ावा देती है, तथा प्रतिभाशाली छात्रों को उच्च अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

- **वित्तीय बोझ में कमी:** संपार्श्विक और गारंटी आवश्यकताओं की अनुपस्थिति से छात्रों और उनके परिवारों पर वित्तीय तनाव कम हो जाता है, जिससे शिक्षा का खर्च उठाना आसान हो जाता है।
- **नामांकन को बढ़ावा:** इस योजना से वित्तीय सहायता प्रदान करके उच्च शिक्षा संस्थानों में नामांकन दर में वृद्धि होने की उम्मीद है, विशेष रूप से आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि के लोगों के लिए।

सुप्रीम कोर्ट ने एएमयू के अल्पसंख्यक दर्जे पर पुराने फैसले को पलटा

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने 1967 के अपने पूर्ववर्ती फैसले को पलटते हुए, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (एएमयू) को अल्पसंख्यक संस्थान का दर्जा देने से इनकार करने वाले फैसले को निरस्त कर दिया। 4-3 के बहुमत से पारित इस निर्णय ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 30 की व्याख्या में एक महत्वपूर्ण बदलाव किया है, जोकि अल्पसंख्यक समुदायों को शैक्षणिक संस्थान स्थापित करने और उनका संचालन करने का अधिकार प्रदान करता है।

पृष्ठभूमि:

- **एएमयू की स्थापना:**
  - **1877:** अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय की स्थापना सर सैयद अहमद खान द्वारा मोहम्मडन एंग्लो-ओरिएंटल कॉलेज के रूप में की गई थी, जिसका उद्देश्य इस्लामी मूल्यों को संरक्षित करते हुए भारत में मुस्लिम समुदाय के बीच आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा देना था।
  - **1920:** ब्रिटिश सरकार द्वारा अधिनियमित अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अधिनियम के तहत इस कॉलेज को अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (एएमयू) में अपग्रेड किया गया।

1967 का सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय:

- 1967 को सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्णय सुनाया कि एएमयू अल्पसंख्यक संस्थान नहीं है। कोर्ट ने कहा कि चूंकि विश्वविद्यालय की स्थापना एक कानून (एएमयू अधिनियम) द्वारा की गई थी, न कि केवल मुस्लिम समुदाय द्वारा, इसलिए यह संविधान के अनुच्छेद 30 के तहत सुरक्षा के लिए योग्य नहीं है।
- इस निर्णय ने एएमयू को वह स्वायत्तता से वंचित कर दिया, जो अल्पसंख्यक संस्थानों को सामान्यत: प्राप्त होती है, जिसमें कुछ आरक्षण आवश्यकताओं से छूट भी शामिल है।
- **1981:** इस मुद्दे को सुलझाने के प्रयास में, एएमयू अधिनियम में एक संशोधन किया गया, जिसमें कहा गया कि विश्वविद्यालय की स्थापना "भारत के मुसलमानों" द्वारा की गई थी। हालांकि, इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने 2005 में इस संशोधन को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि यह एएमयू को अल्पसंख्यक का दर्जा नहीं देता।

सुप्रीम कोर्ट का तात्कालिक निर्णय:

- **1967 के निर्णय को पलटना:** सर्वोच्च न्यायालय ने अपने 1967 के फैसले को पलटते हुए माना कि एएमयू अपने ऐतिहासिक संदर्भ, स्थापना के उद्देश्य और भारत में मुस्लिम शिक्षा में महत्वपूर्ण योगदान के आधार पर अल्पसंख्यक संस्थान का दर्जा प्राप्त कर सकता है।
- **अल्पसंख्यक दर्जे के लिए मानदंड:** न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि किसी शैक्षणिक संस्थान को अनुच्छेद 30 के तहत अल्पसंख्यक दर्जे का दावा करने के लिए एक नया परीक्षण अपनाया जाएगा। इस परीक्षण में संस्थान की कानूनी स्थापना प्रक्रिया, इसके संस्थापक का उद्देश्य और इसके ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक महत्व को ध्यान में रखा जाएगा।
- **ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंधों के आधार पर दर्जा:** अब वे शैक्षणिक संस्थान, जिनका मजबूत ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संबंध किसी विशेष समुदाय से है (जैसे एएमयू का मुस्लिम समुदाय से संबंध), अल्पसंख्यक दर्जा प्राप्त करने के योग्य माने जाएंगे, चाहे उन्होंने किसी सरकारी अधिनियम या बड़े समूह द्वारा स्थापना की हो।

फैसले के निहितार्थ:

- **एएमयू की स्थिति का अंतिम निर्धारण:** सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय लिया है कि अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (एएमयू) अल्पसंख्यक दर्जे का दावा कर सकता है, हालांकि इसकी वास्तविक स्थिति का निर्धारण आगामी कार्यवाही में एक अन्य पीठ द्वारा किया जाएगा।
- **कानूनी आधार और अधिकारों की विशिष्टताएं:** यह निर्णय एएमयू को अल्पसंख्यक संस्थान का दर्जा प्राप्त करने के लिए एक कानूनी आधार प्रदान करता है, लेकिन इसके अधिकारों की सीमाएं और विशिष्टताएं भविष्य में होने वाली कानूनी कार्यवाही के माध्यम से स्पष्ट की जाएंगी।

विकलांग व्यक्तियों के लिए सुलभता एक मौलिक अधिकार: सर्वोच्च न्यायालय

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक निर्णय में विकलांग व्यक्तियों (PWDs) के लिए सुलभता को एक मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी है। इस निर्णय में समावेशी स्थानों, सेवाओं और उत्पादों की आवश्यकता पर बल दिया गया है, जोकि विकलांग व्यक्तियों को समाज में पूर्ण और समान भागीदारी के लिए सक्षम बनाते हैं।

फैसले के प्रमुख कानूनी और संवैधानिक पहलू:

- **मौलिक अधिकार तक पहुंच:**
  - सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि सुगम्यता भारतीय संविधान के तहत मौलिक अधिकारों का एक अभिन्न हिस्सा है।
  - सुलभता का अधिकार सम्मानपूर्वक जीवन के अधिकार (अनुच्छेद 21), समानता का अधिकार (अनुच्छेद 14) और विकलांग व्यक्तियों के लिए गैर-भेदभाव के अधिकार (अनुच्छेद 15) की पूर्ति के लिए आवश्यक है।
- **विकलांगता का सामाजिक मॉडल:**
  - न्यायालय ने विकलांगता के सामाजिक मॉडल को अपनाया, जिसमें यह माना गया कि विकलांगता किसी व्यक्ति की अंतर्निहित स्थिति नहीं बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय बाधाओं का परिणाम है।
  - न्यायालय ने इन बाधाओं को समाप्त करने हेतु प्रणालीगत परिवर्तनों की आवश्यकता पर बल दिया और व्यक्तियों को 'ठीक करने' के बजाय समाज को अधिक समावेशी बनाने पर ध्यान केंद्रित करने का आह्वान किया।
- **संवैधानिक अधिदेश के रूप में सार्वभौमिक डिजाइन:**
  - मुख्य न्यायाधीश ने निर्देश दिया कि सार्वजनिक और निजी स्थानों, सेवाओं और उत्पादों को सार्वभौमिक पहुंच को ध्यान में रखकर डिजाइन किया जाना चाहिए, ताकि सभी लोग, चाहे उनकी क्षमता, आयु या स्थिति कुछ भी हो, उनका उपयोग कर सकें।
  - यह निर्देश राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों (संविधान के भाग IV) के अनुरूप है, जोकि विकलांग व्यक्तियों सहित हाशिए पर पड़े समूहों के लिए समावेशी विकास और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने पर बल देता है।
- **सुगम्यता के लिए अनिवार्य मानक :**
  - न्यायालय ने सरकार को तीन महीने के भीतर अनिवार्य सुगम्यता मानक जारी करने का आदेश दिया। न्यायालय ने माना कि विकलांग व्यक्तियों के अधिकार (RPWD) नियमों के तहत मौजूदा दिशानिर्देश बाध्यकारी नहीं थे, जिसके कारण अनुपालन में कमी देखी गई।
  - अनिवार्य मानकों की आवश्यकता सार्वजनिक और निजी दोनों क्षेत्रों में समान रूप से देशव्यापी पहुंच मानदंडों को सुनिश्चित करने के लिए है।

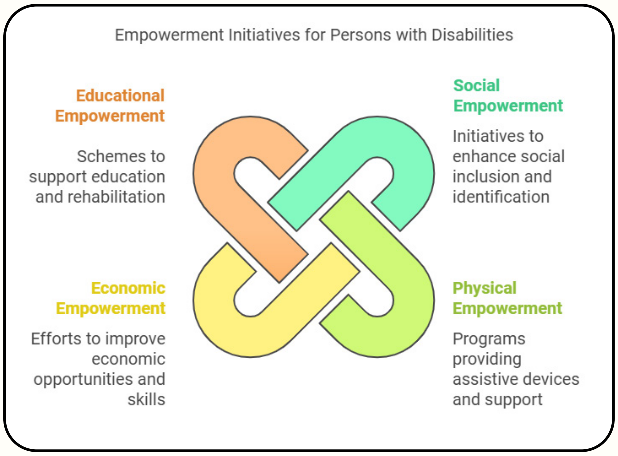

दिव्यांगजनों के भावनात्मक और संबंधपरक अधिकार:

- न्यायालय ने विकलांग व्यक्तियों के भावनात्मक और संबंधपरक अधिकारों को रेखांकित किया, जिसमें प्रेम, अंतरंगता, गोपनीयता और आत्म-अभिव्यक्ति के अधिकार शामिल हैं।
- कोर्ट ने इन पहलुओं की अनदेखी की आलोचना की और इस बात पर बल दिया कि दिव्यांग व्यक्तियों को अपनी भावनात्मक और संबंधपरक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए निजी स्थानों तक पहुंच होनी चाहिए, विशेष रूप से वे जो परिवारों के साथ रहते हैं।

फैसले के व्यावहारिक निहितार्थ:

सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय का भारत में विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा। कुछ प्रमुख निहितार्थ इस प्रकार हैं:

समावेशी बुनियादी ढांचे का विकास:

- न्यायालय ने दिल्ली और मुंबई जैसे शहरों में सार्वजनिक परिवहन और नई सुविधाओं में सुगम्यता के समावेशन का उदाहरण दिया।
- इस निर्णय से पुराने सार्वजनिक भवनों और स्थानों को आधुनिक सुगम्यता मानकों के अनुरूप बनाने के लिए राष्ट्रीय स्तर पर प्रयास तेज हो सकते हैं।
- तमिलनाडु जैसे कुछ राज्यों में सुलभ परिवहन में कमी के उदाहरण ने राज्य सरकारों को सुलभ परिवहन नेटवर्क का विस्तार करने के लिए प्रेरित किया है, जिससे दिव्यांगों के लिए सुरक्षित और विश्वसनीय आवागमन सुनिश्चित किया जा सके।
- न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि सुगमता को डिजाइन के प्रारंभिक चरण में ही एकीकृत किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत सार्वजनिक भवनों, डिजिटल प्लेटफॉर्म और सेवा प्रदाताओं पर भी लागू होता है, जिससे योजनाकारों और वास्तुकारों को इसे प्राथमिकता देने के लिए प्रेरित किया जा सके।

केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में भारत की पहली पूर्ण महिला बटालियन

चर्चा में क्यों?

हाल ही में लैंगिक समानता को बढ़ावा देने और महिलाओं को सशक्त बनाने के उद्देश्य से, भारत सरकार ने केंद्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल (सीआईएसएफ) में पहली बार एक पूर्णतः महिला बटालियन के गठन को मंजूरी दी है।

अखिल महिला रिजर्व बटालियन के बारे में:

- **गठन और नेतृत्व:**
  - » इस बटालियन में 1,025 महिला कार्मिक शामिल होंगी, जिनका चयन सीआईएसएफ के मौजूदा कार्यबल (कुल संख्या लगभग 1.8 लाख) में से किया जाएगा।
  - » बटालियन का नेतृत्व कमांडेंट रैंक के वरिष्ठ अधिकारी द्वारा किया जाएगा ताकि अन्य सीआईएसएफ इकाइयों के समान अनुशासन और नेतृत्व संरचना सुनिश्चित हो सके।
  - » यह बटालियन सीआईएसएफ की रिजर्व बटालियन संरचना का हिस्सा होगी, जिसका उद्देश्य उच्च सुरक्षा कार्यों और चुनाव जैसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय आयोजनों में सहायता प्रदान करना है।
- **प्रशिक्षण और तैयारी:**
  - » बटालियन का प्रशिक्षण कार्यक्रम गहन और विशिष्ट होगा, जिससे कार्मिकों को वीआईपी सुरक्षा, हवाई अड्डे की सुरक्षा और आतंकवाद-रोधी अभियानों सहित उच्च जोखिम वाले सुरक्षा कर्तव्यों के लिए तैयार किया जाएगा।
  - » महिला कर्मियों को उत्कृष्ट कमांडो के रूप में प्रशिक्षित किया जाएगा ताकि वे अपने पुरुष समकक्षों के समान दक्षता से सुरक्षा चुनौतियों का सामना कर सकें।
- **नियम और जिम्मेदारियाँ:** बटालियन का मुख्य कार्य उच्च-स्तरीय सुरक्षा अभियानों पर केंद्रित होगा, जिनमें शामिल होंगे:
  - » वीआईपी सुरक्षा और उच्च जोखिम वाले सुरक्षा वातावरण।
  - » हवाई अड्डों, मेट्रो स्टेशनों और परमाणु संयंत्रों व एयरोस्पेस सुविधाओं जैसे संवेदनशील प्रतिष्ठानों की सुरक्षा।

यह कदम महत्वपूर्ण क्यों है?

- **सुरक्षा बलों में महिलाओं को सशक्त बनाना:**
  - » पूर्ण महिला बटालियन के गठन से सीआईएसएफ में लैंगिक असंतुलन को दूर करने में मदद मिलेगी, जहां वर्तमान में कुल कार्मिकों में महिलाओं की संख्या केवल 7% है।
  - » यह पहल अधिक महिलाओं को सीआईएसएफ में शामिल होने और राष्ट्रीय सुरक्षा से जुड़ी भूमिकाएं निभाने के लिए प्रेरित करेगी।
- **लैंगिक समावेशिता को प्रोत्साहित करना:**
  - » महिला बटालियन का गठन सुरक्षा बलों में लैंगिक समावेशिता को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।
  - » यह पारंपरिक लैंगिक बाधाओं को तोड़ते हुए महिलाओं की भावी पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायक उदाहरण प्रस्तुत करता है।
- **राष्ट्रीय सुरक्षा की बदलती गतिशीलता को प्रतिबिंबित करना:**
  - » पूर्ण महिला बटालियन का गठन राष्ट्रीय सुरक्षा में महिलाओं की बदलती भूमिका को दर्शाता है, जहां महिलाएं तेजी से अधिक चुनौतीपूर्ण और दृश्यमान भूमिकाएं निभा रही हैं।
  - » यह सुरक्षा अभियानों में महिलाओं की बढ़ती क्षमताओं और नेतृत्व कौशल को पहचानने और स्वीकार करने का संकेत है।

सीआईएसएफ के बारे में:

- **सीआईएसएफ का विकास:**
  - » सीआईएसएफ की स्थापना वर्ष 1969 में हवाई अड्डों, परमाणु ऊर्जा संयंत्रों और एयरोस्पेस सुविधाओं जैसी महत्वपूर्ण अवसंरचना की सुरक्षा के लिए की गई थी।
  - » समय के साथ, बल ने राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप अपने आकार और कार्यक्षमता में वृद्धि की है।
- **रिजर्व बटालियनों की भूमिका:**
  - » वर्तमान में सीआईएसएफ 12 रिजर्व बटालियनों का संचालन करता है, जिनमें पुरुष और महिला दोनों कर्मी शामिल हैं। इन बटालियनों को चुनाव सुरक्षा, सरकारी इमारतों की सुरक्षा और बड़े सार्वजनिक आयोजनों में तैनात किया जाता है।
  - » महिला बटालियन एक विशेष इकाई होगी, जो उच्च सुरक्षा अभियानों, वीआईपी सुरक्षा और संवेदनशील राष्ट्रीय बुनियादी ढांचे की सुरक्षा पर केंद्रित होगी।

ऑपरेशन द्रोणागिरी

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT) दिल्ली में ऑपरेशन द्रोणागिरी की शुरुआत के साथ भारत ने राष्ट्रीय भू-स्थानिक नीति 2022 (NGP 2022) के अंतर्गत भू-स्थानिक प्रौद्योगिकियों के माध्यम से सार्वजनिक सेवाओं, नवाचार और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाया है। भू-स्थानिक डेटा पृथ्वी की सतह पर एक विशिष्ट स्थान से जुड़ी समय-आधारित जानकारी प्रदान करता है।

ऑपरेशन द्रोणागिरी की मुख्य विशेषताएं:

- **द्रोणागिरी का शुभारंभ**
  - » **दिनांक:** 13 नवंबर, 2024

» **स्थानः** IIT दिल्ली का इनोवेशन और टेक्नोलॉजी ट्रांसफर फाउंडेशन (FITT)
» **लक्ष्यः** कृषि, आजीविका, रसद और परिवहन में भू-स्थानिक प्रौद्योगिकियों की परिवर्तनकारी क्षमता का प्रदर्शन करना और व्यावसायिक परिचालन को सुव्यवस्थित करना।

- **भू-स्थानिक डेटा का एकीकरण**
  » ऑपरेशन द्रोणागिरी का उद्देश्य भू-स्थानिक डेटा को सार्वजनिक सेवाओं में एकीकृत करना, नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाना और व्यापार को सरल बनाना है।
  » फोकस क्षेत्रः कृषि, आजीविका, तथा रसद एवं परिवहन।
- **पायलट चरण कार्यान्वयन**
  » यह पहल पांच राज्यों में शुरू की जाएगी- उत्तर प्रदेश, हरियाणा, असम, आंध्र प्रदेश और महाराष्ट्र।
  » इन राज्यों को उनकी विविध भौगोलिक और सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के कारण चुना गया है, जिससे वे पायलट के लिए आदर्श परीक्षण स्थल बनते हैं।
- **साझेदारियां और सहयोग**
  » इस परियोजना में भू-स्थानिक डेटा के वास्तविक-विश्व अनुप्रयोगों का परीक्षण करने के लिए सरकारी विभागों, उद्योगों, निगमों और स्टार्टअप्स के साथ सहयोग शामिल होगा।
  » भू-स्थानिक डेटा एकीकरण के व्यावहारिक लाभों और सार्वजनिक सेवाओं पर इसके प्रभाव को प्रदर्शित किया जाएगा।

एकीकृत भूस्थानिक डेटा साझाकरण इंटरफेसः

- ऑपरेशन द्रोणागिरी का एक प्रमुख उद्देश्य एकीकृत भू-स्थानिक डेटा साझाकरण इंटरफेस (GDI) को प्रारंभ करना है, जो भू-स्थानिक डेटा के निर्बाध आदान-प्रदान, पहुंच और विश्लेषण को सुगम बनाने के लिए एक विशेष रूप से डिजाइन किया गया प्लेटफॉर्म है।
- **जीडीआई का उद्देश्यः**
  - जीडीआई का उद्देश्य भू-स्थानिक डेटा से कार्रवाई योग्य अंतर्दृष्टि प्राप्त करना, जिससे सार्वजनिक प्रशासन, व्यावसायिक रणनीतियों और अनुसंधान के लिए बेहतर निर्णय लेने में मदद मिलेगी।
  - विभिन्न क्षेत्रों के हितधारकों के बीच अधिक सहयोग को बढ़ावा मिलेगा।
- **जीडीआई की मुख्य विशेषताएं:**
  » **डेटा एक्सचेंजः** GDI उन्नत डेटा एक्सचेंज प्रोटोकॉल का उपयोग करके भू-स्थानिक डेटा का सुरक्षित और कुशल विनिमय सुनिश्चित करता है।
  » **गोपनीयता और सुरक्षाः** यह प्लेटफॉर्म गोपनीयता-संरक्षण सुविधाओं को एकीकृत करता है, सहयोग को सक्षम करते हुए संवेदनशील डेटा की सुरक्षा करता है।
  » **प्रभावः** GDI आपदा प्रबंधन को बढ़ाएगा, शहरी बुनियादी ढांचे में सुधार करेगा और विभिन्न एजेंसियों के बीच बेहतर समन्वय के साथ पर्यावरणीय परिवर्तनों की निगरानी करेगा।

राष्ट्रीय भू-स्थानिक नीति 2022 क्या है?

- राष्ट्रीय भू-स्थानिक नीति 2022 (NGP 2022) का उद्देश्य बुनियादी ढांचे का विकास, नवाचार को बढ़ावा देना और डेटा साझाकरण के लिए एक पारिस्थितिकी तंत्र बनाकर भारत को भू-स्थानिक प्रौद्योगिकी में ग्लोबल लीडर बनाना है।
- **नीति का दृष्टिकोणः**
  » भू-स्थानिक क्षेत्र में ग्लोबल लीडर के रूप में स्थापित करना, नवाचार को बढ़ावा देना और एक समृद्ध भू-स्थानिक पारिस्थितिकी तंत्र का निर्माण करना।
  » डिजिटलीकरण, सेवा वितरण में सुधार और भू-स्थानिक क्षेत्र के उदारीकरण को बढ़ावा देने पर ध्यान केंद्रित किया जाएगा।
- **संस्थागत ढांचाः**
  » भू-स्थानिक डेटा संवर्धन और विकास समिति (GDPDC) भू-स्थानिक क्षेत्र के विकास के लिए रणनीति तैयार करने और NGP 2022 के कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने में केंद्रीय भूमिका निभाएगी।

महत्वपूर्ण लक्ष्यः

- 2025 तक एक नीतिगत ढांचा तैयार करना जो भू-स्थानिक क्षेत्र के उदारीकरण का समर्थन करता हो।
- 2030 तक शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों के लिए उच्च-रिजॉल्यूशन स्थलाकृतिक सर्वेक्षण और मानचित्रण प्राप्त करना।
- 2035 तक शहरों का एक राष्ट्रीय डिजिटल ट्विन विकसित करना, जिससे गतिशील निर्णय लेने में सक्षमता हो।

सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तावना में 'समाजवादी' और 'धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को बरकरार रखा

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'समाजवादी' और 'धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को बरकरार रखने का निर्णय दिया। यह फैसला 1976 के 42वें संविधान संशोधन को चुनौती देने वाली याचिकाओं को खारिज करता है। इस संशोधन के तहत आपातकाल के दौरान, प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी की सरकार ने इन शब्दों को प्रस्तावना में शामिल किया था। न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि ये शब्द संविधान की मूल संरचना का हिस्सा हैं और भारतीय लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों को प्रतिबिंबित करते हैं।

महत्वपूर्ण शब्दावलीः

- **धर्मनिरपेक्षता:**
  - संविधान में प्रारंभ में 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द शामिल नहीं था। यह ऐसे राज्य को संदर्भित करता है जो न तो किसी धर्म का समर्थन करता है और न ही किसी धर्म के विरुद्ध भेदभाव करता है।
  - **संवैधानिक आधार:**
    - अनुच्छेद 14, 15 और 16 नागरिकों के लिए कानून के समक्ष समानता की गारंटी प्रदान करते हैं।
    - ये प्रावधान धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर किसी भी प्रकार के भेदभाव को निषिद्ध करते हैं।
- **समाजवाद:**
  - भारतीय संदर्भ में 'समाजवादी' शब्द किसी विशेष आर्थिक ढांचे का संकेत नहीं करता, बल्कि यह राज्य की सामाजिक न्याय और कल्याण के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाता है।
  - समाजवाद का उद्देश्य आर्थिक नीतियों को प्रतिबंधित करना नहीं है, बल्कि यह समानता को बढ़ावा देने और समाज के वंचित वर्गों के उत्थान को सुनिश्चित करना है।

संवैधानिक संशोधनों पर निर्णय:

- **अनुच्छेद 368:** न्यायालय ने माना कि प्रस्तावना सहित संविधान को संशोधित करने की संसद की शक्ति निर्विवाद है। इसमें समय के साथ आवश्यकतानुसार इसके प्रावधानों को संशोधित करने की क्षमता भी शामिल है।
- **गतिशील संविधान:** 1976 में 'समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को शामिल करना राष्ट्र की सामाजिक-राजनीतिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संविधान के विकास की क्षमता का प्रतिबिंब था।
- **पूर्वव्यापी संशोधन:** न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि 26 नवंबर, 1949 की कट-ऑफ तिथि के कारण इन शब्दों को पूर्वव्यापी रूप से शामिल नहीं किया जा सकता। अपनाने की तिथि संविधान में संशोधन करने की संसद की शक्ति को सीमित नहीं करती।

शासन और नीति पर प्रभाव:

- **समाजवाद और आर्थिक नीति:** फैसले में इस बात पर जोर दिया गया कि भारत में समाजवाद निजी उद्यम या बाजार-उन्मुख नीतियों को बाधित नहीं करता। यह आर्थिक न्याय और समानता सुनिश्चित करता है, जिससे सभी नागरिकों को लाभ मिलता है।
- **धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक स्वतंत्रता:** धर्म की स्वतंत्रता सुनिश्चित करते हुए धर्मनिरपेक्षता सरकार को उन हानिकारक धार्मिक प्रथाओं को संबोधित करने की अनुमति देती है जो राष्ट्रीय विकास में बाधा डाल सकती हैं। यह निर्णय समान नागरिक संहिता (यूसीसी) को बढ़ावा देने का समर्थन करता है, जैसा कि राज्य नीति के निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 44 के तहत प्रोत्साहित किया गया है।

भविष्य के निहितार्थ:

- **बहस का समाधान:** सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने संविधान में 'समाजवादी और धर्मनिरपेक्ष' शब्दों को शामिल करने पर बहस का समाधान कर दिया। इस निर्णय ने संसद को आवश्यकता के अनुसार संविधान संशोधन की शक्ति सुनिश्चित की।
- **धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद का विकास:** यह निर्णय भारत के लोकतांत्रिक, बहुलवादी और कल्याणकारी लक्ष्यों के अनुरूप भारतीय धर्मनिरपेक्षता और समाजवाद के विकास को रेखांकित करता है।
- **लचीला संविधान:** न्यायालय का यह निर्णय पुष्टि करता है कि संविधान एक जीवंत दस्तावेज है। यह मौलिक अधिकारों की रक्षा करते हुए और सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करते हुए नई चुनौतियों का सामना करने में सक्षम है।
- **विधायी सुधारों की संभावना:** यह निर्णय भविष्य में विधायी सुधारों को प्रेरित कर सकता है, जिनमें समान नागरिक संहिता भी शामिल है। यह सभी नागरिकों के लिए समानता और गैर-भेदभाव सुनिश्चित करने पर केंद्रित होगा, चाहे उनकी आस्था या पृष्ठभूमि कुछ भी हो।

पेन्नैयार नदी जल बंटवारा विवाद

चर्चा में क्यों?

हाल ही में 26 नवंबर, 2024 को सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र सरकार को निर्देश दिया कि वह तमिलनाडु और कर्नाटक के बीच पेन्नैयार नदी के जल बंटवारे से जुड़े विवाद में वार्ता समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत करे। यह विवाद भारतीय राज्यों के बीच जल बंटवारे को लेकर उत्पन्न चुनौतियों को रेखांकित करता है।

पेन्नैयार नदी:

- पेन्नैयार नदी (पोन्नैयार) दक्षिण भारत की एक महत्वपूर्ण नदी है, जोकि कर्नाटक और तमिलनाडु से होकर बहती है।
- यह नदी नंदीहिल्स से निकलती है और बंगाल की खाड़ी में गिरती है।
- नदी विशेष रूप से तमिलनाडु में चेन्नई, वेल्लोर और कुड्डालोर जिलों के लिए सिंचाई, पेयजल और कृषि का प्रमुख स्रोत है।

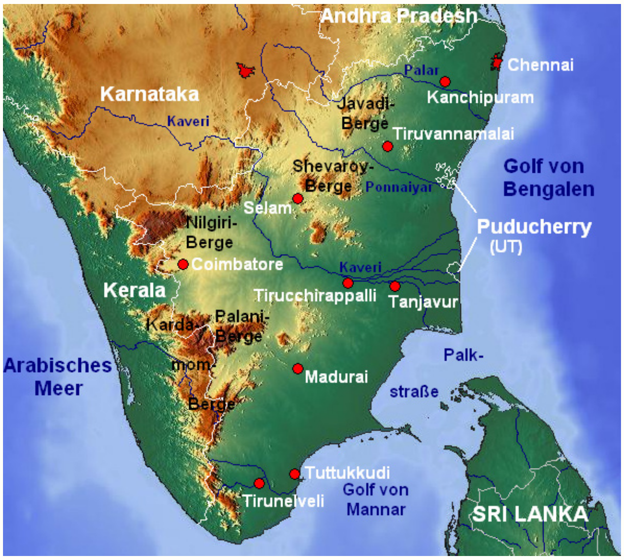

कानूनी विवादः

- विवाद की शुरुआत 2018 में हुई, जब तमिलनाडु ने सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर कर कर्नाटक पर चेक डैम और डायवर्जन संरचनाओं के निर्माण का आरोप लगाया।
- तमिलनाडु ने तर्क दिया कि इन परियोजनाओं से जल प्रवाह में बाधा उत्पन्न होती है, विशेषकर सूखे के समय।

तमिलनाडु का तर्कः

- राज्य ने जल बंटवारे के संबंध में मैसूर (अब कर्नाटक) और मद्रास (अब तमिलनाडु) रियासतों के बीच 1892 में हुए समझौते का हवाला दिया।
- तमिलनाडु ने तर्क दिया कि यह समझौता अभी भी वैध है और दोनों राज्यों पर बाध्यकारी है।

कर्नाटक का तर्कः

- कर्नाटक ने 1892 के समझौते की आधुनिक प्रासंगिकता पर सवाल उठाया।
- उसने अपनी आवश्यकताओं के अनुसार जल संसाधनों के डायवर्जन और विकास का अधिकार जताया।

1892 के समझौते के प्रमुख बिंदुः

- **पूर्व सहमति अनिवार्यताः** एनीकट (अवरोध बांध) बनाने से पहले मैसूर (अब कर्नाटक) को मद्रास (अब तमिलनाडु) सरकार से पूर्व सहमति लेनी होगी।
- **पूर्ण जानकारी की उपलब्धताः** मैसूर सरकार को प्रस्तावित कार्य से संबंधित सभी विवरण मद्रास सरकार को प्रदान करने होंगे।
- **निर्देशात्मक अधिकारों का संरक्षणः** मद्रास सरकार केवल मौजूदा जल अधिकारों की रक्षा के लिए ही सहमति देने से इनकार कर सकती है।
- **लागू क्षेत्रः** यह समझौता एनीकट सहित नदियों पर किए जाने वाले नए सिंचाई कार्यों पर लागू होता है।

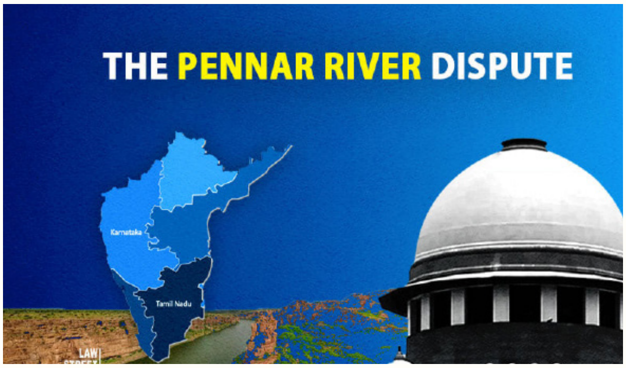

मध्यस्थता प्रयास और केंद्र सरकार की भूमिकाः

- विवाद के समाधान के लिए केंद्र सरकार ने तमिलनाडु और कर्नाटक के बीच वार्ता की सुविधा प्रदान की।
- जनवरी 2024 में, सुप्रीम कोर्ट ने अंतरराज्यीय नदी जल विवाद अधिनियम, 1956 की धारा 4 के तहत केंद्र सरकार को एक वार्ता समिति गठित करने का निर्देश दिया।
- इस समिति को दोनों राज्यों के बीच मध्यस्थता करके विवाद का समाधान खोजने का कार्य सौंपा गया है।
- अब सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र सरकार को वार्ता समिति की रिपोर्ट दो सप्ताह के भीतर प्रस्तुत करने का निर्देश दिया है।

दूरसंचार (दूरसंचार साइबर सुरक्षा) नियम, 2024

चर्चा में क्यों?

हाल ही में दूरसंचार अधिनियम, 2023 के तहत दूरसंचार (दूरसंचार साइबर सुरक्षा) नियम जारी किये गये है। यह नियम मोबाइल डिवाइस उपकरण पहचान संख्या छेड़छाड़ रोकथाम नियम, 2017 को प्रतिस्थापित करेंगे। इन नियमों का मुख्य उद्देश्य दूरसंचार क्षेत्र में साइबर सुरक्षा को सुदृढ़ करना और उभरती सुरक्षा चुनौतियों का प्रभावी समाधान प्रदान करना है।

नियमों के मुख्य प्रावधानः

- **डेटा संग्रहण और साझाकरणः**
    - » केन्द्र सरकार या नामित एजेंसियाँ दूरसंचार संस्थाओं से ट्रैफिक डेटा और अन्य संबंधित जानकारी मांग सकती हैं।
    - » सुरक्षा उद्देश्यों के लिए डेटा को कानून प्रवर्तन एजेंसियों और अन्य दूरसंचार संस्थाओं के साथ साझा किया जा सकता है।
    - » दूरसंचार संस्थाओं को निर्दिष्ट बिंदुओं से डेटा संग्रहण, प्रसंस्करण और भंडारण की सुविधा के लिए आवश्यक बुनियादी ढांचे की स्थापना करनी होगी।

व्यक्तियों और संस्थाओं के लिए दायित्वः

- **व्यक्ति:**
    - » किसी भी व्यक्ति को ऐसे संदेश भेजने या कार्य करने की अनुमति नहीं है, जिससे दूरसंचार साइबर सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता हो।
- **संस्थाएँ:**
    - » जोखिमों से निपटने, ऑडिट करने और घटना प्रतिक्रियाओं का प्रबंधन करने के लिए साइबर सुरक्षा नीतियों को विकसित और कार्यान्वित करना होगा।
    - » उन्हें घुसपैठ जैसी सुरक्षा घटनाओं पर निगरानी रखने और उनका उत्तरदायित्व निभाने के लिए सुरक्षा परिचालन केंद्र (SOC) स्थापित करने होंगे।
    - » साइबर सुरक्षा प्रयासों की देखरेख के लिए संस्थाओं द्वारा एक मुख्य दूरसंचार सुरक्षा अधिकारी (CTSO) की नियुक्ति की जानी चाहिए। ब्ैव् का विवरण केंद्र सरकार को प्रदान किया जाना चाहिए।

घटना की रिपोर्टिंग:

- **रिपोर्टिंग के लिए समय-सीमा:** दूरसंचार संस्थाओं को किसी भी सुरक्षा संबंधी घटना की जानकारी मिलने के 6 घंटे के भीतर केंद्र सरकार को रिपोर्ट करना आवश्यक है। 24 घंटे के भीतर संस्थाओं को विस्तृत जानकारी प्रदान करनी होगी, जैसे:
    - » प्रभावित उपयोगकर्ताओं की संख्या।
    - » घटना की अवधि और भौगोलिक क्षेत्र।
    - » इस समस्या के समाधान के लिए उठाए गए कदम।

दंड और प्रवर्तन:

- यद्यपि दुरुपयोग या अनुपालन में विफलता के लिए दंड का स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन नियम दूरसंचार संस्थाओं के लिए सुरक्षा ढांचे और जवाबदेही तंत्र की स्थापना पर ध्यान केंद्रित करते हैं।

प्रमुख शब्दों की परिभाषाएँ:

- **दूरसंचार साइबर सुरक्षा:** यह साइबर जोखिमों से बचाव के लिए नीतियों, उपकरणों और तकनीकों का उपयोग करके दूरसंचार नेटवर्क और सेवाओं की सुरक्षा को संदर्भित करता है।
- **दूरसंचार इकाई:** यह कोई भी व्यक्ति या संगठन हो सकता है जो दूरसंचार सेवाएं प्रदान करने या दूरसंचार नेटवर्क के रखरखाव में शामिल है।
- **सुरक्षा घटना:** यह कोई भी घटना हो सकती है जोकि संभावित रूप से दूरसंचार सेवाओं या नेटवर्क की सुरक्षा को प्रभावित कर सकती है।

नियमों का प्रभाव:

- नए नियमों का उद्देश्य सुरक्षा घटनाओं पर त्वरित प्रतिक्रिया सुनिश्चित करना और डेटा सुरक्षा तथा घटना प्रबंधन के लिए व्यापक उपाय स्थापित करके भारत के दूरसंचार क्षेत्र में साइबर सुरक्षा को बढ़ाना है।
- हालांकि, ये नियम सरकार को दूरसंचार डेटा तक पहुँचने के लिए महत्वपूर्ण शक्ति भी प्रदान करते हैं, जिससे गोपनीयता और डेटा सुरक्षा को लेकर चिंताएँ उत्पन्न हो सकती हैं।

एक राष्ट्र, एक चुनाव (ONOE): चुनाव सुधार और समन्वय की दिशा में एक कदम

प्रसंग:

हाल ही में 13 दिसंबर, 2024 को भारत के केंद्रीय मंत्रिमंडल ने एक राष्ट्र, एक चुनाव (ONOE) योजना को मंजूरी दी, जो भारत के चुनावी परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस प्रस्ताव का उद्देश्य लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनावों को एक साथ कराना है। इस योजना से चुनावों की आवृत्ति को कम करने, शासन को सुव्यवस्थित करने, चुनावी खर्च को कम करने और भारत में चरणबद्ध चुनावों के कारण होने वाले व्यवधानों को कम करने का लक्ष्य है।

एक राष्ट्र, एक चुनाव (ONOE) का उद्देश्य:

एक राष्ट्र, एक चुनाव का अर्थ है कि लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के चुनावों को एक साथ कराना। इन चुनावों को एक साथ कराकर, ONOE का उद्देश्य है:

- **चुनाव की आवृत्ति को कम करना:** वर्तमान में चुनावों की आवृत्ति अधिक है, जिसमें लोकसभा, राज्य विधानसभाओं और स्थानीय निकायों के लिए अलग-अलग चुनाव होते हैं, जिससे चुनावी थकान और उच्च लागत होती है।
- **शासन को सुव्यवस्थित करना:** चुनावों को एक साथ कराना मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट के कारण होने वाले शासन व्यवधानों से बचाएगा, जो चुनावी अवधि के दौरान प्रभावी होता है और सरकारी गतिविधियों को प्रतिबंधित करता है।
- **खर्च को कम करना:** बार-बार होने वाले चुनाव सार्वजनिक संसाधनों को नष्ट करते हैं। समन्वित चुनाव कराना सरकार और राजनीतिक दलों पर वित्तीय बोझ को कम करेगा।
- **चुनावी व्यवधान को कम करना:** वर्तमान चरणबद्ध चुनाव दैनिक जीवन और आर्थिक गतिविधियों को बाधित करते हैं। एकीकृत चुनाव चक्र देश के सुचारू संचालन की ओर ले जा सकता है।

प्रस्तावित संवैधानिक संशोधन:

- ONOE योजना को लागू करने के लिए भारतीय संविधान में कई प्रमुख संशोधन आवश्यक होंगे:
  - » **अनुच्छेद 82A:** चुनावों को समन्वित करने के लिए निर्वाचन क्षेत्रों के परिसीमन की सुविधा प्रदान करना।
  - » **अनुच्छेद 83(2):** लोकसभा और राज्य विधानसभाओं के कार्यकाल को संरेखित करने के लिए संशोधन प्रस्तावित करना।
  - » **अनुच्छेद 327:** संसद को एक साथ चुनाव कराने के प्रावधान बनाने की शक्ति देना।
  - » **अनुच्छेद 324A:** एक नया अनुच्छेद जो भारत के चुनाव आयोग (ECI) को समन्वित चुनाव कराने का अधिकार देगा।

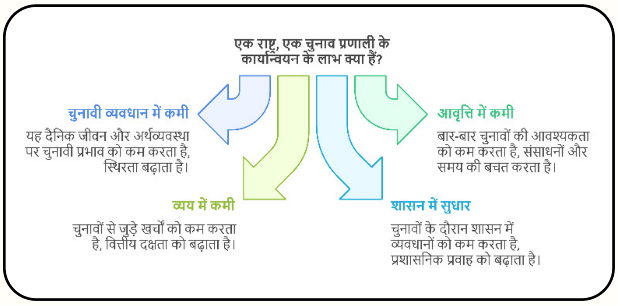

राम नाथ कोविंद समिति की सिफारिशें:

पूर्व राष्ट्रपति राम नाथ कोविंद की अध्यक्षता वाली समिति ने ONOE को लागू करने के लिए कई प्रमुख सिफारिशें कीं। समिति के सुझावों में शामिल हैं:

- **समवर्ती चुनावों को पुनः स्थापित करना:** बार-बार होने वाले चुनाव अर्थव्यवस्था, राजनीति और समाज में व्यवधान पैदा करते हैं। चुनावों को समन्वित करना इस बोझ को कम करेगा।
- **चरणबद्ध कार्यान्वयन:** समिति ने दो चरणों का प्रस्ताव रखा:
  - » **चरण 1:** लोकसभा और राज्य विधानसभा चुनावों को संरेखित करना।
  - » **चरण 2:** सामान्य चुनावों के 100 दिनों के भीतर नगरपालिका और पंचायत चुनावों को समन्वित करना।
- **राज्य विधानसभाओं के कार्यकाल अवधि कम करना:** नई राज्य विधानसभाओं के कार्यकाल को लोकसभा चुनावों के साथ संरेखित करने के लिए समायोजित किया जाएगा।
- **एकीकृत मतदाता सूची और फोटो आईडी प्रणाली:** समिति ने सभी चुनावों के लिए एकल मतदाता सूची और फोटो आईडी प्रणाली स्थापित करने की सिफारिश की ताकि

स्थिरता सुनिश्चित हो सके।

शहरी स्थानीय सरकारें (ULGs) और एक राष्ट्र एक चुनावः

- शहरी स्थानीय सरकारें (ULGs) शासन के विकेंद्रीकरण और आवश्यक नागरिक सेवाओं की डिलीवरी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ULGs के लिए हर पांच साल में चुनाव कराने के संवैधानिक जनादेश के बावजूद, देरी आम है, जो अक्सर वर्षों तक चलती है। यह मुद्दा ONOE के आसपास की चर्चा में उठाया गया है और भारत सरकार ने सामान्य चुनावों के 100 दिनों के भीतर ULG चुनावों को समन्वित करने की सिफारिश की है।
- हालांकि, ULG चुनावों में देरी के मूल कारणों को संबोधित करने के लिए गहन विश्लेषण की आवश्यकता है। राज्य चुनाव आयोगों (SECs) का निराधिकार एक और प्रमुख मुद्दा है जो ULG चुनावों के समय पर संचालन में बाधा डालता है। स्वतंत्र प्राधिकरणों, जैसे कि SECs, को वार्ड परिसीमन और आरक्षण प्रक्रियाओं जैसी जिम्मेदारियों के साथ सौंपा जाना चाहिए ताकि स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित हो सकें।
- एक राष्ट्र, एक चुनाव योजना भारत की चुनावी प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने और बार-बार होने वाले चुनावों के कारण होने वाले व्यवधानों को कम करने के लिए एक महत्वाकांक्षी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है। जबकि इस प्रस्ताव में खर्च में कमी, बेहतर शासन और बढ़े हुए मतदाता टर्नआउट जैसे कई लाभों का वादा किया गया है, इसे संवैधानिक संशोधनों, राजनीतिक सहमति और लॉजिस्टिक समन्वय सहित महत्वपूर्ण चुनौतियों का भी सामना करना पड़ता है।
- देश भर के हितधारकों की भागीदारी, पायलट कार्यान्वयन और बुनियादी ढांचे के विकास के साथ, ONOE की सफलता के लिए महत्वपूर्ण होगा। इसके अतिरिक्त, ONOE के कार्यान्वयन को शहरी स्थानीय सरकारों के चुनावों के समन्वय पर भी विचार करना चाहिए ताकि सभी स्तरों पर समय पर प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो सके।

मुख्य चुनौतियाँ और चिंताएँः

- **संविधान संशोधनः** ONOE को लागू करने के लिए भारत के संविधान में बदलाव की आवश्यकता है, जो राजनीतिक विरोध और चुनौतियों का सामना कर सकता है। इन संशोधनों को संसद और राज्य विधानसभाओं द्वारा अनुमोदित किया जाना चाहिए।
- **संघवाद के मुद्देः** आलोचकों का तर्क है कि ONOE भारत की संघीय संरचना को कमजोर कर सकता है, जिससे चुनावी शक्ति का केंद्रीकरण हो सकता है और क्षेत्रीय और राज्य-स्तरीय मुद्दों का महत्व कम हो सकता है।
- **लॉजिस्टिक जटिलताः** भारत जैसे विशाल और विविध देश में समवर्ती चुनाव कराना एक महत्वपूर्ण लॉजिस्टिक चुनौती प्रस्तुत करता है। ONOE के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करने के लिए समन्वय और योजना महत्वपूर्ण होगी।
- **क्षेत्रीय विविधता और प्रतिनिधित्वः** भारत के विविध राजनीतिक परिदृश्य को राष्ट्रीय मुद्दों द्वारा छाया में रखा जा सकता है। चुनावों को समन्वित करना क्षेत्रीय आकांक्षाओं के प्रतिनिधित्व को सीमित कर सकता है।

आगे की राहः

- **व्यापक परामर्शः** सरकार को योजना पर आम सहमति बनाने के लिए सभी राजनीतिक दलों, राज्य सरकारों और जनता के साथ जुड़ना चाहिए। व्यापक परामर्श से चिंताओं को दूर करने और सभी हितधारकों के विचारों को ध्यान में रखने में मदद मिलेगी।
- **पायलट परीक्षणः** ONOE को छोटे पैमाने पर लागू करना संभावित चुनौतियों की पहचान करने और इसे राष्ट्रीय स्तर पर लागू करने से पहले प्रणाली को परिष्कृत करने का एक प्रभावी तरीका हो सकता है।
- **बुनियादी ढांचे का विकासः** भारत के चुनाव आयोग (ECI) को समवर्ती चुनावों के लॉजिस्टिक्स को प्रबंधित करने के लिए आवश्यक संसाधनों, प्रौद्योगिकी और कर्मियों से लैस करने की आवश्यकता है। इसमें यह सुनिश्चित करना शामिल है कि इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनें (EVMs) और वोटर वेरिफिएबल पेपर ऑडिट ट्रेल (VVPAT) सिस्टम उपलब्ध और सुचारू रूप से कार्य कर रहे हैं।

न्यायिक सक्रियता, न्यायिक अतिक्रमण और उपासना स्थल अधिनियम: एक आलोचनात्मक विश्लेषण

सन्दर्भ:

भारतीय न्यायपालिका संवैधानिक सिद्धांतों, विशेष रूप से देश के धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। न्यायिक निष्क्रियता की अवधारणा, जैसा कि चाड एम. ओल्डफादर ने चर्चा की है, यह न्यायपालिका के सक्रिय या निष्क्रिय होने के प्रभाव और महत्व पर विचार करती है। न्यायिक निष्क्रियता कभी-कभी न्यायिक सक्रियता जितनी ही परिणामकारी हो सकती है, विशेषकर जब अदालतें महत्वपूर्ण मामलों को टाल देती हैं, जैसा कि संभल मस्जिद विवाद में देखा गया था। यह मामला भारत के धर्मनिरपेक्ष लोकाचार को संरक्षित करने के लिए एक महत्वपूर्ण कानून, पूजा स्थल (विशेष प्रावधान) अधिनियम, 1991 पर निर्णय लेने में न्यायिक अनिच्छा का उदाहरण है। इस सन्दर्भ में, न्यायिक सक्रियता और न्यायिक अतिक्रमण जैसे शब्दों को न्यायपालिका के कामकाज पर उनके प्रभाव को समझने के लिए बारीकी से जांचने की आवश्यकता है।

न्यायिक सक्रियता: सैद्धांतिक संदर्भ

- न्यायिक सक्रियता में न्यायाधीशों द्वारा गतिशील तरीके से कानूनों की व्याख्या करना, नीतिगत निर्णयों को आकार देना और यह सुनिश्चित करना शामिल है कि न्याय सामाजिक परिवर्तनों के साथ विकसित हो। हालाकि, न्यायिक सक्रियता अधिकारों और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में सहायक रही है, कभी-कभी इसका परिणाम न्यायिक अतिक्रमण के रूप में सामने आ सकता है, जब न्यायालय अपने संवैधानिक अधिकार क्षेत्र से परे कार्य करते हैं। भारत में न्यायिक सक्रियता के कारण कई ऐतिहासिक फैसले हुए हैं, जैसे व्यक्तिगत अधिकारों का विस्तार करना और नीतियों को प्रभावित करना। हालांकि, यह तब भी चुनौतियाँ उत्पन्न करता है जब इसके परिणामस्वरूप न्यायालय अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करते हैं और कार्यपालिका या विधायिका की शक्तियों का उल्लंघन करते हैं।
- इसके विपरीत, न्यायिक निष्क्रियता का अर्थ है न्यायपालिका द्वारा महत्वपूर्ण संवैधानिक मुद्दों का सामना करने पर निर्णायक कार्रवाई करने में विफलता। ओल्डफादर की न्यायिक निष्क्रियता की आलोचना इस बात पर प्रकाश डालती है कि ऐसी विफलताएँ समान रूप से गंभीर परिणाम उत्पन्न कर सकती हैं, विशेषकर तब जब अदालतें समाज और राष्ट्र को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण मामलों को संबोधित करने से बचती हैं।

न्यायिक अतिक्रमण: एक चिंता

- न्यायिक अतिक्रमण तब होता है जब न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर ऐसे निर्णय लेते हैं जोकि सरकार की अन्य शाखाओं, जैसे कि कार्यपालिका या विधायिका के अधिकार क्षेत्र में आते हैं। भारत में, यह रेखा अक्सर धुंधली हो जाती है, विशेषकर विवादास्पद सामाजिक मुद्दों से जुड़े मामलों में। न्यायिक अतिक्रमण शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को कमजोर कर सकता है, मामलों के लंबित होने का कारण बन सकता है और कानून के आवेदन के बारे में भ्रम पैदा कर सकता है।
- संभल मस्जिद मामले में न्यायिक निष्क्रियता देखने को मिली, जब न्यायपालिका ने पूजा स्थल अधिनियम से संबंधित एक महत्वपूर्ण कानूनी मुद्दे पर कार्रवाई को टाल दिया। सिविल कोर्ट को कार्यवाही रोकने का निर्देश देकर और मामले को इलाहाबाद उच्च न्यायालय को सौंपकर, न्यायपालिका एक निश्चित निर्णय देने में विफल रही। इस अनिच्छा को न्यायिक निष्क्रियता के रूप में देखा जा सकता है, जो संवैधानिक मुद्दों के समाधान में बाधा डालती है।

उपासना स्थल अधिनियम, 1991:

- पूजा स्थल अधिनियम, 1991 को पूजा स्थलों के धार्मिक चरित्र को उसी तरह बनाए रखने के लिए अधिनियमित किया गया था जैसा कि 15 अगस्त, 1947 को था। इस अधिनियम का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी भी पूजा स्थल में इस तरह का बदलाव न किया जाए जिससे देश का सांप्रदायिक सौहार्द बिगड़े। इसके मुख्य प्रावधानों में शामिल हैं:
  - » **धारा 3:** किसी भी पूजा स्थल को एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तित करने पर प्रतिबंध लगाती है।
  - » **धारा 4(1):** यह घोषणा करती है कि 15 अगस्त, 1947 के अनुसार पूजा स्थलों का धार्मिक चरित्र अपरिवर्तित रहेगा।
  - » **धारा 4(2):** इन स्थानों के धार्मिक चरित्र के संबंध में कानूनी कार्यवाही पर रोक लगाती है।
  - » **धारा 6:** उल्लंघन के लिए कारावास और जुर्माने सहित दंड निर्धारित करती है।
- यह अधिनियम भारत के धर्मनिरपेक्ष चरित्र की रक्षा करने में मौलिक है, जो किसी भी धार्मिक समुदाय को राजनीतिक या सामाजिक एजेंडे के अनुरूप पूजा स्थलों की स्थिति में बदलाव करने से रोकता है। हालांकि, न्यायिक निष्क्रियता, जैसा कि संभल मस्जिद मामले में प्रदर्शित हुआ, इसके उद्देश्य

को कमजोर करती है।

संभल मस्जिद मामले में न्यायिक स्थगन:

- संभल मस्जिद मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने पूजा स्थल अधिनियम के आवेदन के बारे में विवाद पर निर्णय न लेने का विकल्प चुना। इसके बजाय, इसने मामले को इलाहाबाद उच्च न्यायालय को भेज दिया और एक निश्चित निर्णय से बचा जा सका।
- इस न्यायिक स्थगन को न्यायिक निष्क्रियता माना जा सकता है, क्योंकि न्यायालय द्वारा मामले को टालने से अधिनियम के इर्द-गिर्द कानूनी अनिश्चितता बनी रही। समय पर लिए गए निर्णय से धार्मिक यथास्थिति को बनाए रखने के अधिनियम के इरादे की पुष्टि हो सकती थी और संविधान में निहित धर्मनिरपेक्ष ढांचे को बरकरार रखा जा सकता था।

ऐतिहासिक संदर्भ और न्यायिक मिसालें:

- शाहीन बाग हत्याकांड जैसे अन्य हालिया मामले भी इसी तरह के हैं। शाहीन बाग विरोध (2020) और कृषि कानून विरोध (2021), समान न्यायिक दृष्टिकोण को दर्शाते हैं। दोनों मामलों में, सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णायक कानूनी निर्णय देने के बजाय मध्यस्थता या स्थगन का विकल्प चुना। ये उदाहरण राजनीतिक रूप से संवेदनशील मुद्दों से सीधे निपटने के लिए न्यायपालिका की अनिच्छा को उजागर करते हैं, जो कानूनी अधिकारों और कर्तव्यों के बारे में लंबे समय तक अनिश्चितता और भ्रम में योगदान देता है।
- अयोध्या निर्णय (2019) एक ऐतिहासिक मामला था, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने 1947 के अनुसार पूजा स्थलों के धार्मिक चरित्र को बनाए रखने के महत्व पर बल देते हुए पूजा स्थल अधिनियम को बरकरार रखा। फिर भी, बाद के ज्ञानवापी मस्जिद मामले (2023) ने अधिनियम को लागू करने के लिए न्यायपालिका की प्रतिबद्धता के बारे में चिंताएँ खड़ी कर दी हैं।

न्यायिक इच्छाशक्ति की आवश्यकता:

- संभल मस्जिद मामले में न्यायालय ने पूजा स्थल अधिनियम की वैधता और मंशा की पुष्टि करने का अवसर खो दिया। एक निर्णायक निर्णय देश के धर्मनिरपेक्ष ताने-बाने को मजबूत कर सकता था और संवैधानिक मूल्यों को बनाए रखने में न्यायपालिका की भूमिका के बारे में एक मजबूत संदेश भेज सकता था। ऐसे मामलों को संबोधित करने के लिए न्यायिक इच्छाशक्ति की कमी से जनता में भ्रम की स्थिति पैदा होती है और न्यायपालिका की निष्पक्ष रूप से कानूनों को लागू करने की क्षमता पर अविश्वास उत्पन्न होता है।

अयोध्या निर्णय और इसके निहितार्थ:

- अयोध्या मामले में आए फैसले में पूजा स्थल अधिनियम के महत्व को स्वीकार किया गया था, लेकिन बाद के मामलों जैसे कि ज्ञानवापी मस्जिद में इसके क्रियान्वयन में असंगतता दिखाई देती है। यह अधिनियम भारत की धर्मनिरपेक्ष प्रकृति की रक्षा के लिए बनाया गया है, लेकिन हाल की न्यायिक कार्रवाइयां इसके उद्देश्य को कमजोर करती दिख रही हैं। इन निर्णयों के बीच बदलाव दर्शाता है कि कैसे न्यायिक अतिक्रमण और न्यायिक निष्क्रियता अनिश्चितता और कानूनी असंगति पैदा कर सकती है, जिससे न्यायपालिका में जनता का विश्वास समाप्त हो सकता है।

लोक सेवकों पर मुकदमा चलाने के लिए पूर्व अनुमति की आवश्यकता

चर्चा में क्यों?

हाल ही में दिल्ली के मुख्यमंत्री ने सुप्रीम कोर्ट के एक महत्वपूर्ण निर्णय का संदर्भ देते हुए दिल्ली हाई कोर्ट में एक याचिका दायर की, जिसमें उन्होंने चल रहे मुकदमों पर रोक लगाने की मांग की। इस फैसले में, सरकारी कर्मचारियों के खिलाफ मनी लॉन्ड्रिंग जैसे गंभीर आरोपों के संबंध में मुकदमा चलाने से पहले संबंधित सरकार से पूर्व अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता को स्पष्ट रूप से रेखांकित किया गया है।

- यह निर्णय एक ऐसे मामले से आया है, जिसमें लोक सेवकों पर धन शोधन का आरोप लगाया गया था और प्रवर्तन निदेशालय ने बिना सरकार से आवश्यक मंजूरी प्राप्त किए ही उन पर मुकदमा चलाने का प्रयास किया था।
- सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि इस प्रकार के अभियोजन दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) की धारा 197(1) के तहत आवश्यक पूर्व अनुमोदन के बिना आगे नहीं बढ़ सकते।

पूर्व स्वीकृति प्रावधान क्या है?

- **सीआरपीसी की धारा 197(1):** इस प्रावधान के तहत सरकारी कर्तव्यों के निर्वहन के दौरान किए गए अपराधों के लिए किसी लोक सेवक पर मुकदमा चलाने से पहले सरकार की पूर्व अनुमति की आवश्यकता होती है। इसका उद्देश्य कदाचार के लिए जवाबदेही सुनिश्चित करते हुए लोक सेवकों को मनमानी कानूनी कार्रवाई से बचाना है।
- **अपवाद:** यौन अपराध, मानव तस्करी और महिलाओं के विरुद्ध अपराध जैसे गंभीर अपराधों के लिए किसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं है।

सुप्रीम कोर्ट का फैसला: मुख्य बिंदु

- **लोक सेवकों के लिए मंजूरी की आवश्यकता:** न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि पूर्व मंजूरी की आवश्यकता न केवल सीआरपीसी के तहत आपराधिक अपराधों पर लागू होती है, बल्कि पीएमएलए (प्रिवेंशन ऑफ मनी लॉन्ड्रिंग एक्ट) के तहत मामलों पर भी लागू होती है। यह भविष्य में सार्वजनिक अधिकारियों के खिलाफ मनी लॉन्ड्रिंग के आरोपों से जुड़े मामलों के लिए एक कानूनी मिसाल कायम करता है।

- **आधिकारिक कर्तव्य और कथित अपराध के बीच संबंध:** न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि जब कथित अपराध सरकारी कर्तव्यों के निर्वहन से जुड़े हों, तो पूर्व स्वीकृति आवश्यक है।

फैसले के निहितार्थ:

- **चल रहे मुकदमों पर प्रभाव:** इस फैसले का उल्लेख उन चल रहे कानूनी मामलों में किया गया है, जहां सरकारी कर्मचारी पीएमएलए (प्रिवेंशन ऑफ मनी लॉन्ड्रिंग एक्ट) के तहत आरोपित हैं। पूर्व मंजूरी न मिलने के कारण इन मुकदमों पर रोक लगाने या आरोपों को खारिज करने में कानूनी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं।
- **व्यापक प्रभाव:** इस फैसले का सीआरपीसी (दंड प्रक्रिया संहिता) और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (पीसीए) दोनों के तहत आने वाले मामलों पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा, जिसमें भ्रष्टाचार से संबंधित अपराधों के लिए लोक सेवकों पर मुकदमा चलाने के लिए पूर्व अनुमति लेना भी अनिवार्य है।

पुलिस महानिदेशकों/महानिरीक्षकों का 59वां अखिल भारतीय सम्मेलन

चर्चा में क्यों?

हाल ही में पुलिस महानिदेशकों/महानिरीक्षकों का 59वां अखिल भारतीय सम्मेलन भुवनेश्वर में आयोजित किया गया। यह वार्षिक आयोजन पुलिस के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा और कानून प्रवर्तन चुनौतियों पर चर्चा करने के लिए एक आवश्यक मंच के रूप में कार्य करता है।

चर्चा किए गए प्रमुख विषय

- **राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सुरक्षा खतरे:** सम्मेलन के दौरान आतंकवाद-निरोध, वामपंथी उग्रवाद (एलडब्ल्यूई), साइबर अपराध, आर्थिक सुरक्षा, आव्रजन नियंत्रण, तटीय सुरक्षा और नार्को -तस्करी जैसे विषयों पर चर्चा की गई।
- **उभरती सुरक्षा चिंताएं:** बांग्लादेश और म्यांमार के साथ सीमाओं पर सुरक्षा मुद्दों, शहरी पुलिस व्यवस्था के रुझानों और दुर्भावनापूर्ण आख्यानों का मुकाबला करने की आवश्यकता पर विशेष जोर दिया गया।
- **नये आपराधिक कानून और पुलिस प्रथाएं:** सम्मेलन में नए बनाए गए प्रमुख आपराधिक कानूनों के कार्यान्वयन, विभिन्न पहलों और पुलिस व्यवस्था में सर्वोत्तम तौर-तरीकों के साथ-साथ पड़ोसी देशों में सुरक्षा स्थिति की समीक्षा की गई।
- **स्मार्ट पुलिसिंग विजन:** स्मार्ट पुलिसिंग की अवधारणा का विस्तार किया गया जिसमें निम्नलिखित शामिल हैं:
  - » Strategic (सामरिक)
  - » Meticulous (सूक्ष्म)
  - » Adaptable (अनुकूलनीय)
  - » Reliable (भरोसेमंद)
  - » Transparent (पारदर्शी)
- इस सम्मेलन में पुलिस बलों के लिए न केवल परिचालन क्षमताओं में सुधार करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया, बल्कि उनके दृष्टिकोण में अधिक रणनीतिक, अनुकूलनीय और पारदर्शी बनने की भी आवश्यकता पर जोर दिया गया।
- सम्मेलन में कानून प्रवर्तन को आधुनिक चुनौतियों, विशेष रूप से डिजिटल प्रौद्योगिकियों के उदय के साथ अनुकूलन के लिए तैयार करने पर ध्यान केंद्रित किया गया।

भारत में पुलिस सुधार की स्थिति:

- भारत में पुलिस सुधार की स्थिति दशकों के प्रयासों के बावजूद अभी तक पूरी तरह से साकार नहीं हो पाई है। जिससे पुलिस के कार्यों में पुरानी और अप्रचलित विधियों की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।
- इसके अतिरिक्त, भारत में पुलिस बलों से जनता की अपेक्षाएँ काफी बढ़ गई हैं। विशेषकर, अपराध के नए रूप जैसे साइबर अपराध, वित्तीय धोखाधड़ी और आतंकवाद ने पुलिस व्यवस्था को चुनौती दी है।
- समाज की तेजी से बदलती जरूरतों और अपराधों के प्रकारों के साथ पुलिस को अधिक तकनीकी, प्रभावी और जिम्मेदार बनाने की आवश्यकता है।

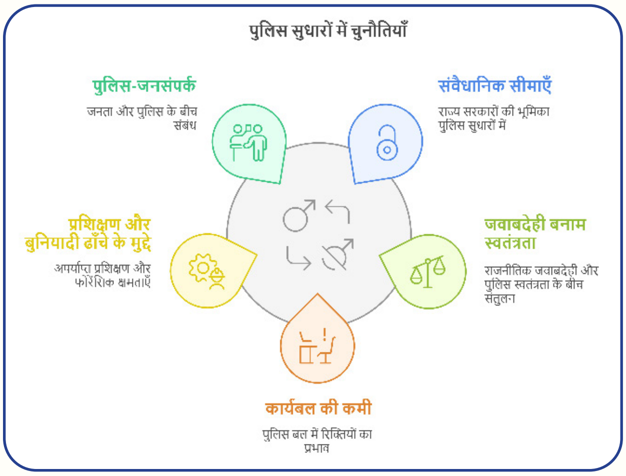

पुलिस सुधारों को लागू करने में चुनौतियाँ:

- **संवैधानिक सीमाएं:** पुलिस राज्य का विषय है, अर्थात सुधारों को लागू करना मुख्यतः राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है।
- **जवाबदेही और परिचालन स्वतंत्रता:** राजनीतिक जवाबदेही और पुलिस की परिचालन स्वतंत्रता के बीच एक नाजुक संतुलन है।
- **कार्यबल की कमी:** पुलिस बल में बड़ी संख्या में रिक्तियां होने के कारण कार्यबल पर अत्यधिक बोझ बढ़ गया है।
- **प्रशिक्षण एवं अवसंरचना संबंधी मुद्दे:** पुलिस प्रशिक्षण, योग्यता, पदोन्नति और अपर्याप्त फोरेंसिक क्षमता से संबंधित समस्याएँ बनी हुई हैं।
- **पुलिस-जनता संबंध:** अपराध और अव्यवस्था को रोकने के

लिए पुलिस और जनता के बीच सकारात्मक संबंध महत्वपूर्ण है, जिसमे कमी देखी जाती हैं।

पुलिस सुधार पर समितियाँ और आयोग:

- **राष्ट्रीय पुलिस आयोग (1978-82):** दंड प्रक्रिया संहिता में संशोधन का सुझाव दिया।
- **पद्मनाभैया समिति (2000):** अपराध रोकथाम में भर्ती, प्रशिक्षण और सार्वजनिक भागीदारी में संरचनात्मक परिवर्तन की सिफारिश की।
- **मलिमथ समिति (2002-03):** प्रशिक्षण बुनियादी ढांचे को मजबूत करने, नया पुलिस अधिनियम बनाने और अपराध जांच में सुधार पर ध्यान केंद्रित किया गया।
- **रिबेरो समिति (1998):** पुलिस सुधार सिफारिशों के कार्यान्वयन की समीक्षा की।
- **सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश (2006):** राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को बाध्यकारी सुधारों को लागू करने का निर्देश दिया गया, जैसे राज्य सुरक्षा आयोग का गठन और पुलिस स्थापना बोर्ड की स्थापना।

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम (पीसीए) और पूर्व मंजूरी

- **पीसीए की धारा 19:** सीआरपीसी की धारा 197 के समान, इस धारा के तहत रिश्वतखोरी और पद के दुरुपयोग जैसे अपराधों के लिए सरकारी अधिकारियों पर मुकदमा चलाने के लिए सरकार से पूर्व अनुमति की आवश्यकता होती है।
- **पीसीए की धारा 17ए:** 2018 में संशोधनों के बाद, यह धारा सार्वजनिक अधिकारियों द्वारा अपने आधिकारिक कर्तव्यों के दौरान लिए गए निर्णयों की जांच करने से पहले पूर्व अनुमोदन की आवश्यकता को अधिक मजबूत करती है।

आरक्षण धर्म के आधार पर नहीं हो सकता: सुप्रीम कोर्ट

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रश्न पर विचार किया कि क्या आरक्षण का लाभ धर्म के आधार पर प्रदान किया जा सकता है? यह प्रश्न तब सामने आया जब न्यायालय ने कलकत्ता उच्च न्यायालय के उस निर्णय के खिलाफ अपील पर सुनवाई की, जिसमें पश्चिम बंगाल सरकार द्वारा 77 सम. ुदायों (जिनमें अधिकांश मुस्लिम थे) को अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) के रूप में वर्गीकृत करने के निर्णय को असंवैधानिक घोषित कर दिया गया था।

पृष्ठभूमि:

- 2010 में, पश्चिम बंगाल सरकार ने 77 मुख्यत: मुस्लिम समुदायों को ओबीसी के रूप में वर्गीकृत किया ताकि उन्हें सरकारी नौकरियों और शैक्षणिक संस्थानों में आरक्षण का लाभ मिल सके। हालांकि, कलकत्ता उच्च न्यायालय ने 22 मई, 2024 को इस वर्गीकरण को रद्द कर दिया।
- न्यायालय ने फैसला सुनाया कि यह वर्गीकरण केवल धर्म आधारित प्रतीत होता है, न कि पिछड़ेपन पर। इसके साथ ही, न्यायालय ने यह भी कहा कि इन समुदायों के पिछड़ेपन को सही ठहराने के लिए आवश्यक सर्वेक्षण और डेटा की कमी थी, जिससे यह आरक्षण संवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करता है।

सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणी:

- गवई और केवी विश्वनाथन की सुप्रीम कोर्ट की बेंच ने कहा कि 'आरक्षण धर्म के आधार पर नहीं हो सकता।' यह कथन इस बात पर चल रही बहस को रेखांकित करता है कि क्या धर्म को आरक्षण के लिए वैध मानदंड होना चाहिए।
- अदालत ने यह भी स्वीकार किया कि आरक्षण के लिए ध र्म का उपयोग करने के बारे में एक बड़ा संवैधानिक प्रश्न संविधान पीठ के समक्ष लंबित है।

भारत में आरक्षण से संबंधित संवैधानिक ढांचा:

- भारत का संविधान सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए, विशेष रूप से वंचित समुदायों के लिए, सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान करता है।
- **अनुच्छेद 15:** धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध करता है।
- **अनुच्छेद 16:** सार्वजनिक रोजगार में समान अवसर सुनिश्चित करता है, लेकिन पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की अनुमति देता है।
- **अनुच्छेद 46:** यह राज्य को अनुसूचित जातियों (एससी), अनुसूचित जनजातियों (एसटी) और अन्य सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने का निर्देश देता है।
- **अनुच्छेद 340:** यह अनुच्छेद कुछ वर्गों और समुदायों के पिछड़ेपन की जांच के लिए एक आयोग के गठन की अनुमति देता है।
- मंडल आयोग की रिपोर्ट (1980) ने पिछड़े वर्गों की पहचान सामाजिक- आर्थिक मानदंडों, खास तौर पर जाति के आधार पर करने की नींव रखी, न कि धर्म के आधार पर। इंदिरा साहनी केस (1992) ने इस बात पर जोर दिया कि आरक्षण पिछड़ेपन के आधार पर होना चाहिए, न कि धर्म के आधार पर।

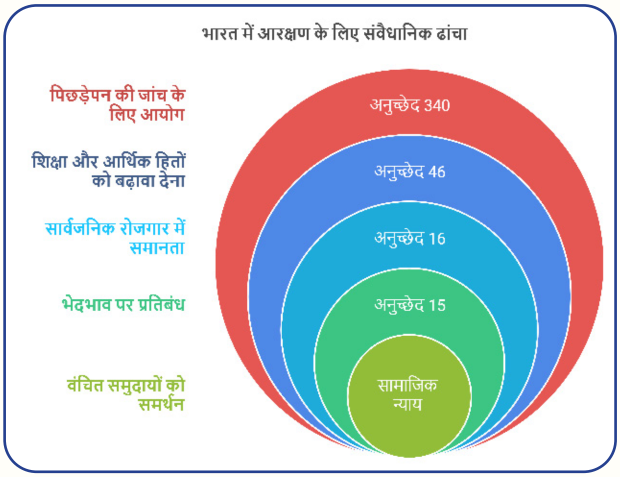

पक्ष-विपक्ष के तर्कः

- पश्चिम बंगाल सरकार का प्रतिनिधित्व करने वाले कपिल सिब्बल ने इस वर्गीकरण का बचाव करते हुए कहा कि यह धर्म पर नहीं बल्कि पिछड़ेपन पर आधारित है। उन्होंने इन समुदायों के पिछड़ेपन पर मात्रात्मक डेटा का हवाला दिया।
- इसके विपरीत, प्रतिवादियों का प्रतिनिधित्व करने वाले पीएस पटवालिया ने तर्क दिया कि राज्य ने उचित प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया है, पिछड़ा वर्ग आयोग को दरकिनार कर दिया है और पिछड़ेपन पर व्यापक सर्वेक्षण करने में विफल रहा है।

अगली सुनवाईः

- सुप्रीम कोर्ट ने मामले की अगली सुनवाई 7 जनवरी, 2025 को तय की है। न्यायालय के इस फैसले का भारत में आरक्षण को नियंत्रित करने वाले कानूनी ढांचे पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ने की संभावना है, विशेषकर धर्म आधारित कोटा के सवाल के संबंध में।
- यह निर्णय पिछड़े वर्गों की श्रेणी के तहत वर्गीकरण के लिए धर्म को आधार के रूप में उपयोग करने की संवैधानिकता को और स्पष्ट कर सकता है।

उपराष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव

चर्चा में क्यों?

राज्यसभा के सभापति जगदीप धनखड़ को पद से हटाने के लिए विपक्षी दलों ने शीतकालीन सत्र में उनके खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पेश करने की प्रक्रिया प्रारंभ की थी, जिसे खारिज कर दिया गया।

प्रस्ताव का कारणः

- यह अविश्वास प्रस्ताव राज्यसभा के सभापति जगदीप धनखड़ और विपक्ष के बीच लंबे समय से जारी तनाव के परिणामस्वरूप प्रस्तुत किया गया। विपक्ष ने धनखड़ पर राज्यसभा में बहस और सत्र संचालन के दौरान निष्पक्षता बनाए रखने में असफल रहने का आरोप लगाया था। प्रमुख विधायी और नीतिगत मुद्दों पर विपक्ष की आवाज को समुचित स्थान न देने के उनके रवैये को भी आलोचना का विषय बनाया गया था।

भारत के उपराष्ट्रपति को हटानाः

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 67(बी) के तहत, भारत के उपराष्ट्रपति को राज्यसभा में पारित प्रस्ताव के माध्यम से हटाया जा सकता है। इस प्रस्ताव को प्रभावी बहुमत (कुल सदस्यों के बहुमत) के साथ राज्यसभा में पारित किया जाना चाहिए और इसके बाद लोकसभा में साधारण बहुमत से अनुमोदित किया जाना आवश्यक है।
- प्रस्ताव को सदन में चर्चा के लिए प्रस्तुत करने से कम से कम 14 दिन पूर्व इसकी सूचना दी जानी चाहिए। राष्ट्रपति के विपरीत, उपराष्ट्रपति के लिए महाभियोग प्रक्रिया का प्रावधान नहीं है।

भारत के उपराष्ट्रपति की शक्तियाँ और कार्यः

- **राज्य सभा के सभापति के रूप में:** सत्रों की अध्यक्षता करता है, संसदीय प्रक्रियाओं को सुनिश्चित करता है तथा बराबर मतों की स्थिति में मतदान करता है।
- **कार्यवाहक राष्ट्रपतिः** यदि राष्ट्रपति का पद रिक्त हो तो अस्थायी रूप से राष्ट्रपति पद के कर्तव्यों का निर्वहन करता है।
- **संसदीय प्रबंधनः** समितियों की नियुक्ति करना तथा न्यायिक नियुक्तियों से संबंधित प्रस्तावों की देखरेख करना।

महत्वः

- उपराष्ट्रपति राज्यसभा की व्यवस्था बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। राज्यसभा में विधायी निर्णयों पर बहस होती है और उन्हें आकार दिया जाता है। कार्यकारी शक्तियाँ न होने के बावजूद, उपराष्ट्रपति का पद संसदीय कार्यों में अत्यंत महत्वपूर्ण है।

संवैधानिक संदर्भ और अनुच्छेदः

- **अनुच्छेद 63- भारत के उपराष्ट्रपतिः** यह अनुच्छेद कहता है कि भारत का एक उपराष्ट्रपति होगा, जोकि राज्यसभा के सभापति के रूप में भी कार्य करेगा।
- **अनुच्छेद 89- राज्यसभा का सभापतिः** अनुच्छेद 89 के अनुसार, उपराष्ट्रपति को राज्यसभा का पदेन सभापति नामित किया गया है।
- सभापति सदन के समग्र आचरण और शिष्टाचार के लिए उत्तरदायी होते हैं तथा कार्यवाही में निष्पक्षता और न्यायसंगतता सुनिश्चित करते हैं।
- **अनुच्छेद 68- उपराष्ट्रपति का निर्वाचनः** यह अनुच्छेद उपराष्ट्रपति के चुनाव की प्रक्रिया को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि यह प्रक्रिया स्वतंत्र और निष्पक्ष हो।
- **अनुच्छेद 71- राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन**

से संबंधित विवाद: यह प्रावधान करता है कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव से जुड़े विवादों का निपटारा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किया जाएगा।

भारत व अमेरिका के उपराष्ट्रपति में तुलना:

- **भारत:**
  - » **भूमिका:** उपराष्ट्रपति दूसरा सर्वोच्च संवैधानिक अधिकारी और राज्य सभा का अध्यक्ष होता है।
  - » **राष्ट्रपति का प्रतिस्थापन:** यदि राष्ट्रपति का पद रिक्त हो तो अधिकतम छह महीने के लिए अस्थायी रूप से राष्ट्रपति की भूमिका निभाता है।
  - » **चुनाव:** संसद सदस्यों के निर्वाचक मंडल द्वारा निर्वाचित।
  - » **राज्य सभा के कार्य:** वाद-विवाद की अध्यक्षता करना तथा बराबरी की स्थिति में मतदान करना।
- **यूएसए:**
  - » **भूमिका:** उपराष्ट्रपति कार्यपालिका में दूसरे स्थान पर होता है और सीनेट का अध्यक्ष होता है।
  - » **राष्ट्रपति का प्रतिस्थापन:** यदि राष्ट्रपति का पद रिक्त हो तो वह राष्ट्रपति बन जाता है तथा शेष कार्यकाल पूरा करता है।
  - » **चुनाव:** राष्ट्रपति के साथ लोकप्रिय वोट द्वारा निर्वाचित।
  - » **सीनेट के कार्य:** निर्णायक मत दे सकते हैं, लेकिन दैनिक सीनेट के कामकाज में भाग नहीं लेते हैं।

POSH अधिनियम को राजनीतिक दलों पर लागू किए जाने की आवश्यकता?

चर्चा में क्यों?

हाल ही में, राजनीतिक पार्टियों में यौन उत्पीड़न की शिकायतों को संभालने के लिए किसी तंत्र की कमी का मुद्दा एक जनहित याचि. का (PIL) के माध्यम से सुप्रीम कोर्ट में उठाया गया। इस याचिका में राजनीतिक संगठनों में महिलाओं के लिए सुरक्षित कार्यस्थल की अनुपस्थिति पर सवाल खड़े किए गए हैं।

- सवाल यह है कि क्या यौन उत्पीड़न रोकथाम (POSH) अधिनियम को राजनीतिक दलों पर लागू किया जाना चाहिए?
- सुप्रीम कोर्ट ने इस मामले में याचिकाकर्ता को चुनाव आयोग (ECI) से संपर्क करने का निर्देश दिया है ताकि राजनीतिक दलों के भीतर यौन उत्पीड़न की शिकायतों को निपटाने के लिए एक आंतरिक तंत्र (इन-हाउस मैकेनिज्म) विकसित किया जा सके।

POSH एक्ट का उद्देश्य और दायरा:

- 2013 में लागू किया गया POSH एक्ट कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए बनाया गया है। यह एक्ट संगठनों को आंतरिक शिकायत समिति (ICC) बनाने के लिए बाध्य करता है।
- यह कानून 10 या उससे अधिक कर्मचारियों वाले सभी कार्यस्थलों (सरकारी और निजी दोनों) पर लागू होता है। इसमें वे स्थान भी शामिल हैं जहाँ कर्मचारी काम करते हैं या नौकरी के दौरान यात्रा करते हैं।
- POSH एक्ट 'कार्यस्थल' को व्यापक रूप से परिभाषित करता है, जिसमें पारंपरिक कार्यालय, कारखाने, और सरकारी/निजी फंड से संचालित स्थान शामिल हैं। लेकिन राजनीतिक पार्टियों पर इसका लागू होना स्पष्ट नहीं है, क्योंकि वे पारंपरिक कार्यस्थल के दायरे में नहीं आतीं।

राजनीतिक पार्टियां और POSH एक्ट:

- राजनीतिक पार्टियों में औपचारिक नियोक्ता-कर्मचारी संबंध नहीं होता है। पार्टी कार्यकर्ताओं के पास तय कार्यस्थल या औपचारिक अनुबंध नहीं होते।
- पार्टियों के अभियान और जनसभाएं विकेंद्रीकृत होती हैं, जो 'कार्यस्थल' की स्पष्ट परिभाषा के तहत नहीं आतीं।
- 2022 में केरल हाई कोर्ट ने फैसला सुनाया कि राजनीतिक पार्टियों को ICC बनाने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उनके पास पारंपरिक नियोक्ता-कर्मचारी ढांचा नहीं है।
- इसके बावजूद, कुछ लोगों का मानना है कि राजनीतिक पार्टियां, जो महत्वपूर्ण सार्वजनिक संस्थान हैं, को अन्य कार्यस्थलों की तरह महिलाओं की सुरक्षा और सम्मान सुनिश्चित करने के लिए इन्हीं मानकों का पालन करना चाहिए।

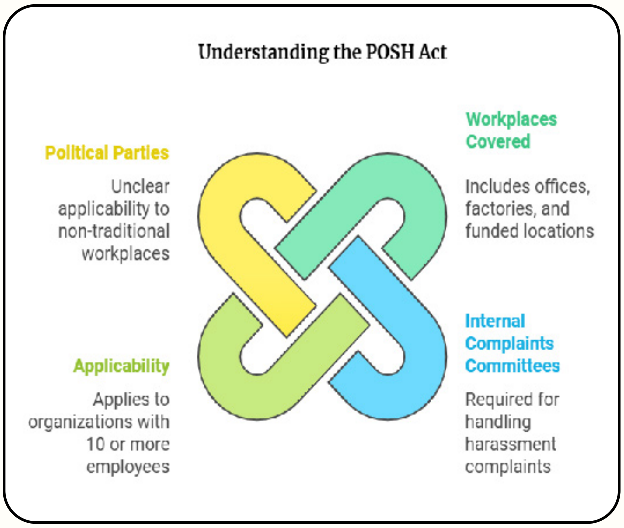

चुनाव आयोग की भूमिका:

- चुनाव आयोग (ECI) राजनीतिक पार्टियों के पंजीकरण, संचालन, और चुनावी प्रक्रिया की निगरानी करता है। हालांकि, राजनीतिक संगठनों में POSH एक्ट लागू करवाना पारंपरिक रूप से ECI की जिम्मेदारी नहीं रही है।
- इस मामले में सुप्रीम कोर्ट ने याचिकाकर्ता को ECI से संपर्क करने का निर्देश दिया है ताकि यौन उत्पीड़न की शिकायतों को

संभालने के लिए एक आंतरिक तंत्र बनाया जा सके।

- ECI ने पहले गैर-चुनावी मामलों, जैसे RTI और बाल श्रम अधिनियम के अनुपालन में सलाहकार भूमिका निभाई है, लेकिन राजनीतिक पार्टियों पर POSH एक्ट लागू करने की उसकी क्षमता पर सवाल है।

राजनीतिक पार्टियों की वर्तमान अनुशासन प्रणाली:

- राजनीतिक पार्टियां अपनी अनुशासन समितियों के माध्यम से आंतरिक मामलों को संभालती हैं, लेकिन ये समितियां POSH एक्ट के ICC मानकों पर खरी नहीं उतरतीं।
- POSH एक्ट के तहत ICC में कम से कम एक बाहरी सदस्य और संतुलित लैंगिक संरचना होना अनिवार्य है।
- कई राजनीतिक पार्टियों के पास शिकायतों को संभालने के लिए औपचारिक ढांचा नहीं है, जिससे कार्यकर्ताओं, स्वयंसेवकों या पदाधिकारियों के लिए यौन उत्पीड़न की शिकायत दर्ज कराना मुश्किल हो जाता है।

पेपर लीक पर पैनल

चर्चा में क्यों?

हाल ही में, NEET-UG पेपर लीक के बाद शिक्षा मंत्रालय ने पूर्व इसरो चेयरमैन के. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में एक सात सदस्यीय पैनल का गठन किया। इस पैनल ने राष्ट्रीय स्तर की प्रवेश परीक्षाओं को 'पारदर्शी, सुगम और निष्पक्ष' बनाने के लिए 101 सिफारिशें प्रस्तुत की हैं।

पैनल की मुख्य सिफारिशें:

- **NTA की भूमिका सीमित करना:**
  - » पैनल ने राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (NTA) की भूमिका सीमित करने की सिफारिश की है।
  - » NTA फिलहाल प्रवेश परीक्षाओं के अलावा भर्ती परीक्षाओं का भी आयोजन कर रही है, लेकिन पैनल ने कहा कि NTA को पहले अपनी क्षमता बढ़ाने तक केवल प्रवेश परीक्षाओं पर ध्यान देना चाहिए।
  - » NTA की बाहरी सेवा प्रदाताओं पर अत्यधिक निर्भरता को कम करने और इसके नेतृत्व व स्टाफ में क्षेत्र-विशेष के विशेषज्ञों को शामिल करने की भी सलाह दी गई।
- **परीक्षाओं की निष्पक्षता सुनिश्चित करना:**
  - » राज्य और जिला स्तर के अधिकारियों को चुनाव प्रबंधन की तरह परीक्षा प्रक्रिया में शामिल करने का सुझाव दिया गया।
  - » इसमें NTA, नेशनल इंफॉर्मेटिक्स सेंटर (NIC), पुलिस और खुफिया एजेंसियों की समन्वय समितियां बनाने की बात कही गई।
  - » परीक्षा केंद्रों को अधिकारियों की मौजूदगी में सील करना और सीसीटीवी के जरिए निगरानी करना, जैसे मतदान केंद्रों में होता है, इसका हिस्सा होगा।
- **परीक्षा प्रक्रिया में सुधार:**
  - » **मल्टी-सेशन परीक्षा:** परीक्षाएं अलग-अलग सत्रों में आयोजित की जाएं।
  - » **NEET-UG के लिए मल्टी-स्टेज टेस्टिंग:** इसे चरणबद्ध परीक्षा में बदलने की सिफारिश की गई।
  - » **केंद्र आवंटन नीति में बदलाव:** संदिग्ध आवंटनों को रोकने के लिए एक नई नीति अपनाने का सुझाव दिया गया।
  - » दूर-दराज के क्षेत्रों में मोबाइल टेस्टिंग सेंटर और पेन-पेपर परीक्षाओं के लिए कई प्रश्न पत्र तैयार करने का सुझाव।
  - » प्रश्न पत्रों को एन्क्रिप्टेड तरीके से परीक्षा केंद्र तक पहुंचाने की सिफारिश की गई।
  - » **'डिजी-एग्जाम' सिस्टम:** परीक्षा केंद्रों पर उम्मीदवारों की पहचान बायोमेट्रिक्स से सुनिश्चित करने का सुझाव।
- **दीर्घकालिक सिफारिशें:**
  - » विभिन्न अंडरग्रेजुएट प्रोग्राम के लिए परीक्षाओं को एकसमान और सामंजस्यपूर्ण बनाना।
  - » कंप्यूटर-अडैप्टिव टेस्टिंग अपनाने का सुझाव।
  - » केंद्रीय विद्यालयों और नवोदय विद्यालयों के साथ मिलकर डिजिटल इन्फ्रास्ट्रक्चर तैयार करना।
  - » एक साल के भीतर 400-500 परीक्षा केंद्रों का नेटवर्क बनाना, जो प्रति सत्र लगभग 2.5 लाख छात्रों की परीक्षा आयोजित कर सके।
  - » इन उपायों से NTA की बाहरी सेवा प्रदाताओं पर निर्भरता घटेगी और परीक्षा प्रक्रिया बेहतर होगी।

राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (NTA) के बारे में:

- NTA की स्थापना 2018 में भारतीय सोसायटी पंजीकरण अधिनियम, 1860 के तहत की गई थी। इसका उद्देश्य उच्च शिक्षण संस्थानों में प्रवेश और फैलोशिप के लिए विभिन्न परीक्षाओं का आयोजन करना है, जैसे JEE (Main), CMAT, UGC-NET आदि।
- NTA का नेतृत्व एक प्रमुख शिक्षाविद् करते हैं, जिन्हें शिक्षा मंत्रालय नियुक्त करता है।
- एजेंसी में 9 कार्यक्षेत्र हैं, जिनका नेतृत्व संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञ करते हैं। इससे एजेंसी को विशेष नेतृत्व और निगरानी में मदद मिलती है।

केन-बेतवा नदी जोड़ो परियोजना

चर्चा में क्यों?

25 दिसंबर को प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने मध्य प्रदेश के खजुराहो में केन-बेतवा नदी जोड़ो परियोजना की आधारशिला रखी। इस परियोजना को लागू करने के लिए जल शक्ति मंत्रालय और मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश सरकारों के बीच 22 मार्च 2021 को समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर हुए थे।

केन–बेतवा नदी जोड़ो परियोजना के बारे में:

- केन-बेतवा नदी जोड़ो परियोजना (KBLP) का उद्देश्य केन नदी से बेतवा नदी तक पानी स्थानांतरित करना है। ये दोनों नदियां यमुना की सहायक नदियां हैं। इस परियोजना के तहत 221 किमी लंबी नहर का निर्माण किया जाएगा, जिसमें 2 किमी लंबी सुरंग भी शामिल है।
- इसका उद्देश्य सिंचाई, पेयजल आपूर्ति, और जलविद्युत व सौर ऊर्जा का उत्पादन करना है। यह परियोजना राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना का हिस्सा है, जिसका उद्देश्य नदी जोड़ने के माध्यम से क्षेत्रीय जल संकट का समाधान करना है। इसे सूखा-प्रवण क्षेत्रों में जल उपलब्धता बढ़ाने और राज्यों में जल का समान वितरण सुनिश्चित करने की दिशा में एक कदम माना जा रहा है।

केन–बेतवा नदी जोड़ो परियोजना के घटक:

- यह परियोजना दो चरणों में विभाजित है:
  - **चरण-1:** इसमें दौधन बांध, लो और हाई-लेवल सुरंगें, केन-बेतवा लिंक नहर और संबंधित पावर हाउस का निर्माण शामिल है।
  - **चरण-2:** इसमें लोअर ओर बांध, बिना कॉम्प्लेक्स परियोजना और कोठा बैराज का निर्माण शामिल है।

केन–बेतवा परियोजना के लाभ:

- यह परियोजना बुंदेलखंड क्षेत्र में जल संकट से जूझ रहे उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के हिस्सों को लाभ पहुंचाएगी।
- 10.62 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होगी।
- लगभग 62 लाख लोगों को पीने का पानी मिलेगा।
- 103 मेगावॉट जलविद्युत और 27 मेगावॉट सौर ऊर्जा का उत्पादन होगा।

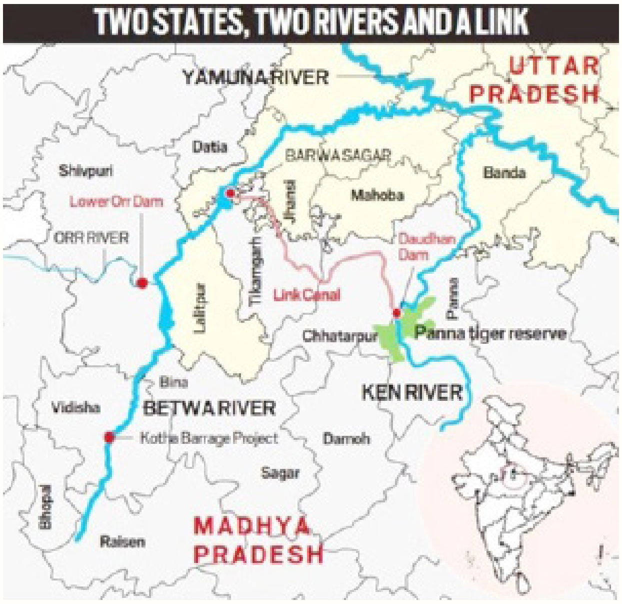

परियोजना से जुड़ी पर्यावरणीय चिंताएं:

- **वनों की कटाई:** दौधन बांध के निर्माण के लिए पन्ना टाइगर रिजर्व में बड़े पैमाने पर वनों की कटाई करनी पड़ेगी, जिससे वन्यजीवों के आवास प्रभावित होंगे।
- **बाघों पर प्रभाव:** परियोजना से पन्ना टाइगर रिजर्व में बाघों की सफल पुनः स्थापना पर नकारात्मक असर पड़ सकता है।
- **घड़ियाल और अन्य प्रजातियों पर प्रभाव:** बांध का निर्माण केन घड़ियाल अभयारण्य में घड़ियालों की आबादी और गिद्धों के घोंसले वाले क्षेत्रों को प्रभावित कर सकता है।
- **भूमि का जलमग्न होना:** बांध से पन्ना नेशनल पार्क के लगभग 98 वर्ग किमी क्षेत्र के जलमग्न होने की संभावना है, जिससे स्थानीय समुदाय प्रभावित होंगे और 6,600 से अधिक परिवार विस्थापित होंगे।

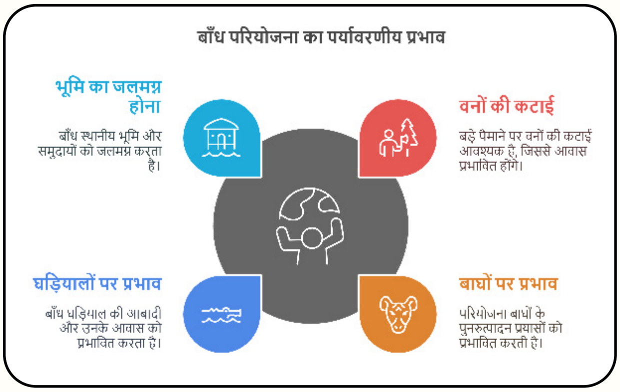

केन–बेतवा परियोजना के सामाजिक प्रभाव:

- इस परियोजना से पन्ना और छतरपुर जिलों के 6,600 से अधिक परिवार विस्थापित होंगे, क्योंकि उनकी जमीन जलमग्न और अधिग्रहण के कारण प्रभावित होगी। इस वजह से स्थानीय समुदायों ने विरोध प्रदर्शन किया है। उनका कहना है कि उन्हें पर्याप्त मुआवजा नहीं मिल रहा है और प्रभावित क्षेत्रों को परियोजना से कोई खास लाभ नहीं होगा।

कोर्ट कॉलेजियम

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट कॉलेजियम ने राजस्थान, उत्तराखंड और इलाहाबाद उच्च न्यायालयों में चार न्यायिक अधिकारियों की नियुक्ति और एक वकील को न्यायाधीश के पद पर पदोन्नत करने की सिफारिश की।

नियुक्ति हेतु अनुशंसित व्यक्ति:

कॉलेजियम ने निम्नलिखित न्यायिक अधिकारियों और एक वकील के नाम को पदोन्नति हेतु प्रस्तावित किया:

- **आशीष नैथानी:** उत्तराखंड उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के

पद के लिए अनुशंसित।

- **प्रवीण कुमार गिरि:** इलाहाबाद उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद के लिए अनुशंसित (वकील से पदोन्नति)।
- **चन्द्रशेखर शर्मा:** राजस्थान उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद के लिए अनुशंसित।
- **प्रमिल कुमार माथुर:** राजस्थान उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद के लिए अनुशंसित।
- **चन्द्र प्रकाश श्रीमाली:** राजस्थान उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के पद के लिए अनुशंसित।

भारत में कॉलेजियम प्रणाली के बारे में:

- कॉलेजियम प्रणाली भारत में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण की एक विधि है। यह संविधान का हिस्सा नहीं है, लेकिन यह न्यायिक निर्णयों के माध्यम से विकसित हुई है।
- इस प्रणाली में भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) और सर्वोच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश नियुक्तियों और स्थानांतरण की सिफारिश करते हैं, जिसमें अंतिम निर्णय कार्यपालिका के परामर्श के बाद बाध्यकारी होता है।

कॉलेजियम सिस्टम कैसे काम करता है?

- सुप्रीम कोर्ट में, CJI, चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के साथ मिलकर न्यायाधीशों की नियुक्ति और स्थानांतरण की सिफारिश करता है। इसी तरह, उच्च न्यायालयों में, मुख्य न्यायाधीश और दो वरिष्ठतम न्यायाधीश न्यायिक नियुक्तियों के लिए कॉलेजियम बनाते हैं। सरकार आपत्ति उठा सकती है, लेकिन अगर कॉलेजियम अपनी सिफारिशों को दोहराता है, तो सरकार को अनुशंसित न्यायाधीशों की नियुक्ति करनी होगी।

न्यायिक नियुक्तियों के लिए संवैधानिक प्रावधान:

- **अनुच्छेद 124:** सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा मुख्य न्यायाधीश और अन्य आवश्यक न्यायाधीशों के परामर्श के बाद की जाती है।
- **अनुच्छेद 217:** उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा मुख्य न्यायाधीश, राज्य के राज्यपाल और संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श के बाद की जाती है।

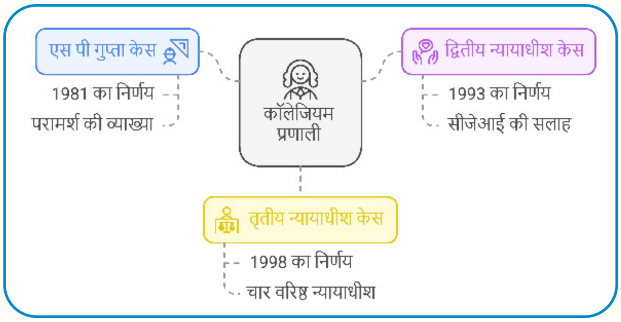

कॉलेजियम प्रणाली की उत्पत्ति:

कॉलेजियम प्रणाली सुप्रीम कोर्ट के कई निर्णयों से उभरी है:

- **एस.पी. गुप्ता केस (1981):** परामर्श को विचारों के आदान-प्रदान के रूप में व्याख्यायित किया गया, जिसमें सहमति की आवश्यकता नहीं थी।
- **द्वितीय न्यायाधीश मामला (1993):** न्यायालय ने अपने पहले के रुख को पलटते हुए फैसला सुनाया कि परामर्श का मतलब सहमति है और मुख्य न्यायाधीश की सलाह राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी है।
- **तृतीय न्यायाधीश मामला (1998):** इसने न्यायिक नियुक्तियों के लिए सर्वोच्च न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों को शामिल करने के लिए कॉलेजियम का विस्तार किया।

भारत में डिजिटल गवर्नेंसः चुनौतियां, अवसर और सिफारिशें

सन्दर्भः

हाल के वर्षों में, भारत ने डिजिटल शासन की दिशा में एक महत्वाकांक्षी यात्रा शुरू की है, जिसका उद्देश्य नागरिक सेवाओं को बढ़ाना और सरकारी कर्मचारियों की दक्षता में सुधार करना है। यह परिवर्तन एक महत्वपूर्ण वास्तविकता को रेखांकित करता है। सार्वजनिक सेवा वितरण की सफलता स्वाभाविक रूप से इसके पीछे कार्यबल के कौशल और क्षमताओं से जुड़ी हुई है। महत्वपूर्ण प्रगति के बावजूद यह प्रमुख प्रश्न बना हुआ है कि इस डिजिटल बदलाव की क्षमता को पूरी तरह से साकार करने के लिए और क्या किया जा सकता है?

डिजिटल गवर्नेंस की नींवः

- शासन एक बहुआयामी प्रक्रिया है जिसमें सरकार, गैर-सरकारी संगठन, स्थानीय समुदाय और नागरिक सहित विभिन्न हितधारक भागीदार होते हैं। चाणक्य के अर्थशास्त्र में प्रतिपादित शासन सिद्धांतों ने दक्षिण एशियाई शासन पर गहरा प्रभाव छोड़ा है, जिसमें शासन कला, आर्थिक नीति और नैतिक नेतृत्व पर विशेष बल दिया गया है।
- आधुनिक युग में, सभी स्तरों पर शासन व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए डिजिटल तकनीकों का उपयोग अनिवार्य हो गया है। शासन में शामिल सभी पक्षों के लिए इन तकनीकों का प्रभावी उपयोग सुनिश्चित करने हेतु क्षमता निर्माण अत्यंत महत्वपूर्ण है।

डिजिटल शासन में क्षमता निर्माणः

- डिजिटल शासन व्यवस्था ने सरकारी कार्यप्रणाली में एक क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है। प्रौद्योगिकी के एकीकरण से न केवल संचार और निर्णय लेने की प्रक्रिया अधिक कुशल बनी है, बल्कि पारदर्शिता भी बढ़ी है।
- इससे बिचौलियों की भूमिका में कमी आई है और जनता को सीधे सेवाएं मिलने लगी हैं। बदलते समय के साथ जनता की अपेक्षाएं भी बढ़ रही हैं, जिसके लिए शासन में कार्यरत लोगों को नए कौशल विकसित करने की आवश्यकता है।

प्रमुख पहलः

- **iGOT कर्मयोगी प्लेटफॉर्मः** 2020 में शुरू किया गया यह ऑनलाइन प्रशिक्षण मंच सरकारी अधिकारियों को डेटा विश्लेषण, लोक प्रशासन और डिजिटल तकनीकों से संबंधित आवश्यक कौशल प्रदान करता है। व्यक्तिगतकृत शिक्षण पथों के माध्यम से निरंतर सीखने को प्रोत्साहित किया जाता है, जो कि तेजी से बदलते परिवेश में सफलता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।
- **ई-ऑफिस पहलः** यह पहल सरकारी कार्यप्रवाह को डिजिटल बनाती है, जिससे कागजी कार्रवाई पर निर्भरता काफी कम हो जाती है और परिचालन दक्षता बढ़ जाती है। फाइल प्रबंधन, कार्यप्रवाह और शिकायत निवारण में स्वचालन वास्तविक समय संचार और पारदर्शिता को बढ़ावा देता है।
- **सरकारी ई-मार्केटप्लेस (जीईएम):** जीईएम जैसे प्लेटफॉर्मों के माध्यम से सरकारी खरीद प्रक्रियाओं का डिजिटलीकरण, दक्षता बढ़ाता है और जवाबदेही सुनिश्चित करता है।
- **डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमः** विभिन्न सरकारी कार्यक्रमों का उद्देश्य कर्मचारियों को ई-गवर्नेंस टूल, साइबर सुरक्षा और डिजिटल संचार से परिचित कराना है।

डिजिटल शासन में चुनौतियाँः

इन प्रगतियों के बावजूद, भारत में ई-गवर्नेंस के सफल कार्यान्वयन में कई चुनौतियाँ बाधा डालती हैं। इन्हें निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता हैः

- **डिजिटल अवसंरचनाः**
  - **सीमित ब्रॉडबैंड कनेक्टिविटीः** कई ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों में अभी भी हाई-स्पीड इंटरनेट की सुविधा नहीं है, जिससे ई-गवर्नेंस सेवाएं प्रभावित हो रही हैं।
  - **विद्युत आपूर्ति संबंधी समस्याएंः** ग्रामीण क्षेत्रों में बार-बार बिजली गुल होना और बिजली की अविश्वसनीयता डिजिटल बुनियादी ढांचे की कार्यक्षमता को बाधित करती है।
- **अंतरसंचालनीयताः**
  - **खंडित प्रणालियाँः** विभिन्न सरकारी विभाग ऐसी प्रणालियों का उपयोग करते हैं जोकि हमेशा संगत नहीं होती हैं, जिससे निर्बाध डेटा साझाकरण और समन्वय में बाधा उत्पन्न होती है।
  - **प्रणालियों के साथ एकीकरणः** पुरानी प्रणालियों को आधुनिक प्रौद्योगिकियों के साथ उन्नत करना और एकीकृत करना जटिल और महंगा दोनों है।
- **डेटा सुरक्षा और गोपनीयताः**
  - **साइबर सुरक्षा खतरेः** डिजिटलीकरण बढ़ने से साइबर हमलों और डेटा उल्लंघनों का जोखिम बढ़ जाता है। इसलिए साइबर सुरक्षा उपाय आवश्यक हैं।
  - **डेटा गोपनीयता संबंधी चिंताएंः** व्यापक डेटा संरक्षण कानून का अभाव व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा के बारे में महत्वपूर्ण चिंताएं पैदा करता है।

- **डिजिटल साक्षरता:**
  - » **कम साक्षरता दर और डिजिटल डिवाइड:**
    - ➢ एनएसएसओ डेटा से पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 24% घरों में इंटरनेट की सुविधा है, जबकि शहरी क्षेत्रों में यह 66% है। एनएफएचएस-5 के अनुसार ग्रामीण पुरुषों में इंटरनेट का उपयोग करने की संभावना महिलाओं की तुलना में लगभग दोगुनी है (49% बनाम 25%)।
    - ➢ जीएसएमए मोबाइल जेंडर गैप रिपोर्ट 2024 में बताया गया है कि भारत में महिलाओं के पास मोबाइल फोन होने की संभावना 11% कम है और इंटरनेट का उपयोग करने की संभावना 40% कम है तथा केवल 33% महिलाएं ही मोबाइल इंटरनेट के बारे में जानती हैं।
  - » **प्रशिक्षित सरकारी कर्मचारियों की कमी:** यह सुनिश्चित करना कि सभी सरकारी कर्मचारी ई-गवर्नेंस प्लेटफार्मों के प्रबंधन में कुशल हों, एक सतत चुनौती है।
- **तकनीकी सहायता और रखरखाव:**
  - » **अपर्याप्त तकनीकी सहायता:** कई क्षेत्रों में ई-गवर्नेंस प्रणालियों के रखरखाव और समस्या निवारण के लिए कुशल कर्मियों की कमी है।
  - » **मापनीयता संबंधी मुद्दे:** अगर कोई सिस्टम मापनीय नहीं है तो जैसे-जैसे उसका उपयोग बढ़ता है, उसका प्रदर्शन खराब होने लगता है। जैसे कि एक वेबसाइट धीमी हो जाती है या एक ऐप क्रैश हो जाता है।
- **लागत और वित्तपोषण:**
  - » **उच्च कार्यान्वयन लागत:** डिजिटल बुनियादी ढांचे की स्थापना, प्रणालियों को बनाए रखने और कर्मियों को प्रशिक्षित करने के लिए पर्याप्त निवेश की आवश्यकता होती है।
  - » **उन्नत प्रौद्योगिकियों की लागत:** एआई और ब्लॉकचेन जैसी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों को बड़े पैमाने पर लागू करना महंगा है।
- **उपयोगकर्ता पहुंच और समावेशिता:**
  - » **भाषाई बाधाएँ:** भारत की भाषाई विविधता के कारण बहु-भाषाओं में ई-गवर्नेंस सेवाओं की आवश्यकता है।
  - » **दिव्यांग व्यक्तियों के लिए सुगम्यता:** दिव्यांग उपयोगकर्ताओं के लिए समावेशिता सुनिश्चित करने के लिए अतिरिक्त तकनीकी विचारों की आवश्यकता होती है।

चुनौतियों से निपटने के लिए सिफारिशें:

द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (एआरसी) ने इन चुनौतियों से निपटने के लिए प्रमुख सिफारिशें की हैं:

- **अनुकूल वातावरण का निर्माण:**
  - » सरकार के भीतर परिवर्तन के लिए इच्छाशक्ति पैदा करना।
  - » उच्चतम स्तर पर राजनीतिक समर्थन प्रदान करना।
  - » ई-गवर्नेंस पहल को प्रोत्साहित करना।
  - » परिवर्तन की मांग उत्पन्न करने के लिए जन जागरूकता बढ़ाना।
- **व्यवसाय प्रक्रिया की पुनः अभियांत्रिकी:** प्रक्रियागत, संस्थागत और कानूनी परिवर्तनों द्वारा समर्थित, ई-गवर्नेंस आवश्यकताओं के साथ संरेखित करने के लिए सरकारी प्रक्रियाओं और संरचनाओं को पुनः डिजाइन करना।
- **तकनीकी समाधान विकसित करना:** डिजिटल गवर्नेंस ढांचे को मानकीकृत और अनुकूलित करने के लिए एक राष्ट्रीय ई-गवर्नेंस उद्यम वास्तुकला का निर्माण करना।
- **निगरानी एवं मूल्यांकन:** कार्यान्वयन संगठनों द्वारा ई-गवर्नेंस परियोजनाओं की निरंतर निगरानी सुनिश्चित करना।
- **सार्वजनिक-निजी भागीदारी (पीपीपी):** ई-गवर्नेंस परियोजनाओं के विभिन्न घटकों के लिए पीपीपी मोड का लाभ उठाना।
- **महत्वपूर्ण सूचना अवसंरचना की सुरक्षा:** महत्वपूर्ण अवसंरचना को सुरक्षित करने के लिए रणनीति विकसित करना, जिसमें बेहतर विश्लेषण और सूचना साझाकरण शामिल है।
- **क्षमता निर्माण और ज्ञान प्रबंधन:** शासन पहल को मजबूत करने के लिए ज्ञान प्रबंधन और कौशल विकास के लिए प्रणालियां स्थापित करना।

भारत की डिजिटल गवर्नेंस पहल ने एक मजबूत आधार तैयार किया है, लेकिन इस परिवर्तन की पूरी क्षमता का दोहन करने के लिए अभी भी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। प्रमुख अनुशंसाएँ इस प्रकार हैं:

- **अवसंरचना विकास:** डिजिटल विभाजन को पाटने के लिए, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में डिजिटल अवसंरचना को मजबूत करना।
- **गतिशील प्रशिक्षण कार्यक्रम:** तकनीकी प्रगति के साथ तालमेल बनाए रखने के लिए अनुकूली प्रशिक्षण मॉड्यूल डिजाइन करना।
- **प्रोत्साहन:** नवाचार को बढ़ावा देने और डिजिटल उपकरणों को प्रभावी ढंग से अपनाने वाले व्यक्तियों/संस्थानों को पुरस्कृत करने के लिए एक व्यवस्था बनाना।
- **समावेशी नीतियाँ:** दिव्यांगों और भाषायी रूप से विविध आबादी सहित सभी नागरिकों के लिए पहुँच सुनिश्चित करना।

मजबूत बुनियादी ढांचे, निरंतर क्षमता निर्माण और समावेशी नीतियों के साथ, भारत डिजिटल शासन के लिए एक वैश्विक मानदंड स्थापित कर सकता है और एक ऐसा मॉडल प्राप्त कर सकता है जो सभी के लिए जवाबदेह, पारदर्शी और समावेशी हो।

तदर्थ न्यायाधीश: भारत के न्यायिक लंबित मामलों के लिए समाधान या एक अस्थायी उपाय

भारतीय न्यायपालिका वर्षों से लंबित मामलों की भारी समस्या से जूझ रही है। वर्तमान में, विभिन्न स्तरों की अदालतों में 50 मिलियन से अधिक मामले लंबित हैं, जिससे न्याय में देरी अपवाद के बजाय एक सामान्य स्थिति बन गई है। इस संकट के गंभीर निहितार्थ हैं जनता का न्यायिक प्रणाली में विश्वास कमजोर होना, कानून के शासन का ह्रास और न्याय की समयबद्ध प्राप्ति की अपेक्षा रखने वाले वादियों (Plaintiffs) की पीड़ा में वृद्धि। मामलों के शीघ्र निपटान को सुनिश्चित करने और न्यायिक विशेषज्ञता को बनाए रखने के प्रयास में, तदर्थ (Ad Hoc) न्यायाधीशों की नियुक्ति को एक संभावित समाधान के रूप में देखा जा रहा है। हालाँकि, प्रमुख प्रश्न यह है कि क्या यह न्यायिक सुधार के लिए एक स्थायी और समग्र दृष्टिकोण है या केवल एक अस्थायी समाधान, जोकि प्रणालीगत अक्षमताओं को दूर करने में विफल रहता है?

न्यायिक विलंबता संकट (The Judicial Pendency Crisis):

- भारत की न्यायपालिका में लंबित मामलों की संख्या अत्यधिक है, जो न्यायिक व्यवस्था के सभी स्तरों को प्रभावित कर रही है। राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड (NJDG) के अनुसार, स्थिति अत्यंत चिंताजनक है:
  - » सर्वोच्च न्यायालय में 71,000 से अधिक मामले लंबित हैं।
  - » उच्च न्यायालयों पर लगभग 6 मिलियन मामलों का बोझ है।
  - » अधीनस्थ न्यायालयों को सबसे गंभीर संकट का सामना करना पड़ रहा है, जहाँ 41 मिलियन से अधिक मामले निर्णय की प्रतीक्षा में हैं।
- इस संकट में कई कारक योगदान करते हैं, जिनमें प्रक्रियागत देरी, अत्यधिक स्थगन (Frequent Adjournments), और कानूनी विवादों की बढ़ती जटिलता शामिल हैं। हालाँकि, सबसे गंभीर समस्या न्यायाधीशों की भारी कमी है। भारत के विधि आयोग के अनुसार, देश में प्रति मिलियन जनसंख्या पर मात्र 21 न्यायाधीश उपलब्ध हैं, जो विकसित देशों की तुलना में अत्यंत कम है।
- विभिन्न सरकारों ने न्यायिक रिक्तियों को समय पर भरने के लिए संघर्ष किया है, जिससे न्याय प्रक्रिया बाधित हुई है। इस संदर्भ में, तदर्थ (Ad Hoc) न्यायाधीशों की नियुक्ति को न्यायिक संकट को कम करने के लिए एक व्यावहारिक समाधान के रूप में देखा जा रहा है।

तदर्थ न्यायाधीश: संवैधानिक समर्थन और नियुक्ति प्रक्रिया:

- भारतीय संविधान का अनुच्छेद 224A तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति का प्रावधान करता है। यह अनुच्छेद सेवानिवृत्त उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को अस्थायी रूप से सेवा देने की अनुमति देता है, जिससे न्यायिक लंबित मामलों को निपटाने में सहायता मिलती है। हालाँकि, इन न्यायाधीशों की भूमिका स्थायी न होकर पूरक होती है, फिर भी वे वर्षों से लंबित मामलों के शीघ्र समाधान में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। नियुक्ति की प्रक्रिया कई स्तरों में होती है:
  - » उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश (CJHC) लंबित मामलों की तात्कालिकता के आधार पर एक सेवानिवृत्त न्यायाधीश की सिफारिश करते हैं।
  - » राज्य सरकार (मुख्यमंत्री और राज्यपाल) प्रस्ताव की समीक्षा करती है और उसे आगे बढ़ाती है।
  - » केंद्रीय कानून मंत्रालय, प्रस्ताव को प्रधानमंत्री के समक्ष प्रस्तुत करने से पहले भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) से परामर्श करता है।
  - » भारत के राष्ट्रपति अंतिम स्वीकृति प्रदान करते हैं।
  - » राजपत्र अधिसूचना (Gazette Notification) के माध्यम से नियुक्ति को औपचारिक रूप से पुष्टि की जाती है।
- हालाँकि यह प्रक्रिया नियुक्तियों की पारदर्शिता और निगरानी सुनिश्चित करती है तथा मनमाने चयन को रोकती है, लेकिन इसमें नौकरशाही की देरी भी शामिल होती है। न्यायिक संकट की तात्कालिकता को देखते हुए, तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति को अधिक प्रभावी बनाने के लिए एक सुव्यवस्थित और त्वरित तंत्र की आवश्यकता है।

तदर्थ नियुक्तियों पर सुप्रीम कोर्ट का बदलता रुख:

- सर्वोच्च न्यायालय ने तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति को विनियमित करने और उनकी प्रभावशीलता सुनिश्चित करने में सक्रिय भूमिका निभाई है। लोक प्रहरी बनाम भारत संघ (2021) मामले में, न्यायालय ने तदर्थ नियुक्तियों के लिए स्पष्ट 'ट्रिगर पॉइंट' निर्धारित किए:
  - » यदि रिक्तियां स्वीकृत संख्या के 20% से अधिक हों।
  - » यदि 10% से अधिक मामले पांच वर्ष से अधिक समय से लंबित हों।
  - » यदि मामलों के निपटान की दर, दाखिल किए जाने की दर से कम हो।
- हालाँकि, जनवरी 2025 में, सुप्रीम कोर्ट ने आपराधिक मामलों की बढ़ती संख्या को देखते हुए इन शर्तों में संशोधन किया। मुख्य न्यायाधीश संजीव खन्ना की अध्यक्षता वाली पीठ ने नए निर्देश प्रस्तुत किए:
  - » तदर्थ न्यायाधीश मुख्य रूप से आपराधिक अपीलों पर ध्यान केंद्रित करेंगे।
  - » वे न्यायिक निगरानी सुनिश्चित करने के लिए स्थायी

न्यायाधीशों के साथ बैठेंगे।
- » 20% रिक्ति की सीमा में ढील दी गई, जिससे अधिक व्यापक नियुक्तियां संभव हो सकीं।
- » तदर्थ न्यायाधीशों की संख्या उच्च न्यायालय की स्वीकृत संख्या के 10% तक सीमित होगी।

- ये संशोधन न्यायपालिका द्वारा कार्यकुशलता और संस्थागत अखंडता बनाए रखने के बीच संतुलन स्थापित करने के प्रयास को दर्शाते हैं।

तदर्थ न्यायाधीशों की भूमिका, लाभ और व्यावहारिक पहलू:

तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति के कई लाभ हैं, जो उन्हें न्यायिक संकट के समाधान के लिए एक व्यवहार्य अल्पकालिक उपाय बनाते हैं:

- **विशेषज्ञता और दक्षता:** सेवानिवृत्त न्यायाधीशों के पास व्यापक कानूनी अनुभव होता है, जिससे वे जटिल मामलों को अधिक दक्षता और त्वरित निर्णय क्षमता के साथ निपटाने में सक्षम होते हैं।
- **लागत-प्रभावशीलता:** नए न्यायाधीशों की भर्ती और प्रशिक्षण की लंबी प्रक्रिया के विपरीत, तदर्थ नियुक्तियाँ समय और वित्तीय संसाधनों दोनों की बचत करती हैं।
- **लंबित मामलों में तत्काल कमी:** लंबे समय से लंबित मामलों पर ध्यान केंद्रित करके, तदर्थ न्यायाधीश अत्यधिक बोझ से दबी न्यायपालिका को तात्कालिक राहत प्रदान करते हैं।
- **लचीली तैनाती:** यह प्रणाली सेवानिवृत्त न्यायाधीशों को आवश्यकतानुसार बुलाने की अनुमति देती है, जिससे न्यायिक पदों के स्थायी विस्तार की आवश्यकता कम हो जाती है।

अस्थायी राहत या दीर्घकालिक निर्भरता:

अपने लाभों के बावजूद, तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति कोई स्थायी समाधान नहीं है। इससे जुड़ी कुछ प्रमुख चिंताएँ इस प्रकार हैं:

- **न्यायिक स्वतंत्रता पर खतरा:** चूँकि तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति में कार्यपालिका की भूमिका होती है, इसलिए राजनीतिक हस्तक्षेप की संभावना बनी रहती है।
- **निरंतरता संबंधी मुद्दे:** अस्थायी न्यायाधीश पूरे मुकदमे की देखरेख नहीं कर पाते, जिससे निर्णयों में असंगति (Inconsistency) आ सकती है।
- **संरचनात्मक सुधारों में देरी:** तदर्थ न्यायाधीशों पर अत्यधिक निर्भरता सरकार पर स्थायी न्यायिक रिक्तियों को भरने के दबाव को कम कर सकती है।
- **संसाधन संबंधी बाधाएँ:** तदर्थ न्यायाधीशों के लिए आवश्यक अतिरिक्त भत्ते और प्रशासनिक सहायता, दीर्घकालिक न्यायिक अवसंरचना के विकास के लिए आवंटित धन को प्रभावित कर सकते हैं।

एक राष्ट्र, एक विधायी मंच

चर्चा में क्यों?

हाल ही में पटना, बिहार में आयोजित 85वें अखिल भारतीय पीठासीन अधिकारियों के सम्मेलन (AIPOC) में भारत के विधायी निकायों के कामकाज में सुधार की आवश्यकता पर जोर दिया गया। सम्मेलन का एक प्रमुख उद्घोषणा 'एक राष्ट्र, एक विधायी मंच' थी, जो भारत के सभी विधायी निकायों को एक डिजिटल प्लेटफॉर्म पर एकीकृत करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस पहल का उद्देश्य केवल विधायी प्रक्रियाओं को आधुनिक और सुगम बनाना नहीं, बल्कि शासन में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देना भी है।

एक राष्ट्र, एक विधायी मंच के बारे में:

- एक राष्ट्र, एक विधायी मंच भारत की संसद, राज्य विधानसभाओं और स्थानीय निकायों को एक सुसंगत डिजिटल ढांचे में एकीकृत करने के लिए डिजाइन की गई एक अग्रणी पहल है।
- इस मंच का उद्देश्य वास्तविक समय में डेटा साझा करने, पारदर्शिता को बढ़ावा देने और विधायी प्रक्रियाओं में अधिक से अधिक सार्वजनिक भागीदारी को प्रोत्साहित करके विधायी संचालन को सुव्यवस्थित करना है।

मंच के मुख्य उद्देश्य:

- **वास्तविक समय में विधायी डेटा साझा करना:** यह मंच विधायी कार्यवाही, विधेयकों और बहसों को निर्बाध रूप से साझा करने की अनुमति देगा, विभिन्न निकायों में महत्वपूर्ण विधायी डेटा तक तत्काल पहुँच प्रदान करेगा, यह सुनिश्चित करेगा कि नागरिक और कानून निर्माताओं को अच्छी तरह से सूचना प्राप्त हो।
- **बेहतर पारदर्शिता और जवाबदेही:** विधायी गतिविधियों पर रियल टाइम अपडेट के साथ, प्लेटफॉर्म विधायी कार्य की पारदर्शिता में सुधार करेगा, जिससे जनता बहस और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं की निगरानी कर सकेगी, जिससे अधिक जवाबदेही होगी।
- **सार्वजनिक भागीदारी:** विधायी जानकारी को अधिक सुलभ बनाकर, प्लेटफॉर्म नागरिकों को शासन में अधिक सीधे तौर पर शामिल करेगा। यह बढ़ी हुई पहुँच लोकतांत्रिक गतिविधियों में सार्वजनिक भागीदारी को प्रोत्साहित करती है, जिससे लोकतांत्रिक प्रक्रियाएँ मजबूत होती हैं।
- **AI और प्रौद्योगिकी एकीकरण:** प्लेटफॉर्म विधायी कार्यों को अनुकूलित करने, डेटा का विश्लेषण करने और निर्णय लेने को कारगर बनाने के लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का उपयोग करेगा, यह सुनिश्चित करते हुए कि विधायी प्रक्रियाएँ अधिक कुशल और डेटा-संचालित हों।
- **कागज रहित विधानमंडल:** प्लेटफॉर्म विधायी रिकॉर्ड को डिजिटल करेगा, भौतिक दस्तावेजीकरण पर निर्भरता को कम करेगा और पर्यावरण के अनुकूल, कागज रहित संचालन के माध्यम से स्थिरता को बढ़ावा देगा।

अखिल भारतीय पीठासीन अधिकारी सम्मेलन (AIPOC) के बारे में:

- 1921 में स्थापित, AIPOC भारत के विधायी निकायों के पीठासीन अधिकारियों को एक मंच पर साथ लाता है।
- इस वर्ष का सम्मेलन विधायी शिष्टाचार में सुधार, भारतीय संविधान की 75वीं वर्षगांठ मनाने और डिजिटलीकरण पहल को आगे बढ़ाने पर केंद्रित था।

आरजी कर रेप केस पर निर्णय

चर्चा में क्यों?

हाल ही में कोलकाता के आरजी कर मेडिकल कॉलेज में एक डॉक्टर के साथ बलात्कार और हत्या के मामले में दोषी संजय रॉय को सत्र अदालत ने आजीवन कारावास की सजा सुनाई है। सीबीआई द्वारा मौत की सजा की मांग और जनता के विरोध के बावजूद, अदालत ने सर्वोच्च न्यायालय के उस सिद्धांत का पालन किया कि मौत की सजा केवल 'दुर्लभ से दुर्लभतम' (rarest of rare) मामलों में ही दी जा सकती है।

'दुर्लभ से दुर्लभतम' (rarest of rare) सिद्धांत:

- 1980 के बच्चन सिंह मामले ने दुर्लभतम दुर्लभ सिद्धांत की स्थापना की, जोकि मौत की सजा के आवेदन को सीमित करता है। इसे केवल तभी लगाया जा सकता है जब:
  - » अपराध समाज की सामूहिक चेतना को झकझोर दे।
  - » अपराधी सुधार के लायक न हो और समाज के लिए खतरा बना हुआ है।
- मौत की सजा के लिए कुछ अन्य परिस्थितियां भी हो सकती हैं, जैसे:
  - » **पूर्व नियोजित और क्रूरता:** यदि हत्या पूर्व नियोजित और अत्यधिक क्रूरतापूर्ण थी।
  - » **असाधारण दुष्टता:** यदि अपराध असाधारण क्रूरता प्रदर्शित करता है।
  - » **सार्वजनिक सेवकों की हत्या:** यदि हत्या में किसी सार्वजनिक सेवक, पुलिस अधिकारी या कर्तव्य पर तैनात सशस्त्र बल के सदस्य शामिल थे।

मौत की सजा को कमजोर करने वाले कारक:

- **मानसिक या भावनात्मक विकार:** अपराधी अत्यधिक मानसिक या भावनात्मक तनाव में था।
- **आरोपी की आयु:** युवा या बुजुर्ग अपराधियों में सुधार की अधिक संभावना हो सकती है।
- **किसी व्यक्ति के निर्देशन में अपराध:** यदि अपराधी किसी के निर्देशन में कार्य करता है या नैतिक औचित्य था।
- **मानसिक दुर्बलता:** अपराधी मानसिक बीमारी के कारण अपने कार्यों की आपराधिकता को समझने में असमर्थ था।

कानूनी उदाहरणों का क्रम:

- **युवा अपराधियों में सुधार की संभावना:** रामनरेश बनाम छत्तीसगढ़ राज्य (2012) जैसे मामलों में युवा अपराधियों को सुधार की अधिक संभावना के रूप में मान्यता दी गई।
- **आयु पर असमान विचार:** विधि आयोग की 262वीं रिपोर्ट (2015) में कहा गया है कि सजा देते समय आयु को एक समान मानदंड के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए।
- **समान अपराधों की तुलना:** शंकर किसनराव खाड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य (2013) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि समान अपराधों के लिए सजा भी समान होनी चाहिए, ताकि न्यायपालिका में एकरूपता बनी रहे।

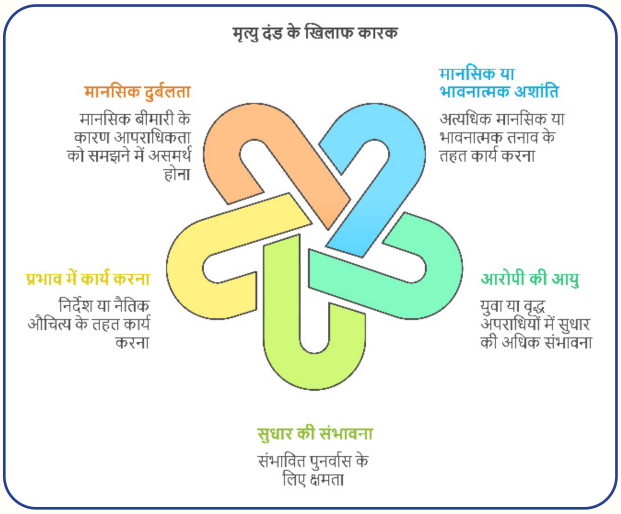

सजा में चुनौतियाँ और असंगतियाँ:

बच्चन सिंह दिशानिर्देशों के बावजूद, मौत की सजा का आवेदन असंगत बना हुआ है:

- **निवारक (Mitigating) कारकों में असंतुलन:** अपराध के समय की गई कार्रवाइयों को अधिक महत्व दिया जाता है, जबकि अपराधी के व्यक्तित्व और परिस्थितियों (शमनकारी कारक) को कम महत्व दिया जाता है।
- **सजा सुनाने से पूर्व मुद्दा:** दत्तात्रय बनाम महाराष्ट्र राज्य (2020) के मामले में, क्योंकि दोषी को सजा सुनाने से पहले पर्याप्त सुनवाई का मौका नहीं दिया गया था, इसलिए अदालत ने मौत की सजा को घटाकर आजीवन कारावास कर दिया। अदालत ने इस पर सवाल उठाया कि क्या एक ही दिन में सजा सुनाने से न्यायपूर्ण सुनवाई सुनिश्चित होती है।
- **एक समान दिशानिर्देशों की आवश्यकता:** सर्वोच्च न्यायालय ने मौत की सजा के मामलों में निवारक कारकों पर विचार करने के लिए समान दिशानिर्देश स्थापित करने के लिए मामले को एक बड़ी पीठ के समक्ष भेजा है।

भारत में मौत की सजा एक जटिल कानूनी मुद्दा है। दुर्लभ से दुर्लभतम सिद्धांत सुनिश्चित करता है कि मौत की सजा केवल अत्यंत गंभीर अपराधों में ही दी जाए। हालाँकि, सजा सुनाते समय अपराध की गंभीरता और अपराधी के व्यक्तिगत हालात पर विचार

करने में अक्सर विरोधाभास देखने को मिलते हैं। नतीजतन, न्यायिक प्रक्रिया में निष्पक्षता के सवाल उठते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने मौत की सजा के मामलों में एकरूपता लाने के लिए प्रयास किए हैं, ताकि इस सजा को देने के लिए स्पष्ट मानदंड स्थापित किए जा सकें।

श्रीलंका तमिल शरणार्थी मामला

चर्चा में क्यों?

हाल ही में मद्रास उच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसला सुनाते हुए भारतीय गृह मंत्रालय को निर्देश दिया है कि वह 1984 से भारत में शरणार्थी के रूप में रह रही श्रीलंकाई तमिल नागरिक, मैथीन के नागरिकता आवेदन पर पुनर्विचार करे। मैथीन ने 2022 में नागरिकता अधिनियम की धारा 5(1)(ए) के तहत भारतीय नागरिकता के लिए आवेदन किया था, लेकिन उनके आवेदन पर कोई कार्रवाई नहीं की गई थी। यह फैसला भारत में रह रहे शरणार्थियों, विशेषकर श्रीलंकाई तमिलों, के नागरिकता अधिकारों की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है और यह भी दर्शाता है कि न्यायपालिका शरणार्थियों के मुद्दों को गंभीरता से ले रही है।

पंजीकरण द्वारा नागरिकता के बारे में:

- नागरिकता अधिनियम, 1955 कुछ व्यक्तियों के लिए पंजीकरण द्वारा नागरिकता के प्रावधान प्रदान करता है।
- पंजीकरण के लिए पात्र प्रमुख श्रेणियां हैं:
  - **भारतीय मूल के व्यक्ति:** आवेदन करने से पहले कम से कम सात वर्षों तक भारत में रहे हों।
  - **भारतीय नागरिक से विवाहित विदेशी व्यक्ति:** आवेदन करने से पहले सात वर्षों तक भारत में रहे हों।
  - **वयस्क व्यक्ति:** माता-पिता भारतीय नागरिक होने चाहिए, या आवेदक को पांच वर्षों के लिए ओसीआई कार्डधारक के रूप में पंजीकृत होना चाहिए और आवेदन करने से पहले बारह महीने तक भारत में रहना चाहिए।
  - **नाबालिग बच्चे:** माता-पिता भारतीय नागरिक होने चाहिए।
- भारतीय नागरिकता प्राप्त करने की प्रक्रिया में व्यक्ति को भारत के प्रति निष्ठा की शपथ लेनी अनिवार्य है। साथ ही, जो व्यक्ति पहले भारतीय नागरिक थे लेकिन किसी कारणवश अपनी नागरिकता खो चुके हैं, वे पुनः नागरिकता के लिए आवेदन नहीं कर सकते हैं।

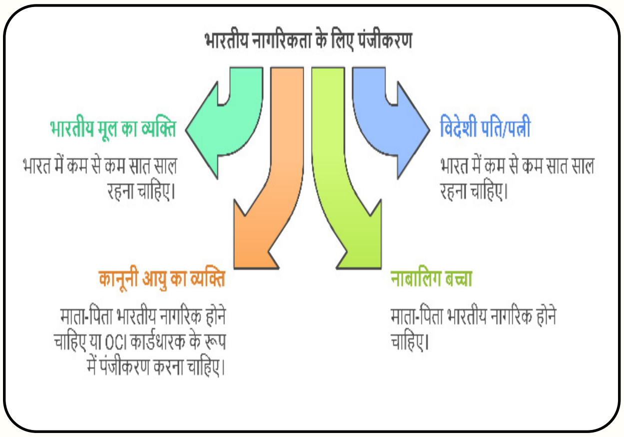

श्रीलंकाई तमिलों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि:

- **बागान मजदूरों के रूप में:** 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में ब्रिटिशों द्वारा भारतीय मूल के तमिलों को श्रमिकों के रूप में श्रीलंका लाया गया था। भेदभावपूर्ण औपनिवेशिक नीतियों के कारण उन्हें मूल श्रीलंकाई समुदायों से सामाजिक रूप से अलग-थलग कर दिया गया था।
- **नागरिकता से वंचित और निराश्रित आबादी:** 1948 में श्रीलंका की स्वतंत्रता के बाद, बढ़ते सिंहली राष्ट्रवाद के कारण भारतीय मूल के तमिलों का हाशियाकरण हुआ। 1960 तक, लगभग दस लाख तमिल राजनीतिक अधिकारों या मान्यता के बिना निराश्रित हो गए थे।
- **द्विपक्षीय समझौते और नागरिकता का अनुदान:** सीरीमावो-शास्त्री समझौता (1964) और सीरीमावो-गांधी समझौता (1974) ने छह लाख भारतीय मूल के तमिलों को नागरिकता प्रदान की।
- **गृहयुद्ध और शरणार्थी संकट:** श्रीलंकाई गृहयुद्ध के कारण कई तमिलों ने भारत में शरण ली, जिसके कारण 1983 में सरकार द्वारा उस वर्ष के बाद आने वाले शरणार्थियों को नागरिकता देने पर रोक लगा दी गई।
- **सीएए 2003 के तहत अवैध प्रवासियों के रूप में वर्गीकृत:** 1983 के बाद आने वालों को नागरिकता संशोधन अधिनियम (CAA) 2003 के तहत 'अवैध प्रवासी' माना गया, जिससे उनकी निराश्रितता और बढ़ गई।

कानूनी उपाय:

- **निराश्रितता के लिए कानूनी दृष्टिकोण:** हालिया न्यायिक फैसलों ने भारतीय मूल के तमिलों की निराश्रितता की समस्या को समाप्त करने में मार्गदर्शन प्रदान किया है।
- **प्रमुख कानूनी निर्णय:**
  - **पी. उलगनाथन बनाम भारत सरकार (2019):** मद्रास उच्च न्यायालय ने फैसला सुनाया कि लंबे समय तक निराश्रित रहना संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है, जो जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देता है।
  - **अबीरमी एस बनाम भारत संघ (2022):** अदालत ने

जोर देकर कहा कि निराश्रितता (Deprivation) से बचा जाना चाहिए और श्रीलंकाई तमिल शरणार्थियों के लिए सीएए 2019 के प्रावधानों का विस्तार करने की सिफारिश की।

» **सुप्रीम कोर्ट का मामला:** सी.आर. ऑफ सी.ए.पी. बनाम अरुणाचल प्रदेश राज्य (2015): 1964 और 1974 के समझौतों के तहत की गई प्रतिबद्धताओं ने भारतीय मूल के तमिलों में नागरिकता प्राप्त करने की उम्मीद जगाई थी।

- **बाध्यकारी अंतर्राष्ट्रीय प्रथागत कानून:** कानूनी तरीके से राज्यविहीन (De jure stateless) व्यक्तियों को अंतरराष्ट्रीय कानून द्वारा मान्यता प्राप्त है, जो देशों को उन व्यक्तियों की समस्याओं का समाधान करने की जिम्मेदारी सौंपता है, जो नीतिगत विफलताओं के कारण नागरिकता से वंचित हो जाते हैं। इस संदर्भ में भारतीय मूल के तमिलों का उदाहरण देखा जा सकता है, जिनकी नागरिकता का मुद्दा नीतिगत असफलताओं के कारण उत्पन्न हुआ।

आत्महत्या के लिए उकसाने के आरोपों पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला

चर्चा में क्यों?

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने एक महत्वपूर्ण फैसला सुनाते हुए कहा है कि आत्महत्या के लिए उकसाने के आरोपों को सिर्फ इसलिए नहीं लगाया जाना चाहिए कि कोई परिवार शोक में है। अदालत ने कहा है कि ऐसे मामलों में जांच एजेंसियों और न्यायालयों को बहुत सावधानी से सबूतों का मूल्यांकन करना चाहिए।

मामले की पृष्ठभूमि:

- मध्य प्रदेश के एक बैंक मैनेजर, महेंद्र अवसे पर ऋण पुनर्भुगतान को लेकर उत्पीड़न का आरोप लगाते हुए आत्महत्या करने वाले रणजीत सिंह ने आत्महत्या के लिए उकसाने का आरोप लगाया गया था।
- अदालत ने स्पष्ट किया कि IPC की धारा 306 लागू होने के लिए आत्महत्या के लिए उकसाने, साजिश रचने या सहायता करने के स्पष्ट सबूत होने चाहिए।
- अदालत ने यह भी कहा कि तनावपूर्ण स्थितियों में होने वाली सामान्य बातचीत को आत्महत्या के लिए उकसाने के रूप में नहीं माना जा सकता है।
- अदालत ने महेंद्र अवसे के खिलाफ आरोपों को खारिज करते हुए कहा कि सबूत अपर्याप्त थे और एफआईआर देरी से दर्ज की गई थी। अदालत ने यह भी कहा कि ऐसे संवेदनशील मामलों में व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना महत्वपूर्ण है।

फैसले का निहितार्थ:

- इस फैसले ने आत्महत्या के मामलों में अधिक सावधानी और सूझ-बूझ से जांच करने की आवश्यकता पर बल दिया है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि आत्महत्या के लिए उकसाने का आरोप केवल ठोस सबूतों के आधार पर ही लगाया जाए, न कि केवल भावनात्मक प्रतिक्रियाओं के आधार पर।
- अदालत का यह निर्णय आत्महत्या से संबंधित मामलों में अधिक पारदर्शी और निष्पक्ष कानूनी प्रक्रिया की ओर एक महत्वपूर्ण कदम है।

आत्महत्या की दुष्प्रेरणा (Abetment):

- किसी व्यक्ति को जानबूझकर आत्महत्या करने के लिए उकसाना, उसके साथ साजिश रचना या उसकी सहायता करना आत्महत्या का दुष्प्रेरणा कहलाता है। भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 306 के तहत, यह एक गंभीर अपराध है, जिसके लिए 10 साल तक की कैद और जुर्माना हो सकता है।
- भारतीय न्याय संहिता (BNS) की धारा 45 में दुष्प्रेरणा को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:
  - » किसी को आत्महत्या करने के लिए उकसाना।
  - » ऐसा करने के लिए दूसरों के साथ साजिश रचना।
  - » जानबूझकर इस कार्य में सहायता करना।
  - » सार्वजनिक अपमान के कारण झूठे आरोप लगाना।

आत्महत्या के दुष्प्रेरणा से संबंधित सुप्रीम कोर्ट के महत्वपूर्ण मामले:

- **मोहन बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2011):** अदालत ने निर्णय दिया कि आत्महत्या के लिए उकसाने के अपराध में यह साबित करना आवश्यक है कि आरोपी ने पीड़ित को जानबूझकर आत्महत्या करने के लिए उकसाया और पीड़ित के पास कोई अन्य विकल्प नहीं बचा था।
- **उडे सिंह बनाम हरियाणा राज्य (2019):** अदालत ने स्पष्ट किया कि आत्महत्या के लिए उकसाने के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पीड़ित को आत्महत्या करने के लिए मजबूर करने का सबूत होना चाहिए।

आत्महत्या रोकथाम के लिए सरकारी पहल:

- **मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम (MHA), 2017:** मानसिक स्वास्थ्य देखभाल और उपचार के लिए एक ढांचा प्रदान करता है।
- **किरण हेल्पलाइन:** मानसिक स्वास्थ्य सहायता के लिए एक टोल-फ्री हेल्पलाइन।
- **मनोदर्पण पहल:** छात्रों और शिक्षकों को मनोवैज्ञानिक सहायता प्रदान करता है।
- **राष्ट्रीय आत्महत्या रोकथाम रणनीति (2022):** भारत में आत्महत्याओं को कम करने और मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं में सुधार करने की रणनीति।

समलैंगिक विवाह

चर्चा में क्यों?

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने समलैंगिक विवाहों को

कानूनी मान्यता देने संबंधी याचिकाओं को खारिज कर दिया है। न्यायमूर्ति बी आर गवई, सूर्यकांत, बी वी नागरत्न, पी एस नरसिम्हा और दिपांकर दत्ता की पीठ ने न्यायमूर्ति (सेवानिवृत्त) एस रवींद्र भट के द्वारा लिखित निर्णय को पूर्णतः समर्थन दिया।

2023 का समलैंगिक विवाह पर फैसला:

- सर्वोच्च न्यायालय ने वर्ष 2023 में दिए गए अपने निर्णय में विशेष विवाह अधिनियम, 1954 में संशोधन करने की याचिका खारिज कर दी थी। अदालत का मानना है कि संविधान में विवाह को एक असीमित अधिकार के रूप में नहीं देखा जा सकता है और समलैंगिक जोड़े विवाह को एक मौलिक अधिकार के रूप में दावा नहीं कर सकते। अतः, अदालत ने समलैंगिक विवाह को वैध बनाने का दायित्व संसद पर छोड़ दिया है।

समलैंगिक विवाह के बारे में:

- समलैंगिक विवाह समान लिंग के व्यक्तियों के बीच विवाह की कानूनी और सामाजिक मान्यता को संदर्भित करता है। इसमें दो समान लिंग के व्यक्ति एक-दूसरे से विवाह करते हैं, ठीक उसी तरह जैसे विपरीत लिंग के जोड़े करते हैं। इस विवाह में दोनों पक्षों को समान कानूनी अधिकार और जिम्मेदारी प्राप्त होती हैं।

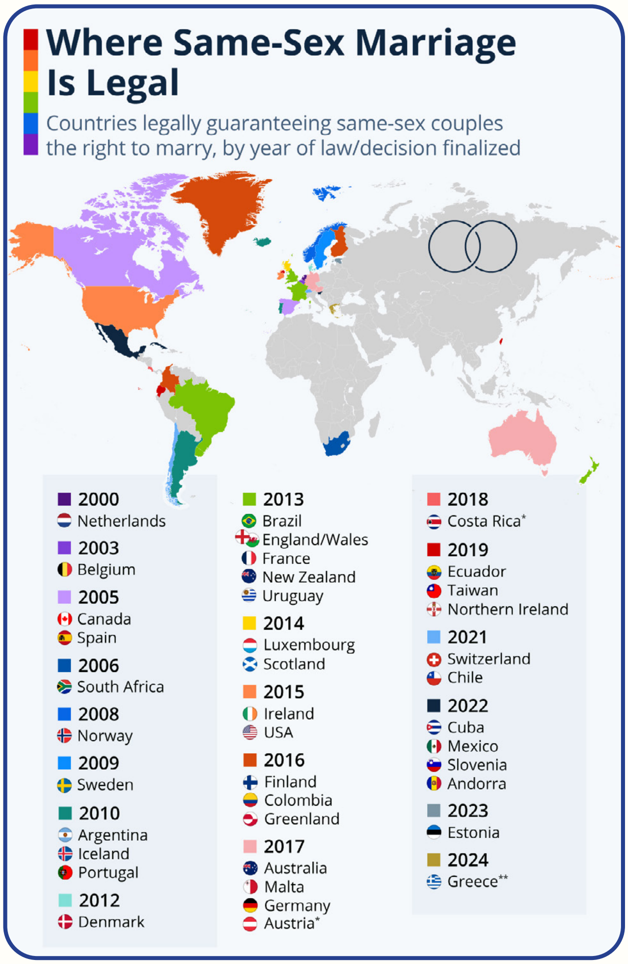

भारत में समलैंगिक विवाह की वैधता:

- भारत में, विवाह को संविधान के तहत एक मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता नहीं दी गई है, लेकिन इसे एक वैधानिक अधिकार माना जाता है। इसका अर्थ है कि विवाह के अधिकार को संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, बल्कि यह विभिन्न कानूनों और न्यायिक निर्णयों के माध्यम से विकसित हुआ है।
- हालांकि, विशेष विवाह अधिनियम, 1954, धर्म की परवाह किए बिना नागरिक विवाहों के लिए एक कानूनी ढांचा प्रदान करता है, अदालत ने अभी तक इसे समलैंगिक विवाहों तक नहीं बढ़ाया है, इस बात पर जोर देते हुए कि विवाह एक पूर्ण संवैधानिक अधिकार नहीं है।
- समलैंगिक जोड़ों को वर्तमान में समान कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं है और यह संसद पर निर्भर करता है कि वह विशेष विवाह अधिनियम जैसे कानूनों में संशोधन करके समलैंगिक संघों को समायोजित करे।
- हालांकि, नवंबर 2018 में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 377 के कुछ हिस्सों को रद्द करके समलैंगिकता को अपराधमुक्त कर दिया, जोकि वयस्कों के बीच सहमति से होने वाले समलैंगिक कृत्यों को दंडित करता था।
- इस फैसले में माना गया कि इस तरह के प्रावधान LGBTQ समुदाय के मौलिक अधिकारों, विशेष रूप से समानता, गोपनीयता और स्वतंत्रता के अधिकारों का उल्लंघन करते हैं।
- इसने पुष्टि की है कि LGBTQ व्यक्तियों के अधिकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, 19 और 21 के तहत सुरक्षित हैं, जोकि समानता, गैर-भेदभाव, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देते हैं।

भारत में समलैंगिक विवाह का भविष्य:

- हालांकि सर्वोच्च न्यायालय ने पुनर्विचार याचिका खारिज कर दी है, फिर भी LGBTQ+ समुदाय और उनके समर्थक लगातार संसद पर दबाव बना रहे हैं कि वह समलैंगिक विवाह को कानूनी मान्यता देने वाला कानून बनाए। अब यह संसद पर निर्भर करता है कि वह मौजूदा कानूनों में संशोधन करके भारत में समलैंगिक संघों को मान्यता देने के लिए आवश्यक कानूनी ढांचा प्रदान करे।

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण नियम 2025 मसौदा

चर्चा में क्यों?

हाल ही में इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeitY) ने डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण (DPDP) नियम, 2025 के मसौदे को जारी किया है। यह अगस्त 2023 में अधिनियमित डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम (DPDPA) को लागू करने की दिशा में एक

महत्वपूर्ण कदम है।

मसौदा नियमों की मुख्य विशेषताएं:

- **डेटा फिड्युसरी की जवाबदेही:** डेटा फिड्युसरी (वह संस्था या व्यक्ति है जो व्यक्तिगत डेटा को एकत्रित करता है) को उपयोगकर्ताओं को उनके द्वारा एकत्रित किए जा रहे डेटा, उसके संग्रह के उद्देश्य के बारे में सूचित करना चाहिए और डेटा प्रोसेसिंग के लिए सूचित सहमति देने के तरीके के बारे में स्पष्ट विवरण प्रदान करना चाहिए।
- **सहमति प्रबंधकों का पंजीकरण:** नियम डेटा फिड्युसरी के साथ काम करने के लिए 'सहमति प्रबंधकों' के पंजीकरण की अनुमति देते हैं। ये संस्थाएँ यह सुनिश्चित करने में मदद करेंगी कि व्यक्तिगत डेटा को प्रोसेसिंग करने के लिए उपयोगकर्ता की सहमति एक प्रारूप में एकत्र की जाए।
- **सरकारी उपयोग हेतु नियमों से छूट:** सरकार कुछ मानकों के अधीन सब्सिडी या लाभ प्रदान करने के लिए व्यक्तिगत डेटा एकत्र कर सकती है। 'सांख्यिकीय' उद्देश्यों के लिए एकत्र किए गए डेटा को इन आवश्यकताओं से छूट दी गई है।
- **बेहतर सुरक्षा उपाय:** डेटा फिड्युसरी को व्यक्तिगत डेटा की सुरक्षा के लिए तकनीकी और परिचालन दोनों तरह के उचित सुरक्षा उपाय करने चाहिए। डेटा उल्लंघन की स्थिति में, डेटा प्रोटेक्शन बोर्ड ऑफ इंडिया (DPBI) को 72 घंटों के भीतर सूचित किया जाना चाहिए।
- **निष्क्रिय उपयोगकर्ताओं का डेटा हटाना:** यदि कोई उपयोगकर्ता किसी प्लेटफॉर्म (जैसे ई-कॉमर्स साइट, सोशल मीडिया या ऑनलाइन गेमिंग) पर निष्क्रिय है,तो उनके डेटा को 48 घंटे की नोटिस अवधि के बाद हटा दिया जाना चाहिए।
- **डेटा सुरक्षा अधिकारी से संपर्क हेतु जानकारी:** डेटा फिड्युसरी को अपनी वेबसाइट पर डेटा सुरक्षा अधिकारी से संपर्क हेतु जानकारी प्रदान करनी चाहिए, विशेष रूप से महत्वपूर्ण डेटा फिड्युसरी के लिए जिन्हें समय-समय पर डेटा सुरक्षा प्रभाव आकलन और ऑडिट करने की आवश्यकता होती है।
- **बच्चों का डेटा:** नियम इस बात पर जोर देते हैं कि बच्चों के व्यक्तिगत डेटा को माता-पिता की सहमति के बिना संसाधित (Processing) नहीं किया जाना चाहिए। डिजिटल लॉकर सेवा जैसे किसी विश्वसनीय प्राधिकरण द्वारा प्रदान की गई पहचान और आयु विवरण का उपयोग करके सहमति एकत्र की जा सकती है।
- **विदेश में डेटा प्रोसेसिंग:** नियमों में कहा गया है कि भारत के बाहर डेटा प्रोसेसिंग नियमों के अधीन है, जिसे सरकार आदेशों के माध्यम से लागू कर सकती है।

डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023 के बारे में:

- डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, 2023 (DPDP अधिनियम) को 11 अगस्त, 2023 को अधिनियमित किया गया था। यह सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 43A और सूचना प्रौद्योगिकी नियम, 2011 का स्थान लेता है। डिजिटल व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम (DPDPA) उस डेटा पर लागू होता है जिसे डिजिटल रूप से संसाधित किया जाता है। इसमें एनालॉग तरीके से संभाले जाने वाले डेटा को शामिल नहीं किया जाता है।
- इसका उद्देश्य संगठनों द्वारा व्यक्तिगत डेटा के जिम्मेदार उपयोग के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हुए व्यक्तियों के गोपनीयता अधिकारों की रक्षा करना है। यह अधिनियम वर्षों की चर्चाओं और संशोधनों के बाद आया, जिसकी शुरुआत 2011 में दिल्ली उच्च न्यायालय के पूर्व मुख्य न्यायाधीश एपी शाह की अध्यक्षता में एक उच्च-स्तरीय विशेषज्ञ समूह द्वारा की गई सिफारिशों से हुई थी।

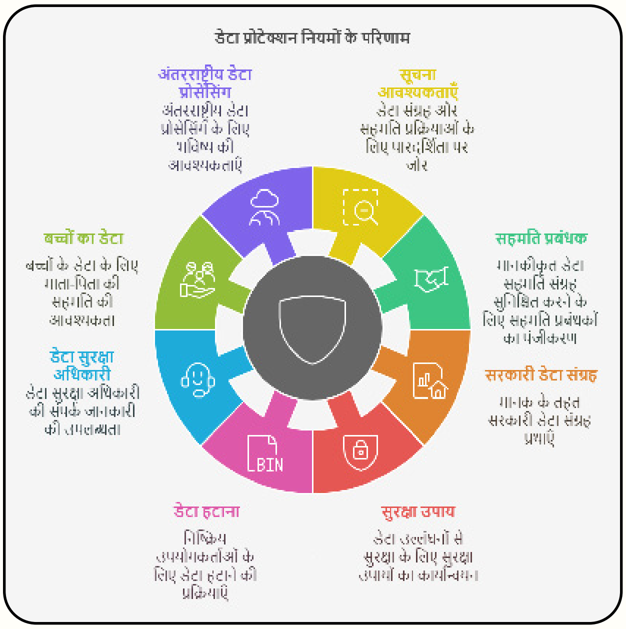

डेटा सुरक्षा का महत्व:

- ये नियम और अधिनियम सर्वोच्च न्यायालय के 2017 के निजता के अधिकार पर दिए गए फैसले के अनुरूप हैं, जिसमें निजता को भारत के संविधान के तहत एक मौलिक अधिकार के रूप में मान्यता दी गई है। इन नियमों की शुरूआत के साथ, भारत डिजिटल अर्थव्यवस्था की अनूठी चुनौतियों का समाधान करते हुए अंतर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप मजबूत डेटा सुरक्षा की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठा रहा है।

उत्तराखंड में समान नागरिक संहिताः एक गहन विश्लेषण

हाल ही में उत्तराखंड भारत का पहला राज्य बना, जहां समान नागरिक संहिता (यूसीसी) लागू की गई, जोकि एक महत्वपूर्ण संवैधानिक और सामाजिक उपलब्धि बन गई है। यह सुधार भारत के कानूनी और सामाजिक ढांचे में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन को दर्शाता है। संविधान के राज्य नीति निदेशक सिद्धांतों के अनुरूप, उत्तराखंड में लागू यूसीसी का उद्देश्य सभी धर्मों के लिए विवाह, तलाक, विरासत, लिव-इन संबंध और उत्तराधिकार से संबंधित व्यक्तिगत कानूनों को एकरूप बनाना है। सरकार इस पहल को लैंगिक समानता, प्रशासनिक दक्षता और कानून की एकरूपता की दिशा में एक प्रगतिशील कदम के रूप में देखती है। हालांकि, इसने व्यक्तिगत स्वतंत्रता, सांस्कृतिक विविधता और पारंपरिक धार्मिक प्रथाओं पर संभावित प्रभावों को लेकर व्यापक विमर्श और बहस को भी जन्म दिया है।

ऐतिहासिक और संवैधानिक पृष्ठभूमिः

- समान नागरिक संहिता (यूसीसी) की अवधारणा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 44 में निहित है, जो राज्य को सभी नागरिकों के लिए समान व्यक्तिगत कानून स्थापित करने की दिशा में प्रयास करने का निर्देश देता है। हालांकि, भारत की विविध सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना ने परंपरागत रूप से विभिन्न धार्मिक समुदायों को व्यक्तिगत मामलों के लिए भिन्न-भिन्न कानूनी व्यवस्थाओं का पालन करने की अनुमति दी है।
- वर्तमान में, गोवा एकमात्र ऐसा राज्य है जहां समान नागरिक संहिता लागू है, जो 1867 से पुर्तगाली नागरिक संहिता के प्रावधानों का अनुसरण कर रहा है।
- उत्तराखंड में समान नागरिक संहिता लागू करने की प्रक्रिया 2022 में प्रमुखता से शुरू हुई, जिसके परिणामस्वरूप फरवरी 2024 में उत्तराखंड समान नागरिक संहिता अधिनियम पारित किया गया। इस अधिनियम के तहत कई महत्वपूर्ण कानूनी सुधार पेश किए गए, जिनमें शामिल हैं:
  - **समान संपत्ति अधिकारः** बेटों और बेटियों को उत्तराधिकार में समान अधिकार प्रदान किए गए हैं।
  - **लिव-इन रिलेशनशिप की मान्यताः** लिव-इन संबंधों से जन्मे बच्चों को कानूनी मान्यता दी गई है, जिससे उनके वैध अधिकार सुनिश्चित होते हैं।
  - **तलाक के लिए एक समान आधारः** धार्मिक भिन्नताओं को समाप्त करते हुए तलाक के लिए एक समान और मानकीकृत कानूनी ढांचा स्थापित किया गया है।
- इस अधिनियम की एक उल्लेखनीय विशेषता विवाह, तलाक और उत्तराधिकार के लिए डिजिटल पंजीकरण प्रणाली की शुरुआत है, जिससे प्रशासनिक प्रक्रियाओं को अधिक सुव्यवस्थित और पारदर्शी बनाया गया है।

उत्तराखंड की समान नागरिक संहिता की मुख्य विशेषताएंः

उत्तराखंड में समान नागरिक संहिता को कई कानूनी और प्रशासनिक सुधारों के आधार पर तैयार किया गया है, जिसका उद्देश्य समानता और पारदर्शिता सुनिश्चित करना है।

- **विवाह और तलाक नियमः** सभी विवाह, चाहे वे किसी भी धार्मिक संबद्धता के हों, ऑनलाइन पंजीकृत होने चाहिए।
  - अनिवार्य पंजीकरण की समय सीमाः
    - 26 मार्च 2010 के बाद हुए विवाहों का पंजीकरण छह माह के भीतर कराया जाना आवश्यक है।
    - यूसीसी कार्यान्वयन के बाद किए गए विवाहों को 60 दिनों के भीतर पंजीकृत किया जाना चाहिए।
  - तलाक पंजीकरण के लिए विवाह पंजीकरण, न्यायालय का आदेश, केस संख्या, अंतिम आदेश और बच्चों की जानकारी की आवश्यकता होती है।
  - यह पोर्टल लोगों को आधिकारिक अदालती दस्तावेज प्रस्तुत करके अपने विवाह को रद्द करने का पंजीकरण करने की अनुमति देता है।
- **लिव-इन रिलेशनशिप पर नियमः**
  - यूसीसी कार्यान्वयन के एक महीने के भीतर लिव-इन रिलेशनशिप का अनिवार्य पंजीकरण होना चाहिए।
  - कोई भी या दोनों साथी ऑनलाइन या ऑफलाइन तरीके से संबंध समाप्त कर सकते हैं।
  - यदि केवल एक पक्ष विघटन के लिए आवेदन करता है, तो रजिस्ट्रार को दूसरे पक्ष से इसकी पुष्टि प्राप्त करनी होगी।
  - यदि कोई महिला लिव-इन रिलेशनशिप के दौरान गर्भवती हो जाती है, तो बच्चे के जन्म के 30 दिनों के भीतर सरकार को सूचित किया जाना चाहिए।
  - मकान मालिक उन दंपतियों को आवास देने से इनकार नहीं कर सकते हैं, जिन्होंने अपने लिव-इन रिलेशनशिप को UCC के तहत पंजीकृत करा लिया है।
- **उत्तराधिकार और वसीयत पंजीकरणः** उत्तराधिकार के मामलों में पुरुषों और महिलाओं को समान संपत्ति अधिकार

दिए गए हैं।

- » वसीयत पंजीकरण के तीन तरीके:
  - ➢ ऑनलाइन फॉर्म जमा करना।
  - ➢ हस्तलिखित या टाइप की गई वसीयत अपलोड करना।
  - ➢ तीन मिनट का वीडियो वक्तव्य रिकॉर्ड करना और अपलोड करना।
- **डिजिटल गवर्नेंस और एआई एकीकरण:**
  - » विवाह, तलाक, लिव-इन रिलेशनशिप और वसीयत के ऑनलाइन पंजीकरण के लिए एक समर्पित यूसीसी पोर्टल (ucc.uk.gov.in) विकसित किया गया है।
  - » पोर्टल में आधार-आधारित सत्यापन और अंग्रेजी सहित 22 भाषाओं को समर्थन देने वाली एआई-संचालित अनुवाद सेवा शामिल है।
  - » पुलिस, न्यायालयों और नगर निकायों सहित 13 सरकारी विभागों से डेटा एकीकृत किया गया है, जिससे कानूनी प्रक्रियाओं को सुव्यवस्थित किया गया है।
  - » मामूली शुल्क पर तत्काल पंजीकरण सुविधा उपलब्ध है।
- **प्रशासनिक निरीक्षण और अनुपालन:**
  - » रजिस्ट्रार और उप-रजिस्ट्रार शहरी और ग्रामीण स्तर पर यूसीसी अनुपालन की देखरेख करेंगे।
  - » सामान्य परिस्थितियों में 15 दिनों के भीतर तथा आपातकालीन स्थिति में तीन दिनों के भीतर दस्तावेजों का सत्यापन करेंगे।
  - » अस्वीकृति की स्थिति में, आवेदक रजिस्ट्रार के समक्ष 30 दिनों के भीतर अपील कर सकते हैं और यदि आवश्यक हो, तो 60 दिनों के भीतर मामले को रजिस्ट्रार-जनरल के समक्ष बढ़ा सकते हैं।
  - » अनुपालन न करने पर दंड:
    - ➢ पहली बार उल्लंघन करने वालों को चेतावनी दी जाती है।
    - ➢ बार-बार उल्लंघन करने पर वित्तीय दंड लगाया जाएगा।

सामाजिक निहितार्थ और आलोचनाएँ:

- **प्रगतिशील पहलू**
  - » **लैंगिक समानता:** समान उत्तराधिकार अधिकारों की गारंटी का उद्देश्य सदियों पुरानी भेदभावपूर्ण प्रथाओं का निवारण करना है।
  - » **प्रशासनिक दक्षता:** डिजिटल पंजीकरण प्रणाली कानूनी प्रक्रियाओं को सरल बनाती है और नौकरशाही संबंधी कमियों को कम करती है।
  - » **सामाजिक सामंजस्य:** व्यक्तिगत कानूनों में एकरूपता को बढ़ावा देकर, समान नागरिक संहिता का उद्देश्य धार्मिक समुदायों के बीच कानूनी विभाजन को पाटना है।
    - ➢

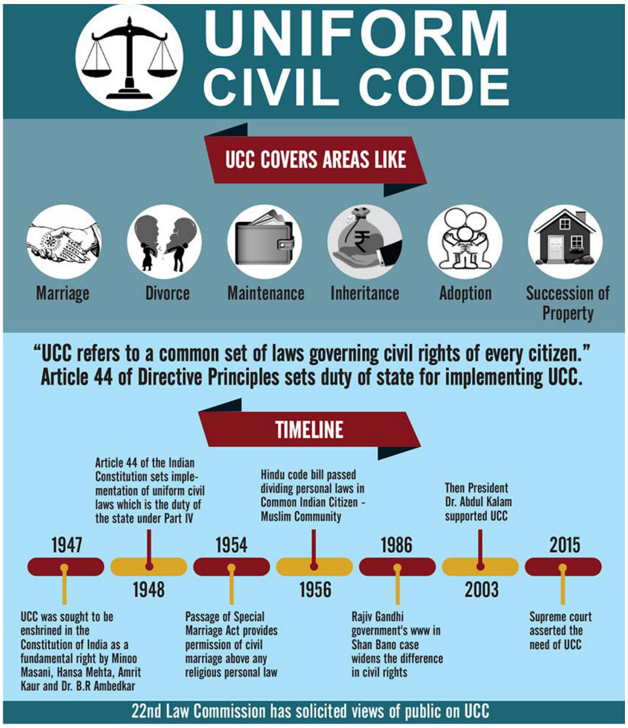

आलोचनाएँ और चुनौतियाँ:

- **व्यक्तिगत स्वतंत्रता का उल्लंघन:** आलोचकों का कहना है कि अनिवार्य पंजीकरण, विशेष रूप से लिव-इन संबंधों का पंजीकरण, व्यक्तिगत गोपनीयता और व्यक्तिगत पसंद का उल्लंघन करता है, कुछ जोड़ों ने तो उत्तराखंड से स्थानांतरित होने पर भी विचार किया है।
  - » कार्यान्वयन के दौरान एक समान कानून लागू करने और अनुच्छेद 25 तथा 5वीं और 6वीं अनुसूचियों के प्रावधानों द्वारा संरक्षित व्यक्तिगत धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रता का सम्मान करने के बीच नाजुक संतुलन बनाए रखना होगा।
- **धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतिरोध:** मुस्लिम संगठन और अन्य धार्मिक समूह तर्क देते हैं कि समान नागरिक संहिता पारंपरिक व्यक्तिगत कानूनों का अतिक्रमण करती है और सांस्कृतिक पहचान को कमजोर कर सकती है। अनुसूचित जनजातियों को दी गई छूट एकरूपता की धारणा को और जटिल बनाती है।
  - » धार्मिक समुदायों और पारंपरिक निकायों का विरोध इस प्रकार के सुधार को लागू करने की सामाजिक-राजनीतिक जटिलताओं को उजागर करता है। यह विरोध खंडित स्वीकृति और कानूनी चुनौतियाँ उत्पन्न कर सकता है।
- **विभिन्न व्याख्याओं की संभावना:** हरियाणा जैसे राज्यों में, स्थानीय निकायों (जैसे खाप पंचायतों) ने अतिरिक्त प्रतिबंधों की मांग की है, जिसके कारण विभिन्न क्षेत्रों में समान नागरिक संहिता का कार्यान्वयन असंगत हो सकता है।

- **प्रशासनिक बाधाएँ:** यद्यपि डिजिटल प्रणाली नवीन है, फिर भी इसकी सार्वभौमिक पहुँच सुनिश्चित करना, विशेष रूप से दूरदराज या ग्रामीण क्षेत्रों में एक महत्वपूर्ण चुनौती बनी हुई है।

समान नागरिक संहिता की व्यापक अवधारणा:

- **संवैधानिक और न्यायिक दृष्टिकोण:**
  - **अनुच्छेद 44:** समान नागरिक संहिता व्यापक संवैधानिक अधिदेश का हिस्सा है जो राज्य से समान व्यक्तिगत कानून स्थापित करने का आग्रह करता है।
  - **न्यायिक समर्थन:** ऐतिहासिक मामले 'मोहम्मद अहमद खान बनाम शाह बानो बेगम (1985), सरला मुद्गल बनाम भारत संघ (1995) औरजॉन वल्लमट्टम बनाम भारत संघ (2003)' ने बार-बार एक समान कानूनी ढांचे की आवश्यकता को रेखांकित किया है जो धार्मिक मतभेदों से परे हो।
  - **विधि आयोग का रुख:** 2018 में, 21वें विधि आयोग ने कहा कि यद्यपि समान नागरिक संहिता एक वांछनीय सुधार है, फिर भी इसका समय और आवश्यकता अभी भी विवादास्पद बनी हुई है, जो आधुनिक कानूनी सुधारों और भारत के पारंपरिक ढांचे के बीच तनाव को दर्शाता है।
- **नीतिगत तर्क और आधुनिकीकरण:**
  - **भेदभावपूर्ण प्रथाओं का उन्मूलन:** यूसीसी का उद्देश्य हलाला, इद्दत और तीन तलाक जैसी प्रथाओं को समाप्त करना है, जिन्हें भेदभावपूर्ण माना जाता है।
  - **कानूनी ढांचे का आधुनिकीकरण:** डिजिटल शासन और समान प्रक्रियाएँ भारत के कानूनी ढांचे के आधुनिकीकरण के लिए केंद्रीय हैं, जिससे इसे समकालीन आवश्यकताओं के प्रति अधिक उत्तरदायी बनाया जा सके।

अप्रवासन और विदेशी विधेयक, 2025: एक व्यापक विधायी ढांचा

भारत में अप्रवासन (Immigration) नीति-निर्माण का एक महत्वपूर्ण विषय रहा है, जोकि राष्ट्रीय सुरक्षा, जनसांख्यिकीय संरचना, आर्थिक अवसरों और अंतरराष्ट्रीय संबंधों को प्रभावित करता है। वैश्वीकरण और सीमा-पार आवाजाही में वृद्धि के चलते, विदेशी नागरिकों के भारत में प्रवेश, निवास और प्रस्थान को विनियमित करना एक महत्वपूर्ण चुनौती बन गया है। इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार ने 'अप्रवासन और विदेशियों विधेयक, 2025' प्रस्तुत किया है। यह विधेयक 2025 के बजट सत्र (31 जनवरी-4 अप्रैल, 2025) के लिए सूचीबद्ध 16 प्रमुख विधेयकों में शामिल है। इसका उद्देश्य मौजूदा अप्रचलित कानूनों को हटाकर एक एकीकृत और प्रभावी कानूनी ढांचा तैयार करना है।

वर्तमान कानूनी ढांचा:

- वर्तमान में, भारत में आप्रवासन संबंधी कानून निम्नलिखित तीन औपनिवेशिक (Colonial-era) कानूनों द्वारा नियंत्रित होते हैं:
  - विदेशी अधिनियम, 1946
  - पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम, 1920
  - विदेशियों का पंजीकरण अधिनियम, 1939
- ये कानून उस समय बनाए गए थे जब वैश्विक प्रवासन (Global Migration), राष्ट्रीय सुरक्षा चिंताएँ और राजनयिक आवश्यकताएँ आज की तुलना में काफी अलग थीं। इसलिए, 'अप्रवासन और विदेशी विधेयक, 2025' इन कानूनों को संशोधित कर प्रवर्तन प्रक्रियाओं को सरल बनाने, कानूनी खामियों को दूर करने और आधुनिक जरूरतों के अनुरूप आप्रवासन नियमों को अद्यतन करने का प्रयास करता है।
- वर्तमान समय में वीजा उल्लंघन, अवैध सीमा पार करना (Illegal Border Crossings) और बढ़ती सुरक्षा चिंताओं को देखते हुए, यह विधेयक विदेशी नागरिकों के प्रबंधन के लिए एक केंद्रीकृत दृष्टिकोण अपनाने का प्रस्ताव करता है।

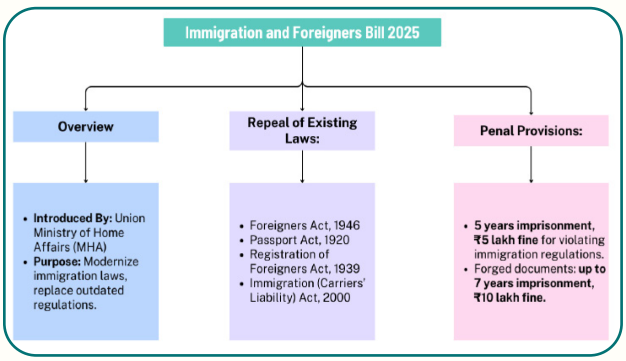

अप्रवासन और विदेशी विधेयक, 2025 के उद्देश्य और दायरा:

- इस विधेयक के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:
  - **विदेशी नागरिकों का विनियमन:** भारत में प्रवेश करने वाले व्यक्तियों के लिए पासपोर्ट और वीजा आवश्यकताओं को स्पष्ट रूप से परिभाषित करना।
  - **निगरानी और पंजीकरण:** विदेशी नागरिकों की निगरानी के लिए एक मजबूत तंत्र बनाना, जिससे वीजा की अवधि खत्म होने के बाद भी रुके रहने (Visa Overstay) और अवैध रूप से बसने (Illegal Migration) को रोका जा सके।
  - **आवागमन प्रतिबंध और सुरक्षा प्रावधान:** राष्ट्रीय सुरक्षा चिंताओं के आधार पर कुछ श्रेणियों के विदेशियों की गतिविधियों पर प्रतिबंध लगाने का अधिकार।
  - **निर्वासन प्रक्रियाएँ का निर्धारण:** जो विदेशी नागरिक भारत के आप्रवासन कानूनों का उल्लंघन करेंगे, उनके निर्वासन के लिए स्पष्ट कानूनी प्रक्रियाएँ निर्धारित करना।
- इसके अतिरिक्त, विधेयक उन संस्थानों को भी जिम्मेदारी देता है जो विदेशी नागरिकों से सीधे तौर पर जुड़े होते हैं, ताकि अनुपालन (Compliance) को और प्रभावी बनाया जा सके। इनमें शामिल हैं:
  - शैक्षणिक संस्थान, अस्पताल, होटल और एयरलाइंस, जिन्हें अपने अधिकार क्षेत्र में मौजूद विदेशी नागरिकों का रिकॉर्ड बनाए रखना और रिपोर्ट करना अनिवार्य होगा।
  - परिवहन संचालक जैसे एयरलाइंस, शिपिंग कंपनियाँ और रेलवे, जो यह सुनिश्चित करने के लिए उत्तरदायी होंगे कि सभी यात्री वैध यात्रा दस्तावेजों के साथ यात्रा कर रहे हों।
- इस प्रकार, यह विधेयक विभिन्न अप्रवासन नीतियों को एकीकृत करके प्रवर्तन को सरल बनाने, प्रशासनिक अक्षमताओं को कम करने और सीमा सुरक्षा को मजबूत करने का लक्ष्य रखता है।

अप्रवासन और विदेशियों विधेयक, 2025 के प्रमुख प्रावधान:

- **केंद्रीकृत आप्रवासन नियंत्रण:**
  - इस विधेयक के तहत एक एकल केंद्रीकृत एजेंसी (Centralized Agency) स्थापित करने का प्रस्ताव है, जो पूरे भारत में आप्रवासन मामलों की निगरानी और प्रवर्तन सुनिश्चित करेगी।
  - एक राष्ट्रीय डिजिटल डेटाबेस बनाया जाएगा, जिससे भारत में आने-जाने वाले विदेशी नागरिकों का रिकॉर्ड रखा जाएगा और उनके वीजा अनुपालन पर नजर रखी जाएगी।
- **वीजा और पासपोर्ट संबंधी नियम:**
  - भारत में प्रवेश करने से पहले विदेशी नागरिकों को वैध पासपोर्ट और वीजा रखना अनिवार्य होगा।
  - होटलों, विश्वविद्यालयों और अस्पतालों को यह कानूनी रूप से अनिवार्य किया जाएगा कि वे अपने यहाँ ठहरने वाले विदेशी नागरिकों की जानकारी सरकार को उपलब्ध कराएँ।
- **परिवहन संचालकों की जिम्मेदारियाँ:**
  - एयरलाइंस, शिपिंग कंपनियाँ और रेलवे को यह सुनिश्चित करना होगा कि उनके यात्री वैध यात्रा दस्तावेजों के साथ यात्रा कर रहे हैं।
  - यदि कोई विदेशी नागरिक भारत में प्रवेश से वंचित होता है, तो उसे वापस भेजने की जिम्मेदारी उस परिवहन कंपनी की होगी जिसने उसे भारत लाया था।
  - यदि कोई परिवहन कंपनी इन नियमों का उल्लंघन करती है, तो उस पर जुर्माना और कानूनी कार्रवाई की जाएगी।
- **विदेशियों पर प्रतिबंध:**
  - भारत में निवास करते समय, विदेशी नागरिक बिना सरकारी अनुमति के अपना नाम नहीं बदल सकते।
  - सुरक्षा कारणों से, सरकार विशेष व्यक्तियों की आवाजाही पर प्रतिबंध लगा सकती है।
- **कड़े प्रवर्तन तंत्र:**
  - जिला मजिस्ट्रेट, पुलिस आयुक्त और अप्रवासन अधिकारी को विदेशी नागरिकों की निगरानी, हिरासत और निर्वासन (Deportation) के अधिकार दिए जाएँगे।
  - कानून तोड़ने वाले विदेशी नागरिकों पर भारी जुर्माना, कारावास या निर्वासन जैसी कठोर सजाएँ लागू की जाएँगी, जो उल्लंघन की गंभीरता पर निर्भर करेगी।
- **निर्वासन और निष्कासन प्रक्रियाएँ:**
  - केंद्र सरकार को उन विदेशी नागरिकों को निर्वासित (Deport) करने का अधिकार होगा जो वीजा शर्तों का उल्लंघन करते हैं या राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न करते हैं।
  - परिवहन कंपनियों को उन विदेशियों को वापस ले जाने की जिम्मेदारी उठानी होगी, जिनके आगमन को भारत में प्रवेश की अनुमति नहीं दी गई है।
- यह विधेयक एक संगठित प्रवर्तन तंत्र लागू करके आप्रवासन नियंत्रण को सरल बनाने और राष्ट्रीय सुरक्षा को मजबूत करने का प्रयास करता है।

भारत से अवैध प्रवासन: पैमाना और प्रवृत्तियाँ

- *हालाँकि भारत अवैध आप्रवासन से जुड़ी चुनौतियों का सामना कर रहा है, लेकिन यह स्वयं भी संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा और यूरोप जैसे देशों में अवैध प्रवासियों का एक प्रमुख स्रोत बना हुआ है। अनुमानों के अनुसार, केवल अमेरिका में ही 7,25,000 से अधिक भारतीय प्रवासी बिना वैध दस्तावेजों के रह रहे हैं।*

- *हाल के निर्वासन के रुझान:*
  - *जून 2024 से अक्टूबर 2024 के बीच वैश्विक स्तर पर 1,60,000 व्यक्तियों को निर्वासित किया गया, जिसमें 1,000 से अधिक भारतीय नागरिक शामिल थे।*
  - *अमेरिका ने पंजाब, हरियाणा और गुजरात से आने वाले प्रवासियों पर विशेष ध्यान देते हुए बड़े पैमाने पर निर्वासन (Mass Deportations) बढ़ा दिए हैं।*
  - *अब कई भारतीय प्रवासी सीधे अमेरिका जाने के बजाय कनाडा के माध्यम से प्रवेश करना पसंद कर रहे हैं, क्योंकि कनाडा में वीजा प्रसंस्करण तेज (76 दिनों में) होता है, जबकि अमेरिका में इसमें एक वर्ष से अधिक समय लग सकता है।*

भारत से अवैध प्रवासन के तरीके:

- **वीजा ओवरस्टे:**
  - कई भारतीय नागरिक वैध वीजा पर यात्रा करके विदेश जाते हैं, लेकिन वीजा समाप्त होने के बाद लौटते नहीं हैं।
  - छात्र और कार्य वीजा का उपयोग अवैध रोजगार के लिए किया जाता है।
- **अवैध सीमा पार करना:**
  - 'डंकी रूट' के तहत नकली वीजा, मानव तस्कर और जोखिम भरे सीमा पार मार्गों का उपयोग किया जाता है।
  - दारीन गैप (पनामा-कोलंबिया सीमा) अमेरिका जाने वाले भारतीय प्रवासियों के लिए एक खतरनाक मार्ग बना हुआ है।
  - कनाडा से अमेरिका में अवैध प्रवेश एक प्रमुख रणनीति बन गई है, क्योंकि कनाडा के प्रवेश नियम अपेक्षाकृत कम सख्त हैं।
- **शादी और जन्म-आधारित नागरिकता में धोखाधड़ी:**
  - कई मामलों में नकली शादियाँ की जाती है ताकि स्थायी निवास प्राप्त किया जा सके।
  - 'बर्थ टूरिज्म' का उपयोग अमेरिका में जन्मे बच्चों के माध्यम से स्वचालित रूप से अमेरिकी नागरिकता प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

भारत से अवैध प्रवासन के मुख्य कारण:

- **आर्थिक असमानता:** अमेरिका में $10-15 प्रति घंटे की मजदूरी भारतीय प्रवासियों को खतरों के बावजूद आकर्षित करती है।
- **कृषि संकट:** पंजाब और हरियाणा के किसान अपनी जमीन बेचकर अवैध प्रवासन के लिए धन जुटाते हैं।
- **मानव तस्करी:** भारत विश्व के शीर्ष 10 मानव तस्करी से प्रभावित देशों में शामिल है।
- **नौकरशाही बाधाएँ:** अमेरिका में वीजा मिलने में 600 से ज्यादा दिन लगने के कारण कई लोग अवैध रूप से प्रवास करने के रास्ते खोजने लगते हैं।

अप्रवासन और विदेशी विधेयक, 2025 के प्रभाव

- यदि यह विधेयक पारित हो जाता है, तो यह भारत की अप्रवासन प्रणाली को नया रूप देगा, जिससे:
  - अप्रवासन कानूनों के कड़े प्रवर्तन के कारण वीजा उल्लंघन में कमी आएगी।
  - राष्ट्रीय सुरक्षा में सुधार होगा और अनधिकृत प्रवासन को रोका जा सकेगा।
  - अंतरराष्ट्रीय आप्रवासन मानकों का पालन सुनिश्चित कर भारत के कूटनीतिक संबंध मजबूत होंगे।
- इस विधेयक का प्रभाव निम्नलिखित पर पड़ेगा:
  - भारत में काम करने वाले विदेशी कर्मचारी, छात्र, और पर्यटक।
  - भारत के उन देशों के साथ संबंधो पर प्रभाव, जहां भारतीय प्रवासियों की बड़ी संख्या रहती है (जैसे अमेरिका, कनाडा, यूके)।
  - बांग्लादेश और म्यांमार (रोहिंग्या शरणार्थियों) से अवैध प्रवासन को नियंत्रित करने के लिए सुरक्षा उपाय।
- भारत के वैश्विक आर्थिक और राजनीतिक शक्ति बनने की दिशा में, 'अप्रवासन और विदेशियों विधेयक, 2025' एक महत्वपूर्ण कदम होगा। यह विधेयक भविष्य की अप्रवासन नीतियों को सुव्यवस्थित करने और सीमा सुरक्षा को अधिक प्रभावी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

भारत में मुफ्त योजनाओं (फ्रीबीज) की संस्कृति: सुप्रीम कोर्ट की चिंताएं और विविध आयाम

भारत में हाल के वर्षों में मुफ्त वस्तुएँ और सेवाएँ देने की प्रवृत्ति, जिसे आमतौर पर 'फ्रीबीज' कहा जाता है, एक प्रमुख बहस का विषय बन गई है। राजनीतिक दल अक्सर चुनावी मौसम के दौरान इस तरह की योजनाओं की घोषणा करते हैं ताकि मतदाताओं को लुभाया जा सके। हालाँकि, ये योजनाएँ समाज के वंचित वर्गों को आवश्यक राहत प्रदान कर सकती हैं, लेकिन साथ ही आर्थिक स्थिरता, राजनीतिक नैतिकता और दीर्घकालिक सामाजिक प्रभाव को लेकर गंभीर चिंताएँ भी उठती हैं।

इसी सन्दर्भ में भारत के सुप्रीम कोर्ट ने राजनीतिक दलों और सरकारों द्वारा विशेष रूप से चुनावी अवधि के दौरान दिए जाने वाले 'फ्रीबीज' को लेकर गंभीर चिंता व्यक्त की है। अदालत ने सवाल उठाया कि क्या इन नीतियों के तहत मुफ्त वस्तुएँ और सेवाएँ प्रदान करने से अनजाने में एक ऐसी संस्कृति विकसित हो रही है, जो लोगों को कार्य करने के लिए प्रेरित करने के बजाय सरकारी सहायता पर निर्भर बना रही है।

सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियाँ:

- एक मामले की सुनवाई के दौरान, जिसमें बेघर लोगों के लिए आश्रय गृहों पर चर्चा हो रही थी, सुप्रीम कोर्ट ने एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया कि 'क्या इस प्रकार की मुफ्त सुविधाएँ लोगों को 'परजीवी वर्ग' (Class of Parasites) के रूप में परिवर्तित कर रही है', जो उन्हें श्रम करने से हतोत्साहित कर रही हैं?
- अदालत की यह टिप्पणी इस चिंता को दर्शाती है कि चुनावी लाभ के लिए शुरू की गई अल्पकालिक योजनाएँ दीर्घकालिक रूप से नकारात्मक प्रभाव डाल सकती हैं। कोर्ट ने इस बात पर भी जोर दिया कि बिना किसी कार्य की आवश्यकता के मुफ्त सुविधाएँ देना नागरिकों में निर्भरता की प्रवृत्ति को बढ़ा सकता है और कार्य संस्कृति को कमजोर कर सकता है।
- इसके अलावा, कोर्ट ने यह भी कहा कि अधिकांश नीतियाँ चुनाव से ठीक पहले शुरू की जाती हैं, जिससे यह संदेह पैदा होता है कि ये योजनाएँ जनहित से अधिक वोट बैंक राजनीति का हिस्सा हो सकती हैं।

कार्य संस्कृति और निर्भरता पर प्रभाव:

- मुफ्त योजनाओं (फ्रीबीज) से संबंधित प्रमुख चिंताओं में से एक कार्य संस्कृति पर इसका प्रभाव है।
  - महाराष्ट्र जैसे कुछ राज्यों में मुफ्त सुविधाओं की वजह से कृषि और अन्य क्षेत्रों में मजदूरों की कमी देखी गई है।
  - आलोचकों का तर्क है कि जब लोगों को बिना किसी प्रयास के वस्तुएँ और सेवाएँ मिलती हैं, तो उनके श्रम करने की प्रेरणा कम हो जाती है।
  - यह प्रवृत्ति व्यक्तिगत जिम्मेदारी और आत्मनिर्भरता को कमजोर कर सकती है, जिससे नागरिक सरकारी सहायता पर निर्भर होते जाते हैं।

फ्रीबीज के पीछे राजनीतिक उद्देश्य:

- मुफ्त योजनाओं (फ्रीबीज) की घोषणा अक्सर चुनावों से ठीक पहले की जाती है, जिससे इनकी वास्तविक मंशा पर सवाल उठते हैं।
- दीर्घकालिक कल्याण योजनाओं (Welfare Schemes) की अनुपस्थिति और केवल चुनावी लाभ के उद्देश्य से मुफ्त सुविधाएँ देने की प्रवृत्ति इस बहस को और अधिक जटिल बना देती है।
- एक अध्ययन में पाया गया कि 78% उत्तरदाताओं ने फ्रीबीज को 'मतदान को प्रभावित करने की रणनीति' माना।
- यह मुद्दा सार्वजनिक नीति और शासन के मूल सिद्धांतों से जुड़ा हुआ है, अतः यह प्रश्न उठता है कि इन योजनाओं का मुख्य उद्देश्य जनहित है या महज राजनीतिक लाभ।

जनमत और आर्थिक चिंताएँ:

- फ्रीबीज को लेकर जनता की राय मिली-जुली रही है। विभिन्न शहरों में किये गये एक सर्वेक्षण में सामने आया कि:
  - 56% उत्तरदाता फ्रीबीज को अनावश्यक मानते हैं।
  - 78% उत्तरदाताओं ने कहा कि ये योजनाएँ मुख्य रूप से चुनावी लाभ के लिए बनाई जाती हैं।
  - 61% लोगों को मुफ्त योजनाओं से आर्थिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने की चिंता है।
  - 84% संपन्न वर्ग के उत्तरदाता इन्हें आर्थिक रूप से हानिकारक मानते हैं, जबकि 46% निम्न-आय वर्ग के लोगों ने बुनियादी आवश्यकताओं (विशेष रूप से स्वास्थ्य सेवा) पर दी जाने वाली सब्सिडी को उचित ठहराया।
- ये आंकड़े दर्शाते हैं कि मुफ्त योजनाओं (फ्रीबीज) को लेकर समाज में आर्थिक और सामाजिक स्तर पर गहरी विभाजन रेखा मौजूद है, जो वित्तीय जिम्मेदारी और स्थिरता को लेकर चिंताओं को उजागर करती है।

फ्रीबीज बनाम कल्याणकारी योजनाएँ:

- भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) ने अपनी 2022 की रिपोर्ट में फ्रीबीज को बिना किसी शुल्क के प्रदान की जाने वाली 'सार्वजनिक कल्याणकारी सुविधाएँ' बताया।
- ये आमतौर पर अल्पकालिक राहत प्रदान करती हैं और इनमें मुफ्त लैपटॉप, टीवी, साइकिल, बिजली और पानी जैसी वस्तुएँ

शामिल होती हैं, जो अक्सर चुनावी रणनीति के रूप में प्रयोग की जाती हैं।

- दूसरी ओर, कल्याणकारी योजनाएँ (Welfare Schemes) लंबी अवधि में जीवन स्तर सुधारने और आवश्यक संसाधनों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से बनाई जाती हैं।
- ये योजनाएँ राज्य नीति के निदेशक सिद्धांतों (DPSPs) से प्रेरित होती हैं और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने का कार्य करती हैं।

कल्याणकारी योजनाओं के उदाहरण:

- **लोक वितरण प्रणाली (PDS):** खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करना।
- **मनरेगा (MGNREGA):** रोजगार उपलब्ध कराना।
- **मिड-डे मील योजना (MDM):** बच्चों के पोषण और शिक्षा को बढ़ावा देना।

फ्रीबीज के सकारात्मक पहलू:

हालाँकि मुफ्त योजनाओं की आलोचना की जाती है, लेकिन इनके कुछ सकारात्मक पहलू भी हैं:

- **वंचित समुदायों को समर्थन:** गरीब और पिछड़े क्षेत्रों में फ्रीबीज जीवन-निर्वाह का एक आवश्यक साधन हो सकते हैं।
- **दीर्घकालिक कल्याण की नींव:** कई कल्याणकारी योजनाएँ शुरुआत में फ्रीबीज के रूप में शुरू हुई थीं। उदाहरण के लिए, मिड-डे मील योजना और सब्सिडी वाली खाद्य योजनाएँ।
- **स्थानीय उद्योगों को बढ़ावा:** सिलाई मशीन या साइकिल जैसी कुछ मुफ्त वस्तुएँ स्थानीय उद्योगों और आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहित कर सकती हैं।
- **शिक्षा तक पहुँच को बढ़ावा:** लैपटॉप और साइकिल वितरण ने ग्रामीण क्षेत्रों में स्कूल उपस्थिति और शिक्षा के स्तर को बेहतर बनाने में मदद की है।
- **सामाजिक कल्याण को प्रोत्साहन:** महिलाओं के लिए मुफ्त बस पास जैसी सेवाओं ने महिला सशक्तिकरण और कार्यबल भागीदारी को बढ़ाया है।

मुफ्त योजनाओं (फ्रीबीज) के नकारात्मक पहलू:

- **राजकोषीय बोझ:** फ्रीबीज योजनाएँ सार्वजनिक वित्त पर भारी दबाव डाल सकती हैं। कुछ राज्यों में, मुफ्त योजनाओं का व्यय राज्य के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है।
- **चुनावी हेरफेर:** फ्रीबीज का मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए उपयोग स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों को कमजोर कर सकता है, क्योंकि यह वोटिंग व्यवहार को विकृत कर सकता है।
- **संसाधनों का दुरुपयोग:** फ्रीबीज पर खर्च किए गए संसाधन स्वास्थ्य, शिक्षा और बुनियादी ढाँचे जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों से धन को हटा सकते हैं, जिससे दीर्घकालिक विकास प्रभावित हो सकता है।
- **निर्भरता को बढ़ावा:** बार-बार मुफ्त वितरण की प्रवृत्ति आत्मनिर्भरता की भावना को कम कर सकती है, जिससे लोग श्रम करने और स्वावलंबन की ओर कदम बढ़ाने के बजाय सरकार पर निर्भर होते जाते हैं।
- **पर्यावरणीय चिंताएँ:** कुछ मुफ्त योजनाएँ, जैसे सब्सिडी वाली मुफ्त बिजली, प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन और पर्यावरणीय क्षरण का कारण बन सकती हैं।

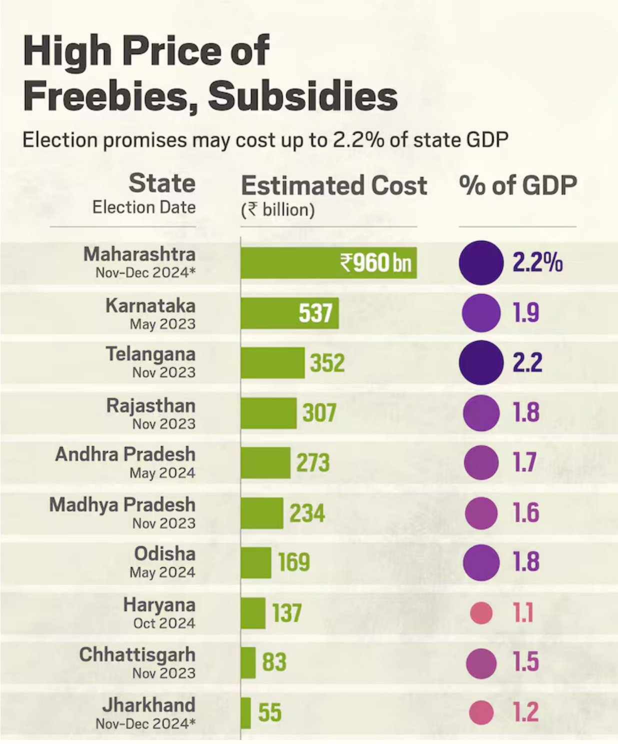

फ्रीबीज पर नैतिक दृष्टिकोण:

- **सरकार की जिम्मेदारी:** राज्य की यह नैतिक जिम्मेदारी है कि वह अपने नागरिकों, विशेष रूप से वंचित वर्गों, की सहायता करे। हालाँकि, इसमें जनहित और चुनावी लाभ के लिए लोकलुभावन नीतियों के बीच एक संतुलन बनाए रखना आवश्यक है। नैतिक प्रशासन की माँग है कि नीतियाँ पारदर्शी, जवाबदेह और सतत विकास पर केंद्रित हों।
- **नागरिकों की भूमिका:** हालाँकि मुफ्त योजनाओं से लाभार्थियों को तात्कालिक राहत मिलती है, लेकिन व्यक्तिगत विकास और आर्थिक आत्मनिर्भरता के प्रति नागरिकों की भी एक नैतिक जिम्मेदारी है। फ्रीबीज पर अत्यधिक निर्भरता आत्म-सुधार और मेहनत करने की प्रवृत्ति को कमजोर कर सकती है।
- **समानता और न्याय:** नीतियों का विश्लेषण यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना चाहिए कि वे किसी विशेष वर्ग को अनुचित लाभ न पहुँचाएँ और सामाजिक न्याय एवं समता बनाए रखें।

आगे की राह:

- **लोकतांत्रिक संस्थानों को सशक्त बनाना:** चुनाव आयोग

जैसे संस्थानों को फ्रीबीज के दुरुपयोग पर निगरानी रखने और इसे नियंत्रित करने के लिए अधिक अधिकार दिए जाने चाहिए।

- **मतदाता शिक्षा को बढ़ावा देना:** जनता को यह समझाना आवश्यक है कि फ्रीबीज का दीर्घकालिक आर्थिक और सामाजिक प्रभाव क्या हो सकता है, ताकि मतदाता सजग और सही निर्णय ले सकें।
- **टिकाऊ कल्याणकारी कार्यक्रमों पर ध्यान केंद्रित करना:** नीतिगत ध्यान अल्पकालिक लाभों के बजाय स्थायी और सतत कल्याण योजनाओं की ओर स्थानांतरित किया जाना चाहिए, जिससे दीर्घकालिक सामाजिक-आर्थिक विकास हो।
- **पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित करना:** स्पष्ट दिशा-निर्देश और सशक्त भ्रष्टाचार-रोधी उपाय यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि कल्याणकारी योजनाएँ प्रभावी रूप से लागू हों और लक्षित लाभार्थियों तक पहुँचें।
- **सामाजिक सुरक्षा में निवेश (Investing in Social Security):** अस्थायी मुफ्त योजनाओं पर निर्भर रहने के बजाय, स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार सृजन की दिशा में निवेश करना दीर्घकालिक सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को दूर करने में मदद करेगा।

पीएमएलए मामलों में जमानत के लिए कड़े निर्देश

संदर्भ:

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने धन शोधन निरोधक अधिनियम (PMLA) के अंतर्गत एक निर्णय में जमानत से जुड़े प्रावधानों को और सख्त किया गया। इस निर्णय में सुप्रीम कोर्ट ने पटना उच्च न्यायालय के उस फैसले को खारिज कर दिया, जिसमें एक आरोपी को धन शोधन मामले में जमानत दी गई थी। सुप्रीम कोर्ट ने यह स्पष्ट किया कि PMLA की धारा 45 के तहत जमानत देने से पहले निर्धारित प्रक्रियाओं का पालन नहीं किया गया था। इसके परिणामस्वरूप, कोर्ट ने जमानत के लिए कड़ी शर्तों का पालन सुनिश्चित करने का आदेश दिया।

PMLA की धारा 45 के तहत जमानत का आधार:

- PMLA की धारा 45 के तहत जमानत देने के लिए कड़े मानदंड निर्धारित किए गए हैं।
- कोर्ट को यह सुनिश्चित करना होता है कि:
  - क्या यह विश्वास किया जा सकता है कि आरोपी अपराध का दोषी नहीं है?
  - क्या यह संभावना नहीं है कि आरोपी जमानत मिलने पर दोबारा अपराध करेगा?
- सुप्रीम कोर्ट ने यह दोहराया कि ये शर्तें अनिवार्य हैं और इनका सख्ती से पालन किया जाना चाहिए ताकि अवैध जमानत को रोका जा सके।

जमानत देने में विवेकाधिकार:

- पटना उच्च न्यायालय ने कन्हैया प्रसाद को लंबी अवधि तक बिना मुकदमे के कारावास में रहने के कारण जमानत दी थी।
- सुप्रीम कोर्ट ने इस निर्णय की आलोचना करते हुए कहा कि प्रक्रियात्मक देरी PMLA द्वारा निर्धारित कड़ी शर्तों को कमजोर नहीं कर सकती।
- निर्णय ने पुनः स्पष्ट किया कि मात्र प्रक्रियात्मक आधार पर जमानत नहीं दी जा सकती, PMLA के तहत निर्धारित कानूनी प्रक्रिया का पूर्ण अनुपालन आवश्यक है।

धन शोधन (Money Laundering)

- *धन शोधन (Money Laundering) वह प्रक्रिया है जिसके तहत अवैध रूप से अर्जित धन को कानूनी रूप से वैध दिखाने का प्रयास किया जाता है।*
- *इसके लिए धन को जटिल वित्तीय लेन-देन, शेल कंपनियों, विदेशी बैंक खातों या वैध व्यापारिक गतिविधियों के माध्यम से घुमाया जाता है, जिससे उसके वास्तविक स्रोत को छिपाया जा सके और उसे वैध संपत्ति के रूप में प्रस्तुत किया जा सके।*

धन शोधन के चरण:

- **प्लेसमेंट (Placement):** अवैध धन को वित्तीय प्रणाली में डालना।
  - बड़ी धनराशि को विभिन्न बैंक खातों में जमा करना।
  - विदेशी/ऑफशोर बैंकों में धन जमा करना।
  - नकदी से संपत्ति, कीमती धातुएं (सोना, चांदी) या उच्च मूल्य की वस्तुएं खरीदना।
- **परत बनाना (Layering):** जटिल लेन-देन के माध्यम से स्रोत को छुपाना।
  - धन को कई बार स्थानांतरित करना (Repeated Fund Transfers)।
  - शेल कंपनियों का उपयोग करना ताकि मालिकाना हक छुप सके।
  - संपत्तियों को खरीदने और बेचने के द्वारा स्रोत को छुपाना।
- **एकीकरण (Integration):** धन को वैध दिखाना।
  - रियल एस्टेट, व्यवसायों या शेयर बाजारों में निवेश करना।
  - बड़ी व्यापारिक परियोजनाओं में पैसा लगाया जाता है।
  - धोखाधड़ी लोन और चालान का उपयोग करके लेन-देन को उचित ठहराना।

धन शोधन के प्रभाव:

- **सुरक्षा जोखिम में वृद्धि:**
  - **आतंकवाद को वित्तपोषण:** आतंकवादी गतिविधियों को वित्तीय सहायता देने के लिए धन शोधन का उपयोग किया जाता है।
    - उदाहरण: 26/11 मुंबई हमलों को आंशिक रूप से शोधन किए गए धन द्वारा वित्तपोषित किया गया था।
  - **संगठित अपराध:** धन शोधन मादक पदार्थों की तस्करी,

मानव तस्करी और हथियारों की तस्करी जैसी अवैध गतिविधियों को बढ़ावा देता है।
- » **उग्रवाद:** विद्रोहियों को वित्तीय सहायता देने और राष्ट्रीय सुरक्षा को अस्थिर बनाने के लिए धन शोधन का उपयोग होता है।

- **आर्थिक परिणाम:**
  - » **वैध व्यवसायों को नुकसान:** शैल कंपनियां बाजार प्रतिस्पर्धा को विकृत करती हैं।
  - » **वित्तीय बाजारों में अस्थिरता:** अवैध धन के प्रभाव से बैंकों में तरलता संकट उत्पन्न हो सकता है, जो वित्तीय स्थिरता को प्रभावित करता है।
  - » **सरकारी नियंत्रण की हानि:** अवैध वित्तीय प्रवाह आर्थिक नीति को प्रभावित कर सकता हैं, जिससे सरकार की नीति और नियंत्रण क्षमता कमजोर हो जाती है।
  - » **आर्थिक हानि:** यह धन को उत्पादक क्षेत्रों से हटा कर कम गुणवत्ता वाले निवेशों में स्थानांतरित करता है, जिससे आर्थिक विकास प्रभावित होता है।
- **सामाजिक प्रभाव:**
  - » **अपराध को बढ़ावा:** अवैध धन अपराधी समूहों को अपने प्रभाव का विस्तार करने का अवसर प्रदान करता है।
  - » **संस्थाओं को भ्रष्ट करता है:** अवैध धन, अपराधियों को राजनीति और कानून प्रवर्तन पर अपनी पकड़ मजबूत करने का अवसर देता है।
  - » **विश्वास का कमजोर होना:** सरकार और वित्तीय संस्थाओं में विश्वास को कमजोर करता है।

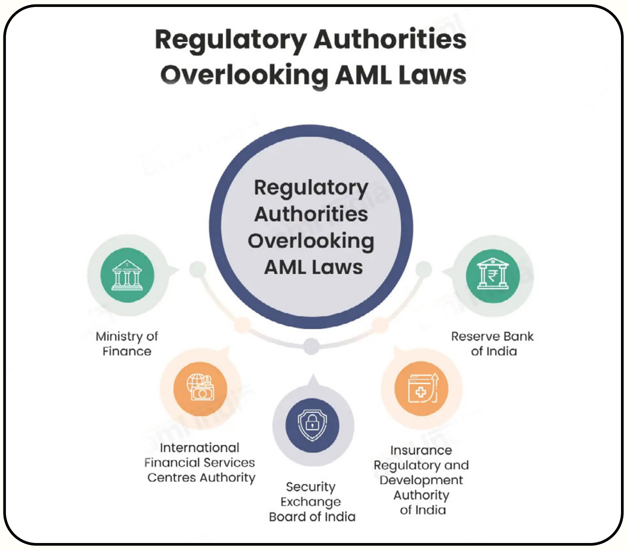

भारत में धन शोधन निरोधक उपाय:

- **धन शोधन निरोधक अधिनियम, 2002 (PMLA):** अधिकारियों को अवैध संपत्तियों को जब्त करने की अनुमति देता है।
- **वित्तीय खुफिया इकाई (FIU-IND):** यह संदिग्ध वित्तीय गतिविधियों की निगरानी और रिपोर्टिंग करता है।
- **प्रवर्तन निदेशालय (ED):** धन शोधन के मामलों की जांच और अभियोजन (Prosecution) करता है।

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर धन शोधन निरोधक ढांचा:

- **वित्तीय क्रियावली कार्यबल (FATF):** धन शोधन निरोधक (AML) के लिए वैश्विक मानकों को निर्धारित करता है।
- **संयुक्त राष्ट्र वैश्विक कार्यक्रम (GPML):** देशों को धन शोधन और आतंकवाद वित्तपोषण से लड़ने में मदद करता है।
- **यूएन वियना सम्मेलन (1988):** धन शोधन को अपराध घोषित करता है और इसके खिलाफ अंतरराष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देता है।
- **एशिया/प्रशांत समूह (APG):** एशिया-प्रशांत क्षेत्र में FATF अनुपालन को प्रोत्साहित करता है।
- **यूरोसीयाई समूह (EAG):** धन शोधन और आतंकवाद वित्तपोषण से लड़ने के लिए एक क्षेत्रीय गठबंधन है।

मृत्युदंड पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला

सन्दर्भ:

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने आपराधिक न्याय प्रणाली में गंभीर खामियों का उल्लेख करते हुए, पत्नी और 12 वर्षीय बेटी की हत्या के दोषी व्यक्ति को दी गई मृत्युदंड की सजा को निरस्त कर दिया। साथ ही अदालत ने इस निर्णय में निष्पक्ष सुनवाई (Fair Trial) और उचित प्रक्रिया (Due Process) के सिद्धांतों को विशेष रूप से रेखांकित किया, विशेषकर आर्थिक और सामाजिक रूप से वंचित व्यक्तियों के संदर्भ में।

मृत्यु दंड को रद्द करने के कारण:

- **कानूनी प्रतिनिधित्व का अभाव:** अभियुक्त को मुकदमे के महत्वपूर्ण चरणों में पर्याप्त कानूनी सहायता नहीं मिली। उचित कानूनी बचाव (Adequate Legal Defense) का अभाव ही मुख्य कारणों में से एक था जिसके कारण न्यायालय ने मुकदमे को अनुचित पाया।
- **प्रक्रियागत कमियाँ:** न्यायालय ने पाया कि मुकदमे के संचालन में गंभीर खामियाँ थीं, जिनमें अभियुक्त को उचित कानूनी सलाह न दिया जाना भी शामिल था। इससे न्यायिक प्रक्रिया की निष्पक्षता प्रभावित हुई।
- **कमजोर समूहों द्वारा सामना किए जाने वाली चुनौतियां:** न्यायालय ने माना कि भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर व्यक्तियों के लिए अधिक चुनौतीपूर्ण साबित होती है। इस मामले में, अभियुक्त को अपनी कमजोर सामाजिक स्थिति के कारण अतिरिक्त कानूनी बाधाओं का सामना करना पड़ा।
- **मृत्युदंड और अपराध की निश्चितता:** पीठ ने मृत्युदंड के विषय पर प्रकाश डालते हुए कहा कि मृत्युदंड, सजा का सबसे कठोर रूप है, इसे तभी लगाया जाना चाहिए जब अभियुक्त के

अपराध के बारे में पूर्ण निश्चितता हो। इस मामले में, न्यायालय ने पाया कि ऐसी निश्चितता का अभाव था।

भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली:

- भारत की आपराधिक न्याय प्रणाली (Criminal Justice System) का उद्देश्य अपराध को रोकना, अपराधियों को दंडित करना, पीड़ितों को न्याय दिलाना और समाज में कानून एवं व्यवस्था बनाए रखना है। यह प्रणाली पुलिस, न्यायपालिका और सुधारात्मक तंत्र से मिलकर बनी है।

मुख्य घटक:

- **पुलिस**
  - » यह आपराधिक न्याय प्रणाली का पहला स्तंभ है।
  - » अपराध की सूचना प्राप्त करना, जांच करना, अपराधियों को गिरफ्तार करना और अदालत में अभियोजन पक्ष को साक्ष्य उपलब्ध कराना इसकी मुख्य जिम्मेदारियां हैं।
- **न्यायपालिका**
  - » न्यायपालिका का कार्य अपराधों की निष्पक्ष सुनवाई करना और दोषियों को सजा सुनाना है।
  - » यह संविधान और दंड संहिता के अनुसार न्यायिक प्रक्रिया को संचालित करती है।
  - » इसमें उच्चतम न्यायालय (Supreme Court), उच्च न्यायालय (High Court) और अधीनस्थ न्यायालय (Lower Courts) शामिल हैं।
- **सुधारात्मक प्रणाली (Correctional System)**
  - » इसका उद्देश्य दोषियों का पुनर्वास करना और उन्हें समाज की मुख्यधारा में शामिल करना है।
  - » इसमें जेल प्रणाली, प्रोबेशन, परोल और सुधारगृह शामिल हैं, जो अपराधियों को पुनः अपराध करने से रोकने के लिए बनाए गए हैं।

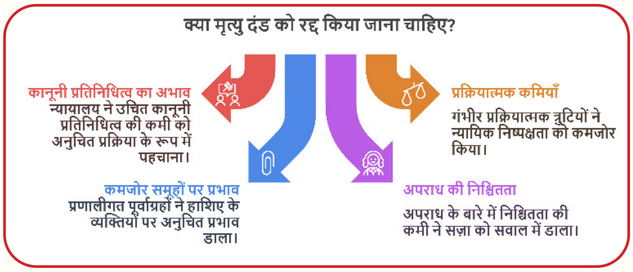

आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार से जुड़ी प्रमुख समितियाँ:

- **वोहरा समिति, 1993**
  - » **प्रमुख सिफारिशें:** विभिन्न एजेंसियों द्वारा एकत्रित खुफिया सूचनाओं का विश्लेषण और साझा करने के लिए एक समर्पित संस्था (Dedicated Agency) की स्थापना। आपराधिक न्याय प्रणाली में सुधार कर अपराधियों के खिलाफ सख्त कार्रवाई सुनिश्चित करना।
- **मलिमथ समिति, 2003**
  - » **प्रमुख सिफारिशें:** न्यायिक अधिकारियों एवं जांच एजेंसियों को अधिक संसाधन और तकनीकी प्रशिक्षण प्रदान करना। अभियोजन (Prosecution) और पुलिस व्यवस्था को अधिक कुशल बनाने हेतु अभियोजन एजेंसियों को अधिक स्वायत्तता देना।

भारत के नए मुख्य चुनाव आयुक्त (सीईसी) की नियुक्ति

संदर्भ:

हाल ही में ज्ञानेश कुमार को भारत के मुख्य चुनाव आयुक्त (CEC) के रूप में नियुक्त किया गया है। वह राजीव कुमार का स्थान लेंगे। हालांकि, विपक्ष के नेता ने इस नियुक्ति पर असहमति जताते हुए एक नोट प्रस्तुत किया। उन्होंने आग्रह किया कि जब तक सुप्रीम कोर्ट चयन प्रक्रिया से जुड़े नए कानून को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर अपना निर्णय नहीं देता, तब तक नियुक्ति को स्थगित रखा जाए।

सीईसी की नियुक्ति प्रक्रिया:

- पहले, मुख्य चुनाव आयुक्त (CEC) की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली मंत्रिपरिषद की सलाह पर की जाती थी, जिसमें सबसे वरिष्ठ चुनाव आयुक्त को पदोन्नत किया जाता था।
- हालाँकि, 2023 में, अनूप बरनवाल बनाम भारत संघ मामले में सुप्रीम कोर्ट ने फैसला सुनाया कि सीईसी और चुनाव आयुक्तों (ईसी) की नियुक्ति में एक चयन समिति होगी, जिसमें शामिल हैं:
  - » प्रधानमंत्री
  - » लोकसभा में विपक्ष के नेता (एलओपी या एलओपी अनुपस्थित होने पर सबसे बड़े विपक्षी दल के नेता)
  - » भारत के मुख्य न्यायाधीश (सीजेआई)

संसदीय प्रतिक्रिया:

- इस सन्दर्भ में, संसद ने मुख्य चुनाव आयुक्त और अन्य चुनाव आयुक्त (नियुक्ति, सेवा की शर्तें और कार्यकाल) अधिनियम, 2023 पारित किया, जिसमें चयन समिति में सीजेआई की जगह प्रधानमंत्री द्वारा नामित केंद्रीय कैबिनेट मंत्री को शामिल किया गया। इस बदलाव ने नियुक्ति प्रक्रिया में कार्यकारी प्रभुत्व को लेकर चिंताएँ पैदा की हैं।

नई नियुक्ति प्रक्रिया:

- 2023 अधिनियम में दो-चरणीय नियुक्ति प्रणाली शुरू की गई है:
  - » विधि मंत्री और दो वरिष्ठ सचिवों के नेतृत्व में एक खोज समिति पांच उम्मीदवारों की सूची बनाती है।
  - » **चयन समिति:** इसके बाद प्रधानमंत्री, विपक्ष के नेता और एक केंद्रीय मंत्री से मिलकर बनी समिति नियुक्ति को अंतिम रूप देती है, जिसे बाद में राष्ट्रपति द्वारा औपचारिक रूप से चुना जाता है। चयन समिति खोज समिति द्वारा

सुझाए गए नामों के अलावा किसी अन्य व्यक्ति पर विचार कर सकती है।

- नए कानून के तहत, उम्मीदवारों को सरकार का पूर्व या वर्तमान सचिव होना चाहिए और चुनाव प्रबंधन का अनुभव होना चाहिए। सीईसी और अन्य ईसी छह वर्ष की अवधि के लिये या 65 वर्ष की आयु तक, जो भी पहले हो, पद पर बने रहेंगे। जिसमें पुनर्नियुक्ति की कोई संभावना नहीं है।

प्रतिस्पर्धा कानूनों में संशोधनः CCI का नया मसौदा विनियमन 2025

संदर्भः

हाल ही में भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (CCI) ने 'भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (उत्पादन की लागत का निर्धारण) विनियमन, 2025' का मसौदा प्रस्तुत किया है। यह पहल प्रतिस्पर्धा (संशोधन) अधिनियम, 2023 के तहत की गई है, जिसका उद्देश्य भारत के प्रतिस्पर्धा कानूनों को अधिक प्रभावी और आधुनिक बनाना है। इसका लक्ष्य वैश्विक सर्वोत्तम प्रथाओं के अनुरूप प्रतिस्पर्धा संबंधी नियमों को संरेखित करना है।

प्रस्तावित विनियमन का उद्देश्यः

- इस मसौदा विनियमन का उद्देश्य अनुचित मूल्य निर्धारण (Predatory Pricing) से जुड़े मामलों में उत्पादन लागत तय करने की प्रक्रिया को प्रभावी और स्पष्ट बनाना है। यह नया विनियमन मौजूदा भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (उत्पादन लागत निर्धारण) विनियमन, 2009 को प्रतिस्थापित करेगा।
- CCI ने हितधारकों के लिए 17 फरवरी से 19 मार्च, 2025 तक परामर्श अवधि रखी है, जहां वे अपनी प्रतिक्रिया ऑनलाइन पोर्टल के माध्यम से भेज सकते हैं।

अनुचित मूल्य निर्धारण (Predatory Pricing):

- अनुचित मूल्य निर्धारण (Predatory Pricing) एक ऐसी रणनीति है, जिसमें कोई बड़ी कंपनी अपने प्रतिस्पर्धियों (Competitors) को बाजार से बाहर करने के लिए अपनी कीमतें उत्पादन लागत से भी कम कर देती है। जब प्रतिस्पर्धी कमजोर हो जाते हैं या पूरी तरह खत्म हो जाते हैं, तब यह कंपनी कीमतें बढ़ाकर मुनाफा कमाने लगती है।
- प्रतिस्पर्धा अधिनियम, 2002 की धारा 4(2)(A) इस तरह की अनैतिक रणनीतियों पर रोक लगाती है, क्योंकि इससे बाजार में अनुचित प्रभुत्व (Unfair Market Dominance) बन सकता है।
- इस अधिनियम के तहत, किसी मूल्य निर्धारण को अनुचित मूल्य निर्धारण तब माना जाएगा जब ये तीन शर्तें पूरी हों:
  - » **बाजार स्थितिः** फर्म के पास महत्वपूर्ण बाजार शक्ति होनी चाहिए।
  - » **लागत से कम मूल्य निर्धारणः** कीमतों को जानबूझकर उत्पादन की लागत से कम निर्धारित किया जाना चाहिए।
  - » **प्रतिस्पर्धियों को बाजार से बाहर करने की रणनीतिः** फर्म का उद्देश्य प्रतिस्पर्धियों को बाजार से बाहर करना होना चाहिए।
- 2025 के मसौदा विनियमन आधुनिक लागत बेंचमार्क (Cost Benchmarking) को अपनाने का प्रस्ताव करते हैं, ताकि अनुचित मूल्य निर्धारण (Predatory Pricing) को अधिक प्रभावी ढंग से विनियमित किया जा सके। इसमें समकालीन आर्थिक सिद्धांतों और वैश्विक प्रतिस्पर्धा मानकों (Global Competition Standards) को शामिल किया गया है।
- भारतीय प्रतिस्पर्धा आयोग (CCI) को बाजार विकृतियों (Market Distortions) को रोकने के लिए विशिष्ट क्षेत्रों में दंड, सुधारात्मक उपाय और मूल्य निर्धारण विनियमन (Pricing Regulation) लागू करने का अधिकार प्राप्त है।

Difference between 2009 and draft 2025 regulation

CCI (Determination of Cost of Production) Regulations, 2009	CCI (Determination of Cost of Production) Regulations, 2025
The regulation relied on market value, that was defined as consideration which the customer pays or agrees to pay for a product that is/can be sold or provided.	The regulation relies on average total cost, i.e., defined as total cost divided by total output during the referred period.
The determination of cost included cost concepts such as avoidable cost, long-run average incremental cost, market value.	The determination of cost proposed to include cost concepts such as average total cost, average avoidable cost, or long-run average incremental cost.
The proposed draft is a shift from market value to average total cost as a factor for the determination of cost.	

अनुचित मूल्य निर्धारण को विनियमित करने में चुनौतियाँः

- 2009 के बाद से, भारत की बाजार गतिशीलता में काफी बदलाव आया है, विशेषकर डिजिटल बाजारों और प्लेटफॉर्म-आधारित अर्थव्यवस्थाओं के उदय के साथ। यह परिवर्तन अनुचित मूल्य निर्धारण और वैध प्रतिस्पर्धी मूल्य निर्धारण रणनीतियों के बीच अंतर करना चुनौतीपूर्ण बनाता है।
- अद्यतित लागत मूल्यांकन पद्धतियों (Updated Cost Assessment Methods) का उद्देश्य प्रतिस्पर्धा-विरोधी मूल्य निर्धारण रणनीतियों (Anti-Competitive Pricing Strategies) की पहचान करने में अधिक स्पष्टता प्रदान करना है।
- विशेषज्ञों का मानना है कि ये सुधार विनियामक निगरानी को बढ़ाएंगे, जिससे यह सुनिश्चित होगा कि प्रमुख फर्म अपनी बाजार शक्ति का दुरुपयोग न करें। नए दिशा-निर्देशों से मूल्य निर्धारण रणनीतियों में अनिश्चितता कम होने की भी उम्मीद है, जिससे

व्यवसायों को लाभ होगा, विशेषकर मूल्य-संवेदनशील क्षेत्रों में।

नक्शा (NAKSHA) परियोजना

सन्दर्भः

हाल ही में ग्रामीण विकास मंत्रालय ने 'राष्ट्रीय भू-स्थानिक ज्ञान-आधारित शहरी आवास भूमि सर्वेक्षण (नक्शा)' नामक एक पायलट परियोजना शुरू की है, जिसका उद्देश्य भू-स्थानिक तकनीक (Geospatial Technology) के माध्यम से शहरी भूमि अभिलेखों का आधुनिकीकरण करना है।

नक्शा (NAKSHA) परियोजनाः

- NAKSHA कार्यक्रम को 2024 में डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (DILRMP) के तहत शुरू किया गया था। इसका उद्देश्य शहरी क्षेत्रों में भूमि स्वामित्व का सटीक और अपडेटेड रिकॉर्ड तैयार करना है, जिससे पारदर्शिता बढ़े और भूमि विवाद कम हों।
- **विस्तार (Coverage):** यह परियोजना वर्तमान में अपने 1-वर्षीय पायलट चरण में है, जिसे 26 राज्यों और 3 केंद्र शासित प्रदेशों (UTs) के 152 शहरी स्थानीय निकायों (ULBs) में लागू किया जा रहा है। पायलट चरण की सफलता के बाद इसे पूरे देश में विस्तारित किया जाएगा।
- **तकनीकी भागीदारः** इस परियोजना में भारतीय सर्वेक्षण विभाग तकनीकी भागीदार के रूप में कार्य कर रहा है। वह हवाई सर्वेक्षण और ऑर्थोरेक्टिफाइड इमेजरी के माध्यम से सटीक मानचित्रण सुनिश्चित करेगा।
- **प्लेटफॉर्म विकासः** मध्य प्रदेश राज्य इलेक्ट्रॉनिक विकास निगम (MPSEDC) इस परियोजना के लिए एक संपूर्ण वेब-जीआईएस प्लेटफॉर्म (Web-GIS Platform) विकसित कर रहा है।
- **समन्वयः** इस पहल का समन्वय राज्य स्तरीय समिति (SLC) द्वारा किया जा रहा है, जो मुख्य सचिव (Chief Secretary) के कार्यालय के अधीन कार्य करती है ताकि प्रभावी क्रियान्वयन और निगरानी सुनिश्चित की जा सके।

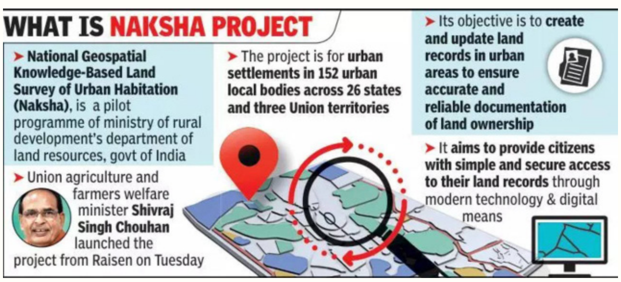

भूमि अभिलेखों के डिजिटलीकरण का महत्वः

- **नागरिकों को सशक्त बनानाः** भूमि अभिलेखों का डिजिटलीकरण नागरिकों को भूमि स्वामित्व का कानूनी दस्तावेज उपलब्ध कराकर उनके अधिकारों को सशक्त बनाती हैं।
- **विवादों में कमीः** डिजिटल भूमि अभिलेख स्वामित्व से जुड़े विवादों को कम करने में मदद करते हैं, जिससे न्यायिक प्रणाली पर भार घटता है।
- **शासन में सुधारः** पारदर्शी और प्रभावी डिजिटल दस्तावेजीकरण के माध्यम से यह परियोजना शहरी योजना और नीति निर्माण को अधिक सुगम बनाती है।
- **निवेश को प्रोत्साहनः** भूमि रिकॉर्ड के डिजिटलीकरण से व्यापार करना आसान होता है, जिससे शहर निवेश के आकर्षक केंद्र बन सकते हैं और आर्थिक विकास को बढ़ावा मिलता है।

डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम के बारे में:

- राष्ट्रीय भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (NLRMP), जिसे भारत सरकार ने वर्ष 2008 में शुरू किया था, का वर्ष 2016 में नाम बदलकर डिजिटल इंडिया भूमि अभिलेख आधुनिकीकरण कार्यक्रम (DILRMP) रखा गया। इसका उद्देश्य भूमि अभिलेखों का डिजिटलीकरण, आधुनिकीकरण और एक केंद्रीकृत प्रबंधन प्रणाली विकसित करना हैः
  - » यह एक केंद्रीय क्षेत्र योजना है, जिसे 100% केंद्र सरकार द्वारा वित्त पोषित किया जाता है।
  - » DILRMP को 2021-2026 की अवधि के लिए पांच वर्षों तक बढ़ाया गया है।

मुख्य घटकः

- भूमि और पंजीकरण अभिलेखों का कंप्यूटरीकरण।
- राजस्व न्यायालयों (त्मअमदनम ब्वनतजे) का डिजिटलीकरण।
- आधार के साथ एकीकरण, जिससे स्वामित्व सत्यापन में पारदर्शिता आएगी।

अन्य प्रमुख पहलें:

- **विशिष्ट भूखंड पहचान संख्या (ULPIN):** इसे भूमि की आधार संख्या भी कहा जाता है, यह प्रत्येक भूखंड के लिए एक विशिष्ट पहचान है। इसका उद्देश्य भूमि अभिलेखों में धोखाधड़ी को रोकना है, जिससे भूमि स्वामित्व की पारदर्शिता और विश्वसनीयता सुनिश्चित हो सके।
- **भूमि सम्मानः** भूमि अभिलेखों के डिजिटलीकरण और आधुनिकीकरण में उत्कृष्ट कार्य करने वाले राज्यों और जिलों को सम्मानित करने की पहल।

मणिपुर में राष्ट्रपति शासन

संदर्भः

हाल ही में मणिपुर में मुख्यमंत्री एन. बीरेन सिंह के इस्तीफे के बाद, नई सरकार के गठन में विफलता के कारण राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू ने संविधान के अनुच्छेद 356 के तहत राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू हो गया है।

मणिपुर में राष्ट्रपति शासन के प्रभावः

- **शासन व्यवस्था:** राज्य का प्रशासन राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में राज्यपाल द्वारा संचालित किया जाएगा, जिसमें मुख्य सचिव सहायता करेंगे।
- **विधानसभा की स्थिति:** राज्य की विधान सभा को निलंबित किया जा सकता है या भंग किया जा सकता है।
- **अध्यादेश लागू करने का शक्ति:** जब संसद सत्र में नहीं होती है, तब राष्ट्रपति को राज्य प्रशासन से संबंधित अध्यादेश जारी करने का अधिकार प्राप्त होता है।

राष्ट्रपति शासन के बारे में:

- भारतीय संविधान के अनुच्छेद 356 के तहत राष्ट्रपति शासन तब लागू किया जाता है, जब किसी राज्य सरकार को संविधान के प्रावधानों के अनुसार कार्य करने में असमर्थ पाया जाता है। ऐसी स्थिति में केंद्र सरकार राज्य का प्रत्यक्ष नियंत्रण अपने हाथ में ले लेती है, जिसके परिणामस्वरूप मुख्यमंत्री एवं मंत्रिपरिषद को पद से हटा दिया जाता है और राज्य विधानमंडल को या तो निलंबित किया जाता है या भंग कर दिया जाता है।

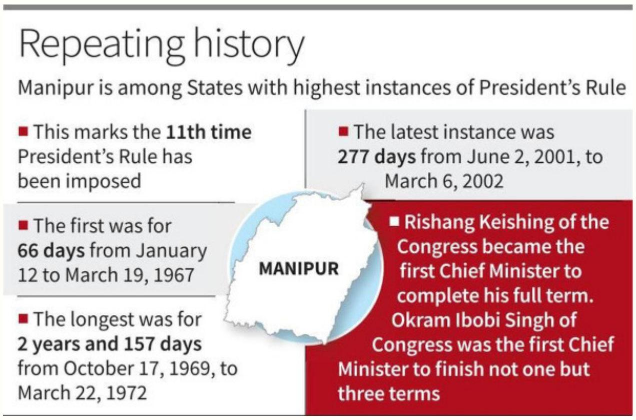

राष्ट्रपति शासन लागू करने की शर्तें:

- **शासन व्यवस्था में अस्थिरता:** जब किसी राज्य में गठबंधन सरकार टूट जाती है और कोई भी दल या गठबंधन नया सरकार बनाने में सक्षम नहीं होता है।
- **संवैधानिक नियमों का उल्लंघन:** जब राज्यपाल अपनी रिपोर्ट में यह उल्लेख करता है कि राज्य सरकार संविधान के प्रावधानों के अनुसार कार्य करने में असमर्थ है और राज्य में संवैधानिक तंत्र विफल हो गया है।
- **चुनावों की अनिश्चितता:** जब युद्ध, प्राकृतिक आपदा या महामारी जैसी असाधारण परिस्थितियों के कारण चुनाव स्थगित करने की स्थिति में आ जाए।

आलोचना और सुझाव:

- **दुरुपयोग को लेकर चिंता:** कुछ विशेषज्ञों का मानना है कि अनुच्छेद 356 का उपयोग संघीय ढांचे को प्रभावित करने के लिए किया गया है।

सिफारिशें:

- सरकारिया आयोग (1983) ने सुझाव दिया कि राष्ट्रपति शासन को केवल अंतिम उपाय के रूप में ही लागू किया जाना चाहिए, जब सभी अन्य विकल्प समाप्त हो चुके हों।
- **एस. आर. बोम्मई मामला (1994):** राष्ट्रपति शासन लगाने के लिए सख्त दिशानिर्देश बनाए गए।

राष्ट्रपति शासन के प्रमुख उदाहरण:

- **जम्मू और कश्मीर:** वर्ष 2019 में अनुच्छेद 370 हटाए जाने के बाद जम्मू और कश्मीर में राष्ट्रपति शासन लागू किया गया था।
- मणिपुर में अब तक 11 बार राष्ट्रपति शासन लगाया जा चुका है, जो कि किसी भी अन्य राज्य की तुलना में सबसे अधिक है।
- छत्तीसगढ़ और तेलंगाना में अब तक राष्ट्रपति शासन लागू नहीं किया गया है।

मणिपुर में जातीय हिंसा:

- मणिपुर में मई 2023 से जारी जातीय हिंसा राज्य की अस्थिरता का एक प्रमुख कारण रही है। यह संघर्ष मुख्य रूप से बहुसंख्यक मैतेई समुदाय और अल्पसंख्यक कुकी-जो समुदाय के बीच हुआ।
- इस तनाव की शुरुआत मणिपुर उच्च न्यायालय के उस आदेश के बाद हुई, जिसमें मैतेई समुदाय को कुछ विशेषाधिकार देने की सिफारिश की गई थी। इस निर्णय से दोनों समुदायों के बीच असंतोष बढ़ गया, क्योंकि मैतेई समुदाय मुख्य रूप से मैदानी क्षेत्रों में निवास करता है, जबकि कुकी-जो समुदाय पहाड़ी इलाकों में रहता है।
- इस संघर्ष के परिणामस्वरूप राज्य में आगजनी, तोड़फोड़ और अन्य गंभीर अपराधों की घटनाएं बढ़ गई, जिससे कानून-व्यवस्था की स्थिति गंभीर रूप से प्रभावित हुई।

टोल कर में कमी और राजमार्ग प्रबंधन सुधार पर PAC की सिफारिश

संदर्भ:

हाल ही में लोक लेखा समिति (PAC) ने सरकार से राष्ट्रीय राजमार्गों (NH) पर लागू टोल कर नियमों की समीक्षा करने की सिफारिश की है। यह सिफारिश लोक लेखा समिति द्वारा आयोजित एक बैठक में पुरानी टोल शुल्क संरचनाओं, सुविधायें और रखरखाव की समस्याओं के मद्देनजर की गई।

मुख्य मुद्दे:

- **टोल कर संरचना और राजस्व वृद्धि:** मौजूदा टोल कर प्रणाली, जोकि NH शुल्क नियम, 2008 के तहत संचालित है, टोल शुल्क को प्रति किलोमीटर निर्धारित दर पर तय करती है। PAC ने यह ध्यान दिलाया कि वाहनों की संख्या में वृद्धि के साथ टोल से होने वाला राजस्व काफी बढ़ गया है। इसने सुझाव दिया कि टोल शुल्क की समीक्षा की जाए और उसे कम करने पर विचार किया जाए, ताकि यात्रियों से उचित शुल्क लिया जा सके।

- **संविदाकारों द्वारा अनुपालन की कमी:** निजी ऑपरेटर (संविदाकार) अपने अनुबंधों का पालन नहीं कर रहे हैं, इसको लेकर चिंताएँ उठाई गई। समस्याओं में सड़क रखरखाव की कमी, उचित सुविधाओं (जैसे विश्राम स्थल और चिकित्सा सहायता) का अभाव और दुर्घटना संभावित क्षेत्रों का सही तरीके से प्रबंधन न होना शामिल है।
- **टोल प्लाजा पर यातायात का जमावड़ा:** फास्टैग्स (FASTags) की शुरुआत के बावजूद, टोल प्लाजा पर लंबी कतारें एक प्रमुख चिंता का विषय बनी हुई हैं। PAC ने पालीयेकरा टोल प्लाजा का उदाहरण दिया, जहाँ संविदाकारों ने अनुबंधों का पालन नहीं किया, जिससे यात्रियों को असुविधा हुई।
- PAC सरकार के खर्च पर महत्वपूर्ण निगरानी रखता है, यह सुनिश्चित करता है कि संसद द्वारा स्वीकृत धन का उचित और प्रभावी उपयोग हो।
- विशेष रूप से यह सरकार की वित्तीय गतिविधियों के संदर्भ में पारदर्शिता और जवाबदेही बनाए रखने में मदद करता है।

PAC ने टोल शुल्क नियमों की समीक्षा करने का आग्रह किया है और यह भी कहा है कि वाहनों की बढ़ती संख्या के कारण टोल शुल्क को कम किया जाए। साथ ही, यह संविदाकारों द्वारा अनुबंधों के पालन को कड़ाई से लागू करने और टोल संग्रहण के लिए नई तकनीकों से जुड़ी गोपनीयता चिंताओं पर भी विचार करने की सिफारिश करता है।

लोक लेखा समिति (PAC) के बारे में:

- **गठन:** लोक लेखा समिति को लोकसभा के नियम 308 के तहत गठित किया गया है।
- इस समिति में कुल 22 सदस्यीय होते है। 15 सदस्य लोकसभा से चुने जाते हैं और 7 सदस्य तक राज्यसभा से चुने जाते हैं।
- सदस्यों का चुनाव प्रत्येक वर्ष अनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जाता हैं।

लोक लेखा समिति के कार्य:

- समिति सरकार की आय और व्यय की जांच करती है ताकि वित्तीय जवाबदेही सुनिश्चित हो सके।
- समिति सुनिश्चित करती है कि संसद द्वारा स्वीकृत धन का उपयोग सही तरीके से किया जाए।
- यह वार्षिक वित्तीय लेखों और नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक (CAG) की लेखा रिपोर्टों की समीक्षा करता है।
- यह सरकार के अधिकारियों से सार्वजनिक खर्च की अर्थव्यवस्था, दक्षता और प्रभावशीलता के लिए जवाबदेही तय करता है।

लोक लेखा समिति का महत्व:

प्रवास और विदेशी विधेयक, 2025

संदर्भ:

केंद्र सरकार प्रवास और विदेशी नागरिकों से जुड़े नियमों को आधुनिक बनाने के लिए 'प्रवास और विदेशी विधेयक, 2025' लाने की तैयारी में है। यह नया कानून भारत में विदेशियों के प्रवेश, यात्रा और नियमों को नियंत्रित करेगा और पुराने हो चुके कानूनों की जगह लेगा।

कौन-कौन से पुराने कानून बदले जाएंगे?

- यह विधेयक स्वतंत्रता-पूर्व और पुराने कानूनों को हटाकर उनकी जगह लेगा, जिनमें शामिल हैं:
  - पासपोर्ट (भारत में प्रवेश) अधिनियम, 1920
  - विदेशियों का पंजीकरण अधिनियम, 1939
  - विदेशियों का अधिनियम, 1946
  - प्रवासन (वाहकों की जिम्मेदारी) अधिनियम, 2000
- ये कानून द्वितीय विश्व युद्ध के समय के हैं, जो आज की प्रवासन चुनौतियों के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

मुख्य प्रावधान:

- **कड़े दंड और जुर्माने:**
  - **बिना अनुमति प्रवेश:** भारत में बिना वैध अनुमति प्रवेश करने पर रु. 5 लाख तक का जुर्माना लगेगा।
  - **नकली पासपोर्ट का उपयोग:** फर्जी पासपोर्ट का उपयोग करने पर 10 लाख तक का जुर्माना होगा।
- **संस्थानों की जिम्मेदारी:** यूनिवर्सिटी, अस्पताल और अन्य संस्थानों को यह सुनिश्चित करना होगा कि वे विदेशी नागरिकों के प्रवेश नियमों का पालन कर रहे हैं।
- **विदेशियों के नियमन के स्पष्ट नियम:** भारत में मौजूद विदेशी नागरिकों का पंजीकरण, यात्रा और अन्य गतिविधियों को नियंत्रित किया जाएगा। प्रशासन को यह अधिकार दिया जाएगा कि वह विदेशियों के अक्सर जाने वाले स्थानों की निगरानी कर सके।
- **एयरलाइंस और जहाजों की जिम्मेदारी:** एयरलाइंस और शिपिंग कंपनियां उन विदेशी नागरिकों को लाने के लिए जिम्मेदार

होंगी, जिनके दस्तावेज भारतीय कानूनों के अनुसार सही नहीं हैं।

- **विदेशियों को देश से निकालने का अधिकार:** केंद्र सरकार को यह अधिकार मिलेगा कि वह उन विदेशी नागरिकों को देश से हटा सके, जो प्रवास नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं।
- **आधुनिक और सरल प्रक्रियाएं:** पासपोर्ट और वीजा से जुड़े नियमों को अधिक व्यवस्थित और आसान बनाया जाएगा, जिससे प्रवास प्रणाली सुरक्षित और कुशल बन सके।

इस विधेयक के प्रभाव:

- भारत में आने वाले विदेशी नागरिकों पर अधिक नियंत्रण होगा।
- यूनिवर्सिटी और अस्पतालों की जिम्मेदारी साफ तौर पर तय होगी।
- बिना अनुमति प्रवेश और नकली दस्तावेजों के खिलाफ कड़ी कार्रवाई होगी। भारत की प्रवास नीतियां अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप होंगी।

तमिलनाडु सरकार और राज्यपाल विवाद: सुप्रीम कोर्ट में सुनवाई

संदर्भ:

हाल ही में तमिलनाडु सरकार और राज्यपाल आर. एन. रवि के बीच चल रहे विवाद ने राज्यपालों की विधायी प्रक्रिया में भूमिका को लेकर एक महत्त्वपूर्ण संवैधानिक विमर्श को जन्म दिया है। वर्तमान में यह मामला सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) के समक्ष विचाराधीन है और यह प्रश्न उठाता है कि राज्य विधानसभाओं द्वारा पारित विधेयकों पर राज्यपाल की सहमति (Assent) रोकने की संवैधानिक सीमा क्या होनी चाहिए।

मुद्दे का विषय:

- तमिलनाडु सरकार का राज्यपाल के साथ विवाद भारतीय संविधान के अनुच्छेद 200 के व्याख्या को लेकर है। यह अनुच्छेद कहता है कि जब कोई विधेयक राज्य विधानसभा द्वारा पारित होने के बाद राज्यपाल के पास प्रस्तुत किया जाता है, तो राज्यपाल को यह निर्णय लेना चाहिए कि:
  - » विधेयक को स्वीकृति प्रदान की जाए, जिससे वह विधेयक अधिनियम का रूप ले सके।
  - » विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रखा जाए।
  - » विधेयक पर सहमति रोक दी जाए और उसे पुनर्विचार हेतु राज्य विधानसभा को वापस भेजा जाए।
- अनुच्छेद 200 यह भी कहता है कि राज्यपाल को यह कार्रवाई 'जल्द से जल्द' करनी चाहिए। तमिलनाडु सरकार का तर्क है कि इन विधेयकों पर सहमति में लंबे समय तक देरी लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कमजोर करती है और संविधान के सिद्धांतों का उल्लंघन करती है। राज्य में सुप्रीम कोर्ट में जाने के बाद, अन्य विपक्षी शासित राज्यों ने भी सहमति में देरी को लेकर इसी तरह की चिंताएं उठाई हैं।

सुप्रीम कोर्ट के समक्ष प्रमुख मुद्दे:

- **बार-बार सहमति रोकने का संवैधानिक प्रश्न:** तमिलनाडु सरकार ने यह सवाल उठाया है कि क्या राज्यपाल को उस विधेयक पर दोबारा सहमति रोकने का अधिकार है, जिसे राज्य विधानसभा ने पहली बार वापस भेजे जाने के बाद दोबारा पारित किया हो। इस संदर्भ में, सुप्रीम कोर्ट यह विचार करेगा कि जब विधानसभा किसी विधेयक को पुन: पारित कर देती है, तो क्या राज्यपाल के पास उसे रोकने का अधिकार है, या फिर उन्हें अनिवार्य रूप से उसे स्वीकृति देनी होगी अथवा राष्ट्रपति के विचारार्थ भेजना होगा।
- **राज्यपाल का विधेयकों को राष्ट्रपति के पास भेजने का अधिकार:** सुप्रीम कोर्ट यह परीक्षण करेगा कि राज्यपाल को विधेयक को राष्ट्रपति के पास भेजने का अधिकार किस हद तक प्राप्त है। हालांकि, अनुच्छेद 200 राज्यपाल को विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रखने की अनुमति देता है, लेकिन अदालत यह मूल्यांकन करेगी कि यह अधिकार सभी विधेयकों पर लागू होता है या केवल उन विधेयकों पर जो विशेष संवैधानिक महत्व के होते हैं।
- **पॉकेट वीटो:** एक अन्य महत्वपूर्ण मुद्दा पॉकेट वीटो है, जिसमें राज्यपाल विधेयक पर सहमति देने में अनिश्चितकालीन देरी कर सकते हैं। तमिलनाडु सरकार ने यह सवाल उठाया है कि क्या ऐसी लंबी देरी की कोई संवैधानिक वैधता है। सुप्रीम कोर्ट को यह स्पष्ट करना पड़ सकता है कि क्या इस प्रकार की निष्क्रियता के लिए कोई समय-सीमा निर्धारित है, जिसके बाद यह असंवैधानिक मानी जाएगी।
- **सहमति के लिए समय सीमा:** हालाँकि अनुच्छेद 200 में कहा गया है कि सहमति 'जल्द से जल्द' दी जानी चाहिए, इसमें इस क्रिया के लिए कोई निश्चित समय सीमा नहीं दी गई है। सुप्रीम कोर्ट ने पहले देरी के मुद्दे पर विचार किया है, लेकिन अभी तक राज्यपालों के लिए एक बाध्यकारी समयसीमा निर्धारित नहीं की है। अदालत यह विचार करेगी कि क्या उसे सहमति के लिए स्पष्ट समय सीमा निर्धारित करनी चाहिए और यदि हां, तो वह समय सीमा क्या होनी चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट के पूर्व निर्णय:

- पूर्व में, सुप्रीम कोर्ट ने यह महत्वपूर्ण निर्णय दिया है कि राज्यपाल विधेयक पर सहमति को अनिश्चितकाल तक लंबित नहीं रख सकते। उदाहरण के लिए, 2016 के नाबम रेबिया बनाम उपराज्यपाल मामले में, न्यायमूर्ति मदन बी. लोकुर ने टिप्पणी की थी कि राज्यपाल को विधेयक को पुनर्विचार के लिए विधानसभा को संदेश के साथ वापस भेजना चाहिए, जिसमें किसी भी सुझाए गए संशोधनों का उल्लेख हो, लेकिन वे विधेयक पर स्थायी रूप से निर्णय रोक नहीं सकते।
- इस निर्णय की 2023 के नवंबर में पुन: पुष्टि की गई, जब सुप्रीम कोर्ट ने पंजाब सरकार द्वारा दायर एक समान मामले की सुनवाई करते हुए स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 200 में 'जल्द से जल्द' (as soon as possible) का अर्थ यह है कि राज्यपाल विधेयक पर अनिश्चितकाल तक निर्णय लंबित नहीं रख सकते।

उच्चतम न्यायालय का गिरफ्तारी पर निर्णय

संदर्भ:

हाल ही में भारत के उच्चतम न्यायालय ने एक ऐतिहासिक फैसले में यह निर्णय दिया कि गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उनकी गिरफ्तारी के आधार के बारे में जानकारी देना केवल एक प्रक्रियात्मक औपचारिकता नहीं, बल्कि एक अनिवार्य संविधानिक आवश्यकता है। न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि यदि गिरफ्तारी के आधार की सूचना प्रथम अवसर पर प्रदान नहीं की जाती है, तो उस गिरफ्तारी को अवैध माना जाएगा, जो भारतीय संविधान के अनुच्छेद 22(1) के तहत व्यक्तियों के स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करती है।

मामला और निर्णय:

- यह निर्णय एक ऐसे मामले में सुनाया गया, जिसमें हरियाणा पुलिस ने एक व्यक्ति को गिरफ्तार किया था। उच्चतम न्यायालय ने पाया कि गिरफ्तारी संविधान के अनुच्छेद 22(1) के अनुरूप नहीं थी, जिसके कारण इसे असंवैधानिक घोषित किया गया।
- इसके परिणामस्वरूप, न्यायालय ने व्यक्ति की तत्काल रिहाई का आदेश दिया, यह स्पष्ट करते हुए कि कानून प्रवर्तन एजेंसियों को संविधान द्वारा निर्धारित सुरक्षा उपायों का सख्ती से पालन करना चाहिए।

गिरफ्तारी के विशिष्ट आधार की आवश्यकता:

- न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि गिरफ्तारी के आधार को निम्नलिखित तरीके से सूचित किया जाना चाहिए:
  - » इसे उस भाषा में प्रभावी रूप से संप्रेषित किया जाए, जिसे गिरफ्तार व्यक्ति समझता हो।
  - » यह इतना विस्तृत होना चाहिए कि व्यक्ति को हिरासत के कारण का ठीक से पता चल सके।
- हालाँकि, न्यायालय ने यह अनिवार्य नहीं किया कि गिरफ्तारी के आधार को लिखित रूप में प्रदान किया जाए, लेकिन उसने पंकज बंसल बनाम यूनियन ऑफ इंडिया मामले का उल्लेख किया, जिसमें यह सुझाव दिया गया था कि लिखित रूप में सूचना देना आदर्श तरीका है। न्यायालय ने यह भी कहा कि इस लिखित तरीके को अपनाने से अनुपालन में चूक के जोखिम को समाप्त किया जा सकता है।

अनुपालन न होने के कानूनी परिणाम:

- निर्णय में यह स्पष्ट किया गया कि यदि अनुच्छेद 22(1) का पालन नहीं किया जाता, तो गिरफ्तारी असंवैधानिक हो जाती है, अर्थात:
  - » गिरफ्तार व्यक्ति को हिरासत में रखने की अनुमति नहीं है।
  - » अभियोग पत्र दाखिल करने या मजिस्ट्रेट का आदेश प्राप्त करने से असंवैधानिक गिरफ्तारी को वैध नहीं ठहराया जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त, जब गिरफ्तार व्यक्ति को न्यायिक मजिस्ट्रेट के सामने रिमांड के लिए पेश किया जाता है, तो मजिस्ट्रेट का कर्तव्य है कि वह सुनिश्चित करें कि अनुच्छेद 22(1) का पालन किया गया है। यदि अनुपालन स्थापित नहीं होता, तो व्यक्ति को तुरंत रिहा किया जाना चाहिए।

कानून प्रवर्तन पर प्रमाण की जिम्मेदारी:

- उच्चतम न्यायालय ने यह भी निर्णय दिया कि जब गिरफ्तार व्यक्ति यह दावा करता है कि अनुच्छेद 22(1) का पालन नहीं किया गया, तो प्रमाण का बोझ जांच अधिकारी या एजेंसी पर होता है। कानून प्रवर्तन को यह ठोस प्रमाण प्रस्तुत करना होगा कि व्यक्ति को गिरफ्तार करने के कारणों के बारे में सूचित किया गया था।

यह निर्णय स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार और अनुच्छेद 22 में दिए गए सुरक्षा उपायों की पुष्टि है। यह सिद्ध करता है कि संविधानिक सुरक्षा उपाय वैकल्पिक नहीं, बल्कि कानून प्रवर्तन एजेंसियों के लिए एक बाध्यकारी कर्तव्य हैं। इन सुरक्षा उपायों के कठोर पालन को सुनिश्चित करते हुए, उच्चतम न्यायालय ने भारत की आपराधिक न्याय व्यवस्था को सशक्त किया है, जिससे मनमाने तरीके से गिरफ्तारी को रोका जा सकता है और नागरिकों के अधिकारों को मजबूती प्रदान की जा सकती है।

वन अधिनियम पर सुप्रीम कोर्ट का निर्देश

संदर्भ:

हाल ही में भारत के सुप्रीम कोर्ट ने यह निर्णय दिया है कि न तो केंद्र सरकार और न ही राज्य सरकारें वन भूमि को कम कर सकती हैं, जब तक कि वनीकरण के लिए समकक्ष भूमि प्रदान नहीं की जाती। यह निर्देश वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 में किए गए संशोधनों को चुनौती देने वाली याचिकाओं की सुनवाई के दौरान जारी किया गया। यह निर्णय वन क्षेत्रों की सुरक्षा और विकासात्मक परियोजनाओं के कारण होने वाली हानि को नए हरे-भरे क्षेत्रों से संतुलित करने के महत्व को रेखांकित करता है।

मुद्दा:

- यह विवाद 2023 में किए गए वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के संशोधन से उत्पन्न हुआ था, जिसका उद्देश्य यह परिभाषित करना था कि किस भूमि को वन के रूप में माना जाएगा।
- संशोधनों में धारा 1। जोड़ी गई, जिसके तहत वन की परिभाषा को 1980 के बाद घोषित या दर्ज की गई भूमि तक सीमित कर दिया गया था। याचिकाकर्ताओं का कहना था कि इससे पारिस्थितिकीय रूप से महत्वपूर्ण भूमि का बड़ा हिस्सा बाहर हो सकता है, जिससे संरक्षण के प्रयासों में कमी आ सकती है।
- 'वन' की परिभाषा एक प्रमुख विवाद का विषय बन गई। सरकार ने प्रस्तावित किया कि राज्य या स्थानीय प्राधिकृत निकायों द्वारा पहचानी गई भूमि भी वन के रूप में मानी जा सकती है, जिससे असंगति की चिंता उत्पन्न हुई। सुप्रीम कोर्ट ने इस पर हस्तक्षेप

किया और यह स्पष्ट किया कि वन को कानूनी रूप से कैसे परिभाषित और संरक्षित किया जाना चाहिए।

सुप्रीम कोर्ट का निर्णय:

- सुप्रीम कोर्ट ने अपने 1996 के TN गोदावर्मन थिरुमुलपद मामले के निर्णय को फिर से पुष्ट करते हुए 'वन' की व्यापक और समावेशी परिभाषा को बनाए रखने का समर्थन किया, ताकि सभी हरे-भरे क्षेत्रों की रक्षा की जा सके, चाहे वह वर्गीकृत हो, स्वामित्व में हो या सरकारी रिकॉर्ड में हो।
- कोर्ट ने सरकार को 'शब्दकोश में दिए गए अर्थ' के अनुसार 'वन' की परिभाषा को अपनाने का निर्देश दिया, ताकि अधिनियम का मूल उद्देश्य बनाए रखा जा सके। कोर्ट ने यह स्पष्ट किया कि वन में केवल दर्ज की गई भूमि ही नहीं, बल्कि निम्नलिखित भी शामिल होना चाहिए:
  - » वन जैसे क्षेत्र
  - » अवर्गीकृत वन
  - » समुदाय वन भूमि
- कोर्ट ने यह भी कहा कि यह व्यापक व्याख्या तब तक लागू रहेगी, जब तक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश सभी वन भूमि का एक समेकित रिकॉर्ड तैयार नहीं कर लेते, जिसमें वे भूमि भी शामिल हैं जो आधिकारिक रूप से पहचानी नहीं गई हैं।

वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 के बारे में:

- वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 को वन उन्मूलन को रोकने और भारत में पारिस्थितिकीय संतुलन की रक्षा करने के लिए लागू किया गया था।
- यह वन भूमि के गैर-वन प्रयोजनों के लिए स्थानांतरण को नियंत्रित करता है और वनीकरण को प्राथमिकता देता है।
- हाल ही में किए गए संशोधनों ने 'वन' की परिभाषा को फिर से परिभाषित करने और यह निर्धारित करने का प्रयास किया कि कौन सी भूमि वन संरक्षण कानून के तहत मानी जा सकती है।

सुप्रीम कोर्ट का निर्णय भारत के वन संरक्षण के लिए एक महत्वपूर्ण कदम है। वनीकरण के लिए समकक्ष भूमि की अनिवार्यता और वन की व्यापक परिभाषा को फिर से पुष्ट करते हुए, कोर्ट ने यह सुनिश्चित किया कि सभी हरे-भरे क्षेत्र सुरक्षित रहें, चाहे वे आधिकारिक रूप से दर्ज हों या नहीं। यह निर्णय संरक्षण प्रयासों को मजबूत करता है, जैव विविधता और पारिस्थितिकीय संतुलन की रक्षा करता है, भले ही विकासात्मक दबाव हों।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 पर केंद्र-राज्य गतिरोध

संदर्भ:

हाल ही में केंद्र सरकार ने यह स्पष्ट किया है कि जब तक तमिलनाडु राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 के कार्यान्वयन के लिए सहमति प्रदान नहीं करता, तब तक राज्य को समग्र शिक्षा अभियान के अंतर्गत स्वीकृत 2,000 करोड़ रुपये की वित्तीय सहायता उपलब्ध नहीं कराई जाएगी। इस निर्णय ने केंद्र और राज्य सरकार के बीच शिक्षा नीति को लेकर पहले से चल रहे संघीय टकराव (Federal Tussle) को और अधिक गहरा कर दिया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में त्रि–भाषा फॉर्मूला:

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 ने वर्ष 1968 में प्रस्तुत किए गए त्रि-भाषा सूत्र (Three-Language Formula) को बरकरार रखा है, किंतु विशेष रूप से गैर-हिंदी भाषी राज्यों जैसे कि तमिलनाडु के संदर्भ में इसमें अधिक लचीलापन प्रदान किया गया है।
- नीति के अनुसार, राज्यों को तीन भाषाओं के चयन की स्वतंत्रता दी गई है, बशर्ते कि उनमें से कम से कम दो भाषाएँ भारतीय भाषाएँ हों। यह प्रावधान विशेष रूप से भाषा थोपने को लेकर व्यक्त की जाने वाली आशंकाओं को कम करने का प्रयास करता है, क्योंकि यह राज्यों को हिंदी को अपनाने या न अपनाने का विकल्प भी प्रदान करता है।
- नीति में संस्कृत को भी एक ऐच्छिक भाषा के रूप में शामिल किया गया है, जिसका उद्देश्य संस्कृत भाषा के संरक्षण एवं पुनरुद्धार को प्रोत्साहित करना है। हालांकि, इसके व्यावहारिक कार्यान्वयन में कई चुनौतियाँ सामने आ सकती हैं, जिनमें प्रमुख हैं- सीमित संसाधन,प्रशिक्षित शिक्षकों की उपलब्धता तथा भाषाई विविधता के बीच संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता।

तमिलनाडु का विरोध:

- तमिलनाडु ने ऐतिहासिक रूप से हिंदी को अनिवार्य बनाने के प्रयासों का निरंतर विरोध किया है। इसकी शुरुआत 1937 में हिंदी थोपने के खिलाफ, विरोध प्रदर्शन से हुई थी। इसके बाद, वर्ष 1965 और 1968 में राज्य उग्र विरोध प्रदर्शनों का साक्षी बना, जिससे हिंदी के प्रति तमिलनाडु का रुख और अधिक कठोर हो गया।
- हालाँकि, राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 के अंतर्गत राज्यों को अपनी इच्छानुसार तीन भाषाओं का चयन करने की स्वतंत्रता दी गई है, किंतु तमिलनाडु को यह आशंका है कि व्यवहारिक स्तर पर हिंदी को स्वतः तीसरी भाषा बना दिया जाएगा। यह स्थिति तमिल जैसी क्षेत्रीय भाषाओं को हाशिए पर डालने का जोखिम पैदा करती है।
- इसके अतिरिक्त, अन्य भाषाओं के प्रशिक्षित शिक्षकों की अनुपलब्धता भी एक महत्वपूर्ण चिंता का विषय है, जिससे व्यवहार में लचीली भाषा नीति को लागू करना कठिन हो सकता है। इस संदर्भ में, केंद्र सरकार द्वारा गैर-हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी शिक्षकों को प्रोत्साहित करने हेतु घोषित 50 करोड़ की सहायता राशि ने तमिलनाडु की शंकाओं को और बल दिया है।
- इसका मुख्य कारण यह है कि ऐसी कोई समान सहायता योजना दक्षिण भारतीय या अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के लिए नहीं है। इससे यह संदेश जाता है कि केंद्र की प्राथमिकता हिंदी को बढ़ावा देना है, जबकि अन्य भाषाओं के संवर्धन की कोई ठोस पहल नहीं की जा रही है।

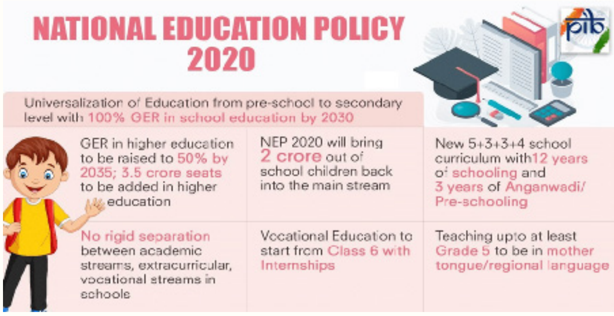

समाधानः

- इन चिंताओं को दूर करने के लिए केंद्र सरकार और तमिलनाडु के बीच एक रचनात्मक बातचीत आवश्यक है। तमिलनाडु सरकार के अनुसार दो-भाषा नीति ने सकारात्मक शैक्षिक परिणामों में योगदान दिया है और त्रि-भाषा नीति इस प्रगति को बाधित कर सकती है। ऐसे में एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता है जो राष्ट्रीय शैक्षिक उद्देश्यों के साथ संरेखित करते हुए क्षेत्रीय स्वायत्तता का सम्मान करती हो।

एनईपी 2020 के तीन-भाषा फॉर्मूले का उद्देश्य बहुभाषावाद को प्रोत्साहित करना है, हालाँकि, हिंदी थोपने की शंकाओ के कारण इसे तमिलनाडु से कड़े विरोध का सामना करना पड़ रहा है। राष्ट्रीय एकता और शैक्षिक उन्नति को बढ़ावा देते हुए क्षेत्रीय भाषाई विविधता को बनाए रखने के लिए एक सहकारी और लचीला दृष्टिकोण आवश्यक है।

भारत में परिसीमन: प्रतिनिधित्व और संघवाद पर संवैधानिक बहस

परिसीमन (Delimitation) निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं को पुनः निर्धारित करने की एक संवैधानिक प्रक्रिया है, जिसका उद्देश्य संसद और राज्य विधानसभाओं में न्यायसंगत और समान प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करना है। हालांकि, वर्तमान परिसीमन (जोकि 2026 में प्रस्तावित है) भारत में उत्तर और दक्षिण के बीच जनसांख्यिकीय असंतुलन के कारण यह विषय विवादास्पद बनता जा रहा है। इस प्रक्रिया ने संघीय संतुलन, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और राष्ट्रीय एकता से जुड़े गंभीर मुद्दों पर बहस को जन्म दिया है। दक्षिणी राज्य, जिन्होंने बेहतर सामाजिक-आर्थिक विकास और प्रभावी परिवार नियोजन नीतियों के कारण धीमी जनसंख्या वृद्धि दर्ज की है, इस बात को लेकर आशंकित हैं कि जनसंख्या-आधारित पुनर्वितरण उनके संसदीय प्रभाव को कम कर सकता है। इसके विपरीत, उत्तर भारतीय राज्यों में अपेक्षाकृत उच्च जनसंख्या वृद्धि हुई है, जिससे उन्हें अधिक संसदीय सीटें प्राप्त होने की संभावना है। यह असमानता लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व और भारत के संघीय ढांचे की दीर्घकालिक अखंडता के बारे में बुनियादी सवाल उठाती है।

परिसीमन की आवश्यकता:

- सभी निर्वाचन क्षेत्रों में समान जनसंख्या आकार बनाए रखते हुए निष्पक्ष प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के लिए परिसीमन किया जाता है। यह निम्नलिखित द्वारा शासित होता है:
  - » **अनुच्छेद 82 :** यह अनिवार्य करता है कि प्रत्येक जनगणना के बाद संसद को जनसंख्या परिवर्तन के आधार पर राज्यों के बीच लोकसभा सीटों के आवंटन को पुनः समायोजित करना होगा।
  - » **अनुच्छेद 81 :** लोकसभा के सदस्यों की कुल संख्या को 550 (राज्यों से 530 और केंद्र शासित प्रदेशों से 20) तक सीमित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि राज्यों में जनसंख्या के अनुपात में सीटों का अनुपात यथासंभव एक समान हो।
- इस प्रक्रिया का उद्देश्य "एक व्यक्ति, एक वोट, एक मूल्य" के लोकतांत्रिक सिद्धांत को बनाए रखना है। हालांकि, जनसंख्या वृद्धि में क्षेत्रीय असमानताओं के कारण परिसीमन एक राजनीतिक रूप से संवेदनशील मुद्दा बन गया है।

भारत में परिसीमन का इतिहास:

- **1976 से पूर्व :** 1951, 1961 और 1971 की जनगणना के बाद परिसीमन किया गया, जिसके परिणामस्वरूप संसद और राज्य विधानसभाओं में सीटों का पुनर्वितरण हुआ।
- **42वां संशोधन (1976) :** आपातकाल (Emergency) के दौरान, संसद ने 2001 की जनगणना तक सीटों की कुल संख्या को स्थिर रखने का निर्णय लिया। इसका उद्देश्य था कि कम जनसंख्या वृद्धि वाले राज्यों, विशेष रूप से दक्षिणी राज्यों, को परिवार नियोजन नीतियों को लागू करने के कारण प्रतिनिधित्व खोने से बचाया जा सके।
- **2001 परिसीमन :** 2001 की जनगणना के आधार पर निर्वाचन क्षेत्र की सीमाओं को पुनः निर्धारित किया गया, लेकिन दक्षिणी राज्यों के विरोध के कारण संसदीय सीटों की कुल संख्या अपरिवर्तित रही। इन राज्यों को भय था कि उनकी संसदीय शक्ति (Political Influence) में कमी आ सकती है।

प्रतिनिधित्व पर परिसीमन का प्रभाव:

- **जनसंख्या आधारित सीटों का पुनर्आवंटन:**
  - » यदि 2026 का परिसीमन नवीनतम जनगणना (Census) के आंकड़ों पर आधारित होता है, तो उत्तर भारत के उच्च जनसंख्या वृद्धि वाले राज्यों में संसदीय प्रतिनिधित्व में उल्लेखनीय वृद्धि होगी, जबकि दक्षिणी राज्य, जिन्होंने प्रभावी जनसंख्या नियंत्रण नीतियाँ अपनाई हैं, तुलनात्मक रूप से कम वृद्धि देखी जा सकती है।
- **2025 की जनसंख्या अनुमान के आधार पर लोकसभा सीटों में अनुमानित परिवर्तन**
  - » उत्तर प्रदेश (उत्तराखंड सहित) : 85 से 250 सीटें
  - » बिहार (झारखंड सहित) : 25 से बढ़कर 82 सीटें
  - » मध्य प्रदेश : सीटों में उल्लेखनीय वृद्धि
  - » राजस्थान : सीटों में पर्याप्त वृद्धि
  - » तमिलनाडु : 39 से बढ़कर 76 सीटें (तुलनात्मक रूप से कम)
  - » केरल : 20 से बढ़कर 36 सीटें

- वर्तमान परिदृश्य में, कुछ राज्यों में एक सांसद के लिए 32 लाख से अधिक मतदाता हैं, जबकि केरल जैसे राज्यों में यह आंकड़ा केवल 18 लाख है। इससे मतदान शक्ति में असंतुलन (Voting Power Imbalance) उत्पन्न होता है। हालांकि, इस विसंगति को ठीक करने के लिए पुनर्वितरण आवश्यक है, लेकिन इसका लाभ उत्तर भारतीय राज्यों को अधिक मिलने की संभावना है, जिससे संघीय संतुलन और राजनीतिक शक्ति के पुनर्वितरण पर गंभीर प्रश्न उठते हैं।
- **लोकसभा की शक्ति में संभावित वृद्धि:**
  - 2025 की जनसंख्या अनुमान के आधार पर लोकसभा की कुल सदस्य संख्या 1,400 तक बढ़ सकती है। हालाँकि, नवनिर्मित संसद भवन में केवल 888 सीटें उपलब्ध हैं, जिससे आनुपातिक वृद्धि की संभावना सीमित है।
  - सीट आवंटन की एक वैकल्पिक विधि अपनाई जा सकती है, लेकिन फिर भी दक्षिणी राज्यों को उत्तर की तुलना में कम सीटें मिलेंगी। इससे उनके घटते राजनीतिक प्रभाव और संघीय असंतुलन को लेकर चिंताएँ बढ़ सकती हैं।

परिसीमन पर राजनीतिक और संघीय चिंताएं:

- **संघीय संतुलन और प्रतिनिधित्व को खतरा:**
  - दक्षिणी राज्य, विशेष रूप से तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक, तर्क देते हैं कि जनसंख्या वृद्धि के आधार पर परिसीमन से संसद में उनका प्रतिनिधित्व कम हो जाएगा, भले ही उनका आर्थिक योगदान और शासन दक्षता बेहतर हो।
  - इसके परिणामस्वरूप संघीय संतुलन बनाए रखने के लिए परिसीमन को स्थगित करने की मांग बढ़ रही है।
  - तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एमके स्टालिन ने परिसीमन को एक "खतरा" बताया है ।
- **क्षेत्रीय राजनीतिक प्रभाव:**
  - परिसीमन के कारण राजनीतिक शक्ति उत्तर भारत की ओर स्थानांतरित हो सकती है, जिससे इस क्षेत्र में मजबूत आधार वाले दलों को लाभ होगा, जबकि दक्षिण भारत के क्षेत्रीय दल कमजोर हो सकते हैं।
  - इससे राष्ट्रीय नीति निर्माण में असंतुलन पैदा होगा, जहां उत्तरी राज्य संसदीय निर्णयों पर हावी हो सकते हैं, जिससे दक्षिणी राज्यों से संबंधित मुद्दे हाशिए पर चले जाने का खतरा रहेगा।
- **सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक विभाजन:** परिसीमन से तीन प्रमुख विभाजन रेखाओं के साथ विद्यमान क्षेत्रीय विभाजन और मजबूत हो सकता है:
  - **सांस्कृतिक विभाजन रेखा:** हिंदी भाषी उत्तर भारत और गैर-हिंदी भाषी दक्षिण, पूर्व और पश्चिम के बीच भाषाई विभाजन स्वतंत्रता के बाद से ही मौजूद है। भाषाई राज्यों की मांग और हिंदी को एकमात्र आधिकारिक भाषा के रूप में न थोपने की नीति ने इस विभाजन को कम करने में मदद की थी, लेकिन परिसीमन से यह तनाव फिर से बढ़ सकता है।
  - **आर्थिक विभाजन रेखा:** पिछले तीन दशकों में आर्थिक विकास दक्षिण और पश्चिम भारत के पक्ष में रहा है, जबकि उत्तर और पूर्वी भारत पिछड़ गया है।
  - दक्षिणी राज्यों का तर्क है कि संसाधन आवंटन और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में जनसंख्या के बजाय आर्थिक योगदान को भी एक कारक माना जाना चाहिए।
  - **राजनीतिक विभाजन रेखा:** एक राजनीतिक दल के वर्चस्व ने उत्तर-दक्षिण राजनीतिक विभाजन को बढ़ा दिया है। यह पार्टी उत्तर भारत में प्रभावशाली है, लेकिन तमिलनाडु और केरल जैसे कई दक्षिणी राज्यों में हाशिए पर है। परिसीमन से उन क्षेत्रों में सीटों की संख्या बढ़ सकती है, जहां यह पार्टी मजबूत है, जिससे उसका राजनीतिक प्रभुत्व और अधिक सशक्त हो सकता है।
- ये विभाजन रेखाएं पूरी तरह से मेल नहीं खातीं, लेकिन अक्सर हिंदी पट्टी और दक्षिण भारत को आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक बहसों में विपरीत पक्षों पर खड़ा कर देती हैं।

दक्षिणी राज्यों की चिंताएं और परिसीमन पर रोक की मांग:

- तमिलनाडु में सर्वदलीय प्रस्ताव के तहत राष्ट्रीय एकता और संघवाद की रक्षा के लिए परिसीमन को 30 वर्षों के लिए स्थगित करने की मांग की गई है।
- गोवा और अरुणाचल प्रदेश जैसे छोटे राज्यों के लिए विशेष प्रावधानों की तरह, दक्षिणी राज्य सीटों के पुनर्आबंटन पर स्थायी रोक लगाने की मांग कर रहे हैं।
- अंतर्निहित संघीय अनुबंध" (Implicit Federal Contract) की अवधारणा उभरकर सामने आई है, जोकि इस विचार को रेखांकित करती है कि भारत का संघीय ढांचा केवल जनसंख्या के आधार पर नहीं, बल्कि क्षेत्रीय समानता को ध्यान में रखते हुए गठित हुआ था।
- इस संघीय अनुबंध को स्वीकार करने का अर्थ होगा निम्नलिखित पर बहस को स्थायी रूप से समाप्त करना:

» जनसंख्या-आधारित सीट आवंटन।
» कर अंशदान के आधार पर संसाधनों का वितरण।
» ऐसा संतुलन जिसमें उत्तरी राज्यों को अधिक सीटें मिलें, जबकि दक्षिणी राज्यों को वित्तीय लाभ मिलता रहे।

तेल क्षेत्र (विनियमन और विकास) संशोधन विधेयक 2024

संदर्भ:

हाल ही में लोकसभा ने तेल क्षेत्र (विनियमन और विकास) संशोधन विधेयक, 2024 पारित किया, जो भारत के तेल और गैस क्षेत्र में व्यापक सुधार का संकेत देता है। यह विधेयक तेल क्षेत्र (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1948 में संशोधन करता है, जिससे इस क्षेत्र को अधिक निवेश-अनुकूल और प्रतिस्पर्धी बनाया जा सके।

विधेयक के मुख्य उद्देश्य:

- इस विधेयक का मुख्य उद्देश्य भारत में तेल और गैस की खोज एवं उत्पादन को आधुनिक बनाना है। इसके प्रमुख लक्ष्य हैं:
  » कानूनी ढांचे का आधुनिकीकरण ताकि यह क्षेत्र अधिक व्यावसायिक और सुगम हो।
  » निवेश बढ़ाने के लिए पारदर्शी और स्थिर नीतिगत ढांचा तैयार करना।
  » 2047 तक 'विकसित भारत' के सरकार के दृष्टिकोण के साथ संरेखित करते हुए ऊर्जा की उपलब्धता, सामर्थ्य और सुरक्षा सुनिश्चित करना।

विधेयक द्वारा पेश किए गए मुख्य सुधार:

- **लाइसेंसिंग प्रणाली का सरलीकरण:** विधेयक विभिन्न हाइड्रोकार्बन के लिए अलग-अलग लाइसेंस की आवश्यकता को समाप्त करता है। इसके बजाय, यह 'पेट्रोलियम लीज' के रूप में एकल लाइसेंस प्रणाली लागू करता है, जिससे अन्वेषण और उत्पादन प्रक्रिया सरल होगी।
- **खनन और पेट्रोलियम संचालन का पृथक्करण:** पारंपरिक व्यवस्था में खनन और पेट्रोलियम अन्वेषण को एक ही नियामकीय ढांचे के तहत रखा जाता था। नया विधेयक इन दोनों को अलग-अलग मान्यता देता है, जिससे तेल और गैस क्षेत्र का अधिक प्रभावी नियमन संभव होगा।
- **निवेश को प्रोत्साहित करना और व्यापार करने में आसानी:** विधेयक स्थिर और पूर्वानुमानित कानूनी ढांचा प्रदान करता है, जिससे निवेशकों का विश्वास बढ़ेगा। तीव्र विवाद समाधान प्रणाली लागू की गई है, जिससे विनियामक जटिलताओं को कम किया जा सके और सरकार तथा ठेकेदारों के बीच सहयोग बढ़े।
- **प्रौद्योगिकी और ऊर्जा नवाचार:** यह कार्बन कैप्चर, यूटिलाइजेशन और सीक्वेस्ट्रेशन (CCUS) तथा ग्रीन हाइड्रोजन परियोजनाओं को बढ़ावा देता है। ये प्रावधान ऊर्जा संक्रमण (Energy Transition) और दीर्घकालिक स्थिरता को सुनिश्चित करेंगे।
- **छोटे तेल ऑपरेटरों को समर्थन:** कम उपयोग वाले क्षेत्रों में संसाधन-साझाकरण की अनुमति दी गई है, जिससे परियोजनाओं की आर्थिक व्यवहार्यता बढ़ेगी। यह 2015 की खोजी गई छोटी फील्ड्स नीति के अनुरूप है, जिसने छोटे ऑपरेटरों को अप्रयुक्त क्षेत्रों में कार्य करने का अधिकार दिया था।
- **कठोर दंड और प्रवर्तन:** उल्लंघन करने वालों के लिए ₹25 लाख तक का जुर्माना और क्रियाशील उल्लंघन पर ₹10 लाख प्रति दिन तक का दंड लगाया जाएगा। एक नया न्यायनिर्णयन प्राधिकरण और अपीलीय तंत्र स्थापित किया जाएगा, जिससे कानूनी प्रक्रियाएँ अधिक प्रभावी बनेंगी।
- **राज्यों के अधिकारों पर कोई प्रभाव नहीं:** यह विधेयक सहकारी संघवाद (Cooperative Federalism) को बनाए रखने हेतु राज्यों को पहले की तरह पेट्रोलियम पट्टे जारी करने और रॉयल्टी एकत्र करने का अधिकार रहेगा।

तुलना: ऑयलफील्ड्स अधिनियम 1948 और ऑयल फील्ड्स संशोधन विधेयक

पहलू	तेल क्षेत्र (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1948	तेल क्षेत्र (विनियमन और विकास) संशोधन विधेयक
उद्देश्य	यह प्राकृतिक गैस और पेट्रोलियम की खोज और निष्कर्षण को विनियमित करता है।	आधुनिक ऊर्जा आवश्यकताओं के साथ संरेखित करने के लिए रुपरेखा प्रदान करता है।
पट्टे की शर्तें	खनन पट्टे का प्रावधान करती हैं।	खनन पट्टे को पेट्रोलियम पट्टे में बदलाव करता हैं।
खनिज तेल	यह पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस तक सीमित है।	यह विधेयक प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले हाइड्रोकार्बन, कोल बेड मीथेन और शेल गैस/तेल को शामिल करता है।
अपराधीकरण	नियम उल्लंघन के लिए ₹1,000 या दोनों के जुर्माने का प्रावधान।	उल्लंघन के लिए ₹25 लाख का जुर्माना, क्रियाशील उल्लंघन के लिए ₹10 लाख प्रतिदिन का जुर्माना।
जुर्माना	उल्लंघन के लिए सीमित जुर्माना।	उल्लंघन के लिए दैनिक जुर्माने सहित कठोर दंड।

न्यायिक सेवाओं में दृष्टिबाधित व्यक्तियों पर सर्वोच्च न्यायालय का ऐतिहासिक निर्णय

संदर्भः

हाल ही में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने एक महत्वपूर्ण फैसले में यह स्पष्ट किया है कि दृष्टिबाधित और कम दृष्टि वाले उम्मीदवारों को न्यायिक सेवाओं में नियुक्ति से बाहर नहीं रखा जा सकता। यह निर्णय भारत में विकलांग व्यक्तियों के लिए समानता और समावेशिता की दिशा में एक ऐतिहासिक विकास है।

पृष्ठभूमिः

- यह मामला मध्य प्रदेश न्यायिक सेवा परीक्षा नियम, 1994 के नियम 6A की वैधता को चुनौती देने के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय पहुंचा।
- इस नियम के तहत दृष्टिबाधित तथा कम दृष्टि वाले उम्मीदवारों को न्यायिक सेवा में नियुक्ति से बाहर रखा गया था।
- न्यायालय ने पिछले वर्ष एक दृष्टिबाधित न्यायिक अभ्यर्थी आलोक सिंह की मां की याचिका के बाद मामले का संज्ञान लिया था।

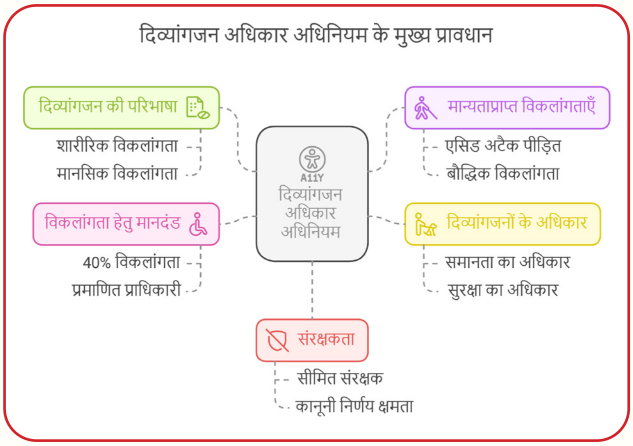

सुप्रीम कोर्ट का निर्णयः

- सर्वोच्च न्यायालय ने नियम 6A को असंवैधानिक करार देते हुए इसे रद्द कर दिया और कहा कि दृष्टिबाधित उम्मीदवार भी न्यायिक सेवाओं की चयन प्रक्रिया में समान रूप से भाग लेने के पात्र हैं।
- न्यायालय ने यह भी कहा कि विकलांग व्यक्तियों के अधिकार अधिनियम, 2016 (RPwD Act, 2016) में उल्लिखित उचित सुविधा (Reasonable Accommodation) का सिद्धांत लागू किया जाना चाहिए, ताकि दृष्टिबाधित और अन्य दिव्यांग अभ्यर्थियों को चयन प्रक्रिया में समान अवसर मिल सके।
- न्यायालय ने मध्य प्रदेश न्यायिक सेवा परीक्षा नियम के नियम 7 को भी आंशिक रूप से खारिज कर दिया, जिसमें विकलांग उम्मीदवारों के लिए अतिरिक्त आवश्यकताएं निर्धारित की गई थीं।

विकलांग व्यक्तियों के अधिकार (आरपीडब्ल्यूडी) अधिनियम, 2016 के बारे में:

- यह अधिनियम, भारत में विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों और कल्याण को बढ़ावा देने के लिए बनाया गया एक व्यापक कानून है। यह अधिनियम, संयुक्त राष्ट्र विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों पर सम्मेलन (UNCRPD), 2007 के अनुरूप तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य भारत में दिव्यांगजनों के लिए एक समावेशी, समान और सम्मानजनक समाज का निर्माण करना है।

अधिनियम के मुख्य प्रावधानः

- **दिव्यांगजन की परिभाषाः** अधिनियम दिव्यांगजन को ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित करता है, जिसमें दीर्घकालिक शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक या संवेदी विकलांगता होती है, जो समाज में उनकी पूर्ण और प्रभावी भागीदारी में बाधा डालती है।
- **मान्यता प्राप्त विकलांगताएँः** अधिनियम 21 प्रकार की विकलांगताओं को मान्यता देता है, जिनमें एसिड अटैक पीड़ित, बौद्धिक विकलांगता, मानसिक बीमारी और अन्य शामिल हैं।
- **दिव्यांगजनों के अधिकारः** अधिनियम दिव्यांगजनों के अधिकारों को सूचीबद्ध करता है, जिसमें समानता का अधिकार, सम्मान और सम्मान के साथ जीवन, दुर्व्यवहार और शोषण से सुरक्षा, और घर और परिवार का अधिकार, प्रजनन अधिकार, मतदान में सुलभता और संपत्ति के स्वामित्व या उत्तराधिकार का अधिकार शामिल है।
- **विकलांगता हेतु मानदंडः** वे व्यक्ति जिनकी विकलांगता 40% या उससे अधिक है (प्रमाणित प्राधिकारी द्वारा प्रमाणित), उन्हें बेंचमार्क दिव्यांग (Benchmark Disability) कहा गया है।
- **संरक्षकताः** अधिनियम के तहत ऐसे दिव्यांगजनों के लिए सीमित संरक्षक नियुक्त करने की व्यवस्था है, जो खुद पूरी तरह से कानूनी निर्णय लेने में सक्षम नहीं होते, भले ही उन्हें सलाह या सहायता मिल रही हो।

निष्कर्षः

सुप्रीम कोर्ट का यह फैसला विकलांग व्यक्तियों के लिए अधिक समावेशी और समतापूर्ण समाज बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। जैसा कि कोर्ट ने कहा, अब समय आ गया है कि हम विकलांगता-आधारित भेदभाव के विरुद्ध अधिकार को, जिसे RPwD अधिनियम 2016 में मान्यता दी गई है, मौलिक अधिकार के समान दर्जा दें, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि किसी भी उम्मीदवार को केवल उसकी विकलांगता के कारण विचार से वंचित न किया जाए।

कस्टम व जीएसटी अधिकारियों के लिए सुप्रीम कोर्ट की गाइडलाइंस

संदर्भः

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने एक ऐतिहासिक फैसले में कहा कि कस्टम अधिकारी और वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) अधिकारी मनमाने ढंग से गिरफ्तारियाँ नहीं कर सकते। फैसले में कहा गया है कि इन अधिकारियों को किसी भी गिरफ्तारी से पहले कस्टम अधिनियम की धारा 104 और जीएसटी अधिनियमों की धारा 69 के तहत निर्धारित पूर्व-शर्तों का पालन करना चाहिए, ठीक वैसे ही जैसे प्रवर्तन निदेशालय (ईडी) के अधिकारी धन शोधन निवारण अधिनियम (पीएमएलए) के तहत अपनाई जाने वाली प्रक्रियाओं का पालन करते हैं।

कस्टम और जीएसटी कानूनों के तहत गिरफ्तारी के लिए अनिवार्य पूर्व-शर्तें:

- सुप्रीम कोर्ट ने अपने हालिया विस्तृत फैसले में यह स्पष्ट किया कि कस्टम अधिनियम की धारा 104 और जीएसटी अधिनियम की धारा 69 के तहत, किसी भी गिरफ्तारी से पहले कुछ आवश्यक प्रक्रियाओं का पालन करना अनिवार्य है। इन प्रक्रियात्मक शर्तों में शामिल हैं:
  - **गिरफ्तारी का आधार बताना:** गिरफ्तार व्यक्ति को लिखित रूप में उसकी गिरफ्तारी के कारणों के बारे में सूचित किया जाना चाहिए। इससे यह सुनिश्चित होता है कि व्यक्ति को अपने खिलाफ लगे आरोपों के बारे में पता है और उसे उन्हें चुनौती देने का अवसर मिलता है।
  - **गिरफ्तार करने वाले अधिकारियों की पहचान:** गिरफ्तारी करने वाले अधिकारियों की सही पहचान उपलब्ध कराना, ताकि प्रक्रिया में जवाबदेही और पारदर्शिता सुनिश्चित करती है।
  - **परिजनों को सूचना:** गिरफ्तार व्यक्ति के परिवार या दोस्तों को गिरफ्तारी के बारे में सूचित किया जाना चाहिए।
  - **कानूनी प्रतिनिधित्व का अधिकार:** गिरफ्तार व्यक्ति को अपनी पसंद के कानूनी प्रतिनिधि तक पहुँचने की अनुमति दी जानी चाहिए, जो पूछताछ के दौरान मौजूद होना चाहिए।
  - **विवरणों की रिकॉर्डिंग:** न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि सीमा शुल्क अधिकारियों को अपनी कार्रवाइयों का विस्तृत रिकॉर्ड बनाए रखना चाहिए। इन अभिलेखों में मुखबिर का नाम, कानून का उल्लंघन करने का आरोपी व्यक्ति, प्राप्त सूचना की प्रकृति, गिरफ्तारी का समय, जब्ती का विवरण और अपराध का पता लगाने के दौरान दर्ज किए गए बयान शामिल होने चाहिए।

अग्रिम जमानत देने का न्यायालय का अधिकार:

- सर्वोच्च न्यायालय ने सीमा शुल्क और जीएसटी अधिकारियों को गिरफ्तारी करने की वैधानिक शक्ति को बरकरार रखा, लेकिन इसके साथ ही व्यक्तिगत अधिकारों की सुरक्षा में न्यायालयों की महत्वपूर्ण भूमिका पर भी जोर दिया। न्यायालय ने इस बात पर प्रकाश डाला कि न्यायालयों के पास अग्रिम जमानत देने की शक्ति है, जो व्यक्तियों को अनावश्यक गिरफ्तारी और हिरासत से बचाती है। न्यायालय ने इस बात पर जोर दिया कि संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार को सुनिश्चित करने में यह न्यायिक शक्ति महत्वपूर्ण है।

पशुधन स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण कार्यक्रम

संदर्भ:

हाल ही में केंद्रीय मंत्रिमंडल ने 2024-26 की अवधि के लिए पशुधन स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण कार्यक्रम (LHDCP) में संशोधन को मंजूरी दे दी है, जिसके अंतर्गत 3,880 करोड़ का आवंटन किया गया है। इस संशोधन का उद्देश्य पशुधन रोग नियंत्रण को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाना है, जिससे देश भर में पशुओं के स्वास्थ्य में सुधार हो सके।

पशुधन स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण कार्यक्रम के विषय में:

- पशुधन स्वास्थ्य एवं रोग नियंत्रण कार्यक्रम (LHDCP) एक केंद्र प्रायोजित योजना है जो भारत में पशुधन के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने पर केंद्रित है। यह कार्यक्रम लक्षित टीकाकरण, रोग निगरानी और पशु चिकित्सा सेवाओं के संवर्द्धन के माध्यम से प्रमुख पशु रोगों को नियंत्रित करने और रोकने के लिए डिजाइन किया गया है।
- इसका उद्देश्य प्रभावी रोग नियंत्रण के लिए आवश्यक बुनियादी ढाँचे का समर्थन करना भी है, जैसे कि मोबाइल पशु चिकित्सा इकाइयाँ और बेहतर पशु चिकित्सा स्वास्थ्य सुविधाएँ।

एलएचडीसीपी के मुख्य घटक:

- संशोधित एलएचडीसीपी में तीन मुख्य घटक शामिल हैं, जिनमें से प्रत्येक को पशुधन स्वास्थ्य के विभिन्न पहलुओं को संबोधित करने के लिए डिजाइन किया गया है:
- **राष्ट्रीय पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम (एनएडीसीपी):** एनएडीसीपी का प्राथमिक ध्यान प्रमुख पशु रोगों को नियंत्रित करना और रोकना है, विशेष रूप से वे जो पशुधन उत्पादकता को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। कार्यक्रम का उद्देश्य खुरपका और मुँहपका रोग (एफएमडी) और ब्रुसेलोसिस जैसी बीमारियों के बोझ को कम करना है।
- **पशुधन स्वास्थ्य और रोग नियंत्रण (एलएचएंडडीसी):** इस घटक के निम्नलिखित उप-घटक हैं:
  - **गंभीर पशु रोग नियंत्रण कार्यक्रम (सीएडीसीपी):** सीएडीसीपी उन गंभीर बीमारियों को लक्षित करता है जो पशुधन स्वास्थ्य और उत्पादकता के लिए महत्वपूर्ण जोखिम पैदा करती हैं। इसका उद्देश्य इन बीमारियों को फैलने से रोकने के लिए शुरुआती चरण में नियंत्रित करना है।
  - **पशु चिकित्सा अस्पतालों और मोबाइल पशु चिकित्सा इकाइयों (ईएसवीएचडी-एमवीयू) की स्थापना और सुदृढ़ीकरण:** यह उप-घटक पशु चिकित्सा सेवाओं के लिए बुनियादी ढांचे में सुधार पर केंद्रित है। इसमें नए पशु चिकित्सा अस्पतालों की स्थापना और मौजूदा अस्पतालों को मजबूत करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, घर-घर जाकर पशु चिकित्सा सेवाएँ प्रदान करने के लिए मोबाइल

पशु चिकित्सा इकाइयाँ (एमवीयू) तैनात की जाएँगी, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि दूरदराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी गुणवत्तापूर्ण पशु स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध हो।

» **पशु रोगों के नियंत्रण के लिए राज्यों को सहायता (ASCAD):** यह उप-घटक राज्य सरकारों को पशु रोगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने और प्रबंधित करने में मदद करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है। यह बेहतर रोग नियंत्रण के लिए केंद्र और राज्य सरकारों के बीच समन्वय को बढ़ाता है।

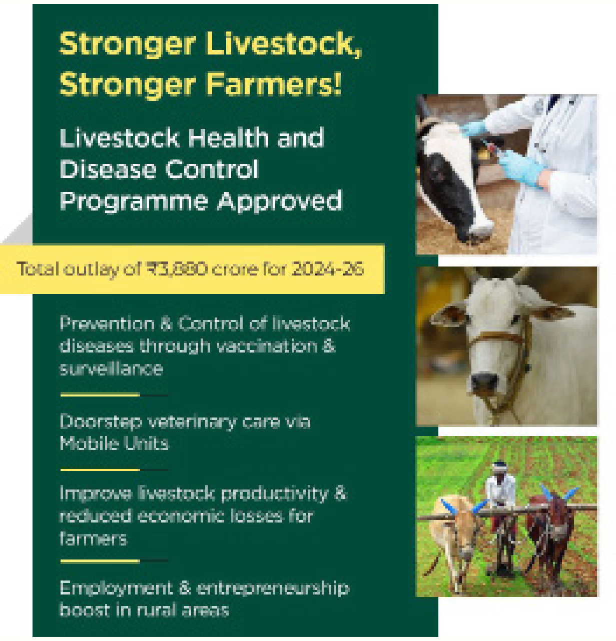

- **पशु औषधि:** यह एलएचडीसीपी में शामिल एक नया घटक है, जिसका उद्देश्य पशु चिकित्सा दवाओं को किसानों के लिए किफायती और आसानी से उपलब्ध कराना है। इसके लिए 75 करोड़ रुपये का अलग बजट रखा गया है। यह घटक उच्च गुणवत्ता वाली जेनेरिक दवाओं (Generic Veterinary Drugs) की उपलब्धता सुनिश्चित करेगा, जिससे पशुपालकों का आर्थिक बोझ कम होगा।

संशोधित पशुधन स्वास्थ्य और रोग नियंत्रण कार्यक्रम के लाभ:

- संशोधित पशुधन स्वास्थ्य और रोग नियंत्रण कार्यक्रम (LHDCP) कई प्रमुख लाभ प्रदान करता है:
    - » **रोग की रोकथाम और टीकाकरण:** टीकाकरण के माध्यम से प्रमुख पशुधन रोगों को रोकता है, पशु स्वास्थ्य और उत्पादकता में सुधार करता है।
    - » **मोबाइल पशु चिकित्सा सेवाएँ:** मोबाइल पशु चिकित्सा इकाइयाँ (एमवीयू) समय पर देखभाल प्रदान करती हैं, विशेषकर दूरदराज के इलाकों में।
    - » **सस्ती पशु चिकित्सा दवाएँ:** पशु औषधि गुणवत्ता वाली जेनेरिक दवाओं तक पहुँच सुनिश्चित करती है, जिससे पशुधन मालिकों के लिए लागत कम होती है।
    - » **उत्पादकता और रोजगार को बढ़ावा देना:** पशुधन उत्पादकता को बढ़ाता है और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा करता है।
    - » **किसानों के लिए आर्थिक राहत:** बीमारियों से होने वाले वित्तीय नुकसान को रोकता है, पशुधन व्यवसायों की स्थिरता का समर्थन करता है।

AI कोष (Kosha)

संदर्भ:

हाल ही में भारत सरकार ने AI कोष लॉन्च किया है, जिसका उद्देश्य शोधकर्ताओं, उद्यमियों और स्टार्टअप्स को उन्नत आर्टिफिशियल इंटे. लिजेंस (AI) एप्लिकेशन विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण डेटासेट, कंप्यूटिंग संसाधनों और आवश्यक उपकरणों तक पहुँच प्रदान करना है। यह पहल व्यापक इंडियाएआई मिशन का हिस्सा है, जिसका लक्ष्य नवाचार को बढ़ावा देना और AI-संचालित समाधानों के विकास के माध्यम से देश के AI पारिस्थितिकी तंत्र को सशक्त बनाना है।

AI कोष की मुख्य विशेषताएँ–

- AI कोष कई प्रमुख विशेषताएँ प्रदान करता है जो पूरे भारत में AI शोधकर्ताओं और इनोवेटर्स को लाभान्वित करेंगी:
    - » **डेटासेट:** AI कोष में 316 डेटासेट शामिल हैं, जिनमें से अधिकांश भाषा अनुवाद उपकरणों के विकास पर केंद्रित हैं। यह डेटासेट बहुभाषी AI मॉडल विकसित करने के लिए AI शोधकर्ताओं और डेवलपर्स के लिए एक महत्वपूर्ण संसाधन के रूप में काम करेंगे।
    - » **कंप्यूटिंग क्षमता:** यह प्लेटफॉर्म 14,000+ ग्राफिक्स प्रोसेसिंग यूनिट्स (GPU) तक पहुँच प्रदान करता है, जिसे तिमाही आधार पर और बढ़ाया जाएगा। GPU AI मॉडल के प्रशिक्षण के लिए महत्वपूर्ण हैं और यह संसाधन स्टार्टअप और शोधकर्ताओं को अपनी AI परियोजनाओं में तेजी लाने में सक्षम बनाएगा।
    - » **लागत-प्रभावशीलता:** AI कोष की एक बड़ी विशेषता इसकी सुलभता है। ळच्- उपयोग की लागत मात्र 67 प्रति घंटे निर्धारित की गई है, जिससे यह MSMEs, स्टार्टअप्स और शैक्षणिक संस्थानों के लिए AI मॉडल के अनुसंधान, विकास और परीक्षण का एक सस्ता और सुलभ माध्यम बन जाता है।

इंडियाएआई मिशन के बारे में:

- AI कोष, इंडिया एआई मिशन का एक महत्वपूर्ण घटक है, जो भारत सरकार की एक प्रमुख पहल है। इसका उद्देश्य विभिन्न क्षेत्रों में AI अनुसंधान और तैनाती को बढ़ावा देना है। 10,370 करोड़ के वित्तीय परिव्यय के साथ, इस मिशन को भारत में एक मजबूत AI पारिस्थितिकी तंत्र विकसित करने के लिए डिजाइन

किया गया है।

- इसमें सात प्रमुख स्तंभ शामिल हैं। इंडिया एआई मिशन डेटासेट प्लेटफॉर्म, जिसका AI कोष एक हिस्सा है, AI नवाचार के लिए आवश्यक डेटा और संसाधन सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

AI अनुसंधान के लिए सरकार का प्रयास :

- भारत सरकार AI अनुसंधान और नवाचार को प्रोत्साहित करने में सक्रिय रही है। 2018 में, सरकार ने AI विकास को बढ़ावा देने के लिए स्टार्टअप्स और सरकारी एजेंसियों को गैर-व्यक्तिगत डेटा (जैसे, राइड-शेयरिंग ऐप्स से ट्रैफिक डेटा) तक पहुँच प्रदान करने की संभावना तलाशने के लिए एक समिति का गठन किया था।
- हालांकि, इस पहल को तकनीकी उद्योग के प्रतिरोध का सामना करना पड़ा, लेकिन सरकार ने AI अनुसंधान को आगे बढ़ाने के अपने प्रयास जारी रखे हैं। इससे भारत को AI में वैश्विक अग्रणी के रूप में स्थापित करने की उसकी प्रतिबद्धता और मजबूत हुई है।

भारतीय आपराधिक व्यवस्था में 'तैयारी' बनाम 'प्रयास'

संदर्भ:

हाल ही में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक निर्णय पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा रोक लगाए जाने से 'तैयारी' बनाम 'प्रयास' का कानूनी प्रश्न पुनः चर्चा में आ गया है। यह विशेष रूप से इस मुद्दे से संबंधित है कि बलात्कार का "प्रयास" (Attempt) क्या होता है और कानून के दृष्टिकोण से इसे किस प्रकार परिभाषित और व्याख्यायित किया जाना चाहिए?

'तैयारी बनाम प्रयास' का कानूनी महत्व:

- आपराधिक कानून में "तैयारी" और "प्रयास" के बीच का अंतर महत्वपूर्ण है, विशेषकर जब यौन अपराधों के मामलों की बात आती है।
- 'तैयारी' उन कार्यों को संदर्भित करता है जो एक व्यक्ति अपराध करने के उद्देश्य से स्वयं को तैयार करने के लिए करता है, लेकिन वास्तविक अपराध करने से पहले ही रुक जाता है।
- हालांकि, 'प्रयास' तब होता है जब कोई व्यक्ति अपराध को पूरा करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाता है, हालांकि वे असफल हो सकते हैं।
- 'तैयारी' अक्सर अधिकांश कानूनी ढाँचों के तहत दंडनीय नहीं होती है, अपराध करने का प्रयास अपने आप में एक अपराध है और कानून द्वारा दंडनीय है।

बलात्कार या अपराध करने के लिए 'प्रयास' को परिभाषित करना:

- अभयानंद मिश्रा बनाम बिहार राज्य में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने अपराध करने के प्रयास को साबित करने के लिए मुख्य मानदंड स्थापित किए। प्रयास के लिए दोषसिद्धि सुनिश्चित करने के लिए, अभियोजन पक्ष को निम्नलिखित आवश्यक तत्वों को प्रदर्शित करना चाहिए:
  - » **इरादा:** आरोपी का अपराध करने का इरादा होना चाहिए।
  - » **तैयारी:** आरोपी ने अपराध को अंजाम देने के उद्देश्य से प्रारंभिक कार्यवाही की हो।
  - » **अपराध करने की दिशा में कार्रवाई:** यह कदम केवल तैयारी से परे है और इसमें ऐसा कार्य शामिल होना चाहिए जो प्रतिवादी को अपराध पूरा करने के करीब ले जाए। महत्वपूर्ण रूप से, यह अपराध से पहले अंतिम कार्य होने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि ऐसा कदम होना चाहिए जो अपराध करने के इरादे का संकेत दे।
  - » **निकटता:** 'अंतिम से पहले का कार्य' (अर्थात् वह कार्य जो अपराध को पूरा करने से केवल एक कदम दूर होता है) को प्रयास माने जाने के लिए आवश्यक माना जाता है। यह चरण यह निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि वास्तव में प्रयास कब होता है। अपराध के पूरा होने की दिशा में इस कार्य की निकटता अत्यंत महत्वपूर्ण है।

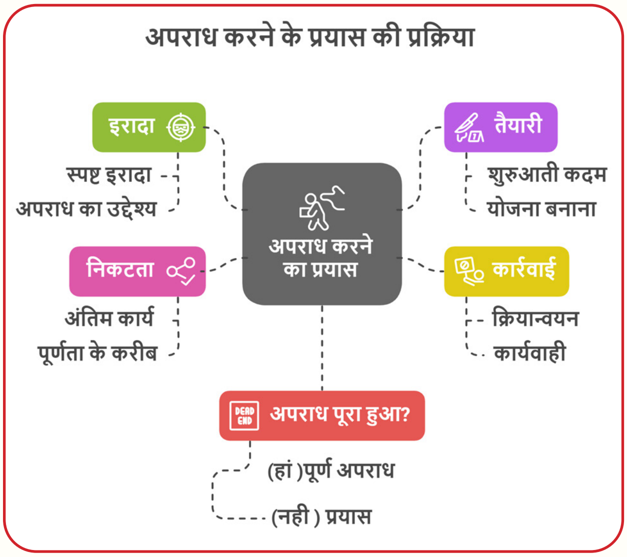

- जैसा कि महाराष्ट्र राज्य बनाम मोहम्मद याकूब (1980) में स्पष्ट किया गया है, प्रयास वहीं से प्रारंभ होता है, जहाँ तैयारी समाप्त होती है। अनिवार्य रूप से, तैयारी का अर्थ केवल अपराध करने के लिए खुद को तैयार करना है, जबकि प्रयास तब माना जाता है जब व्यक्ति की कार्रवाई अपराध के वास्तविक घटित होने की दिशा में प्रवेश कर जाती है।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय का विवादास्पद निर्णय:

- 17 मार्च, 2024 को इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक निर्णय ने तैयारी और प्रयास के बीच की रेखा खींचने की जटिलता को उजागर किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि अभियुक्त की हरकतें - जैसे कि नाबालिग के स्तनों को पकड़ना और उसके पायजामे

का नाड़ा तोड़ने का प्रयास करना – बलात्कार के प्रयास के स्तर तक नहीं पहुँचती हैं।

- इसके विपरीत, न्यायालय ने इसे भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 354बी के अंतर्गत एक कम गंभीर अपराध मानते हुए आरोपों को घटा दिया। धारा 354बी उन अपराधों को संबोधित करती है जो किसी महिला को निर्वस्त्र करने या उसे नग्न होने के लिए मजबूर करने के उद्देश्य से आपराधिक बल के प्रयोग से संबंधित हैं।

आपदा प्रबंधन (संशोधन) विधेयक, 2024

संदर्भः

हाल ही में संसद ने आपदा प्रबंधन (संशोधन) विधेयक, 2024 पारित किया, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय और राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरणों (एनडीएमए और एसडीएमए) की दक्षता को बढ़ाना है। यह विधेयक आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 में संशोधन करता है और आपदा प्रतिक्रिया तंत्र को मजबूत करने, नए प्राधिकरण स्थापित करने एवं केंद्र सरकार के तहत आपदा प्रबंधन शक्तियों को केंद्रीकृत करने का प्रयास करता है।

विधेयक के मुख्य प्रावधानः

- **आपदा प्रबंधन योजनाएँः** अब राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एनडीएमए) और राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (एसडीएमए) आपदा प्रबंधन योजनाएँ तैयार करने के लिए जिम्मेदार होंगे। पहले यह जिम्मेदारी राष्ट्रीय और राज्य कार्यकारी समितियों की थी।
- **एनडीएमए और एसडीएमए के विस्तारित कार्यः** इनकी जिम्मेदारियों में अब समय-समय पर आपदा जोखिमों का आकलन करना, तकनीकी सहायता प्रदान करना, न्यूनतम राहत मानक निर्धारित करना और राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर आपदा डेटाबेस बनाए रखना शामिल होगा।
- **शहरी आपदा प्रबंधन प्राधिकरणः** राज्य सरकारें राजधानी शहरों और नगर निगमों वाले शहरों के लिए विशेष शहरी आपदा प्रबंधन प्राधिकरण स्थापित कर सकती हैं।
- **राज्य आपदा प्रतिक्रिया बल (एसडीआरएफ)ः** राज्य सरकारें एसडीआरएफ का गठन कर सकती हैं और उनके कार्य, भूमिकाएँ व सेवा शर्तें परिभाषित कर सकती हैं ताकि आपदा प्रतिक्रिया तंत्र में सुधार हो सके।
- **समितियों को वैधानिक दर्जाः** राष्ट्रीय संकट प्रबंधन समिति (एनसीएमसी) और उच्च स्तरीय समिति (एचएलसी) को अब वैधानिक मान्यता प्राप्त होगी, जिससे आपदाओं के दौरान निर्णय लेने की प्रक्रिया मजबूत होगी।
  - » बेहतर समन्वय के लिए राष्ट्रीय और राज्य आपदा डेटाबेस बनाना।
  - » आपदा प्रतिक्रिया में लापरवाही के लिए जवाबदेही और दंड तय करना।

विधेयक का महत्वः

- यह विधेयक बेहतर समन्वय, जोखिम मूल्यांकन और आपदा प्रतिक्रिया तंत्र को मजबूत कर आपदा लचीलेपन (Disaster Resilience) की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसका उद्देश्य आपदा जोखिमों को कम करना, तैयारियों को बढ़ाना और प्रभावी राहत उपाय सुनिश्चित करना है।
- हालाँकि, प्रभावी कार्यान्वयन के लिए पर्याप्त धन, कुशल कर्मियों और विभिन्न हितधारकों के बीच निर्बाध समन्वय आवश्यक होगा। समय पर संसाधन आवंटन और अंतर-एजेंसी सहयोग सुनिश्चित करना महत्वपूर्ण होगा।

चुनौतियाँ और चिंताएँः

- शक्ति का केंद्रीकरण, जिससे राज्यों की भूमिका सीमित हो सकती है।
- वित्तीय सहायता प्रावधानों को हटाकर, 'मुआवजा' के स्थान पर 'राहत' शब्द का प्रयोग किया गया है।
- जांच का अभाव, क्योंकि विधेयक को संयुक्त संसदीय समिति (Joint Parliamentary Committee - JPC) को भेजे बिना ही पारित कर दिया गया।

आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के बारे मेंः

- 2004 की सुनामी के बाद संरचित आपदा प्रबंधन ढाँचा स्थापित करने के लिए यह अधिनियम पारित किया गया।
- आपदा प्रबंधन के लिए तीन-स्तरीय प्राधिकरण संरचनाः
  - » **राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (NDMA)ः** प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में, नीतियाँ और दिशानिर्देश तैयार करने के लिए जिम्मेदार।
  - » **राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (SDMA)ः** मुख्यमंत्रियों की अध्यक्षता में, राज्य-स्तरीय आपदा प्रबंधन के लिए जिम्मेदार।
  - » **जिला आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (DDMA)ः** जिला मजिस्ट्रेटों के नेतृत्व में, जिला स्तर पर कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार।
- विशेष आपदा प्रतिक्रिया कार्यों के लिए राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया बल (NDRF) का गठन।
- आपदा राहत के लिए वित्त पोषण तंत्रः
  - » राष्ट्रीय आपदा प्रतिक्रिया कोष (NDRF)
  - » राज्य आपदा प्रतिक्रिया कोष (SDRF)
- अनुसंधान, प्रशिक्षण और क्षमता निर्माण के लिए राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान (NIDM) की स्थापना।

संसद ने पारित किया बॉयलर विधेयक, 2024

संदर्भः

हाल ही में लोकसभा ने बॉयलर विधेयक, 2024 को पारित किया,

जिसका उद्देश्य बॉयलर के संचालन को सुरक्षित बनाना, स्टीम-बॉयलर विस्फोटों को रोकना और पंजीकरण प्रक्रिया को आसान बनाना है। यह विधेयक बॉयलर अधिनियम, 1923 की जगह लेता है। इससे पहले, दिसंबर 2024 में राज्यसभा ने इसे मंजूरी दे दी थी। बॉयलर अधिनियम 1923 की स्थापना स्टीम बॉयलर के निर्माण, स्थापना, संचालन, परिवर्तन और मरम्मत को विनियमित करने के लिए की गई थी, ताकि पूरे भारत में उनका सुरक्षित संचालन सुनिश्चित हो सके।

बॉयलर विधेयक, 2024 की मुख्य विशेषताएं:

- **बॉयलर का विनियमन:** विधेयक के अनुसार, बॉयलर के संचालन से पहले उसका पंजीकरण अनिवार्य होगा, जिसे हर साल नवीनीकृत करना आवश्यक होगा।
- **छूट:** विधेयक के अनुसार, 25 लीटर से कम क्षमता वाले, 1 किलोग्राम/सेमी^{2} से कम दबाव पर काम करने वाले और 100 डिग्री सेल्सियस से कम तापमान पर पानी गर्म करने वाले बॉयलर इसके प्रावधानों से मुक्त होंगे। इसके अलावा, सशस्त्र बलों द्वारा उपयोग किए जाने वाले बॉयलर भी इस विधेयक के दायरे में नहीं आएंगे।
- **अपराध और दंड:** विधेयक में बॉयलर में अनधिकृत परिवर्तन या सुरक्षा वाल्वों से छेड़छाड़ जैसे अपराधों के लिए दंड की रूपरेखा दी गई है, जिसका उद्देश्य असुरक्षित प्रथाओं को रोकना है।
- **सुरक्षा और एकरूपता:** विधेयक बॉयलर विस्फोटों को रोकने और देश भर में एक समान मानकों को बढ़ावा देकर जीवन और संपत्ति की सुरक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास करता है।
- **गैर-अपराधीकरण प्रावधान:** विधेयक में जन विश्वास (प्रावधानों में संशोधन) अधिनियम, 2023 के प्रावधानों को शामिल किया गया है, जिससे कुछ अपराधों को गैर-अपराधीकरण किया गया है। अब इन मामलों में कानूनी सजा की बजाय नागरिक दंड लगाया जाएगा, जिससे अनुपालन की प्रक्रिया आसान होगी।

विधेयक का महत्व:

- बॉयलर विधेयक, 2024 का उद्देश्य देश भर में नियमों को मानकीकृत करके बॉयलर का उपयोग करने वाले उद्योगों में सुरक्षा बढ़ाना है। बॉयलर विस्फोटों को रोकने पर ध्यान केंद्रित करके, यह जीवन और संपत्ति दोनों की रक्षा करना चाहता है, जिससे एक सुरक्षित औद्योगिक वातावरण को बढ़ावा मिलता है।

मुख्य मुद्दे:

- **प्रावधानों से छूट:** विधेयक राज्य सरकारों को अपने प्रावधानों से कुछ क्षेत्रों को छूट देने का अधिकार देता है, जिससे असंगतताएं और संभावित सुरक्षा समझौते हो सकते हैं।
- **अपील तंत्र का अभाव:** केंद्र सरकार या निरीक्षकों द्वारा लिए गए निर्णयों के लिए औपचारिक अपील प्रक्रिया का अभाव है, जिससे प्रशासनिक निष्पक्षता को लेकर चिंताएँ पैदा होती हैं।
- **निरीक्षकों के लिए प्रवेश शक्तियाँ:** निरीक्षकों को निरीक्षण के लिए परिसर में प्रवेश करने का अधिकार दिया जाता है। किन्तु, विधेयक इन शक्तियों के लिए सुरक्षा उपायों या दिशा-निर्देशों को निर्दिष्ट नहीं करता है, जिससे संभावित रूप से गोपनीयता और परिचालन स्वायत्तता प्रभावित हो सकती है।

न्यायिक जवाबदेही

संदर्भ:

हाल ही में राज्यसभा के अध्यक्ष जगदीप धनखड़ ने राज्यसभा में न्यायिक जवाबदेही पर चर्चा की। यह चर्चा दिल्ली उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के आवास से नकदी बरामद होने के आरोपों के बाद पारदर्शिता को लेकर बढ़ती चिंताओं के संदर्भ में हुई।

न्यायिक जवाबदेही क्या है?

- न्यायिक जवाबदेही उस सिद्धांत को संदर्भित करती है, जिसके अनुसार न्यायाधीशों को अपने निर्णयों और कार्यों के लिए जवाबदेह होना चाहिए। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि न्यायपालिका पारदर्शी तरीके से कार्य करे, निष्पक्षता बनाए रखे और कानून के शासन (Rule of Law) को कायम रखे। चूंकि न्यायाधीशों को समाज की ओर से न्याय देने की शक्ति प्राप्त होती है, इसलिए उनका कानूनी सिद्धांतों के अनुरूप कार्य करना आवश्यक है।

न्यायिक जवाबदेही के प्रावधान:

- **संवैधानिक प्रावधान:**
  - **अनुच्छेद 124(4) और 124(5):** सिद्ध दुर्व्यवहार (Proven Misbehavior) या अक्षमता (Incapacity) के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के महाभियोग (Impeachment) की प्रक्रिया निर्धारित करता है।
  - **अनुच्छेद 217:** उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए भी महाभियोग की समान प्रक्रिया प्रदान करता है।
  - **अनुच्छेद 235:** उच्च न्यायालयों को अधीनस्थ न्यायालयों (Subordinate Courts) की निगरानी और नियंत्रण करने का अधिकार देता है, जिससे न्यायिक प्रशासन की जवाबदेही सुनिश्चित होती है।
- **न्यायिक जवाबदेही के कानूनी प्रावधान:**
  - **न्यायाधीश (जांच) अधिनियम, 1968:** तीन सदस्यीय पैनल के माध्यम से न्यायिक कदाचार की जांच के लिए एक तंत्र स्थापित करता है।
  - **न्यायालय की अवमानना अधिनियम, 1971:** न्यायपालिका को अनुचित प्रभाव से बचाता है और उसकी स्वतंत्रता सुनिश्चित करता है।
  - **न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक (लंबित):** न्यायपालिका में पारदर्शिता और निगरानी तंत्र को सुधारने का प्रयास करता है।

न्यायिक जवाबदेही की आवश्यकता:

- **जनता का विश्वास सुनिश्चित करना:** न्यायपालिका की विश्वसनीयता बनाए रखना, जो कानूनी प्रणाली में जनता के

विश्वास के लिए महत्वपूर्ण है।

- **कदाचार को रोकना:** न्यायाधीशों को नैतिक मानकों और संवैधानिक सिद्धांतों का पालन करने के लिए प्रोत्साहित करना।
- **पारदर्शिता बढ़ाना:** निष्पक्षता को बढ़ावा देने के लिए न्यायिक निर्णयों की जांच की जानी चाहिए।
- **स्वतंत्रता और जिम्मेदारी को संतुलित करना:** यह सुनिश्चित करता है कि न्यायिक स्वतंत्रता का व्यक्तिगत या राजनीतिक लाभ के लिए दुरुपयोग न हो।
- **कानून के शासन को बढ़ावा देना:** यह सुनिश्चित करता है कि निर्णय निष्पक्ष, निष्पक्ष और संवैधानिक जनादेश के अनुरूप हों।

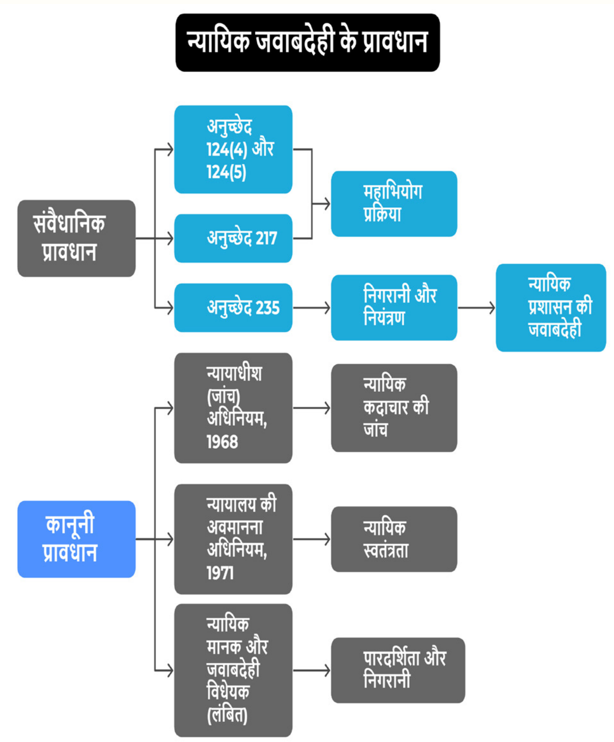

राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (एनजेएसी) अधिनियम:

- न्यायिक नियुक्तियों को लेकर लंबे समय से जारी बहस के संदर्भ में, राज्यसभा अध्यक्ष जगदीप धनखड़ ने राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (NJAC) अधिनियम का उल्लेख किया, जिसे 2015 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निरस्त कर दिया गया था।
- यह अधिनियम न्यायिक नियुक्तियों में सुधार लाने के उद्देश्य से लाया गया था, लेकिन इसे लेकर विवाद बना रहा। धनखड़ ने सुझाव दिया कि NJAC अधिनियम की विरासत और न्यायिक नियुक्तियों में संभावित सुधारों पर चर्चा के लिए राज्यसभा के नेताओं के साथ जल्द ही एक संरचित बैठक आयोजित की जाएगी।

सार्वजनिक रूप से अधिग्रहित भूमि पर सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय

संदर्भ:

एक ऐतिहासिक निर्णय में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए सरकार द्वारा अधिग्रहित भूमि के हस्तांतरण के संबंध में एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया है। अदालत ने फैसला सुनाया कि सार्वजनिक उपयोग के लिए संपत्ति अधिग्रहण अधिकार (Eminent Domain) की शक्ति के माध्यम से अर्जित भूमि को लाभार्थी के साथ किए गए निजी समझौतों के माध्यम से मूल मालिक को वापस हस्तांतरित नहीं किया जा सकता है।

मामले की पृष्ठभूमि:

- यह मामला दिल्ली कृषि विपणन बोर्ड द्वारा किए गए एक समझौते से उत्पन्न हुआ, जिसने अनाज बाजार की स्थापना के उद्देश्य से दिल्ली के नरेला में 33 एकड़ भूमि का अधिग्रहण किया था।
- भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के तहत, बोर्ड ने भूमि पर कब्जा कर लिया था, लेकिन बाद में एक निजी व्यवस्था के माध्यम से अधिग्रहित भूमि का आधा हिस्सा मूल मालिक को वापस हस्तांतरित करने पर सहमत हो गया। इसने सार्वजनिक भूमि से जुड़े ऐसे निजी सौदों की वैधता और नैतिकता पर सवाल उठाए।

फैसले के मुख्य बिंदु:

- **संपत्ति अधिग्रहण अधिकार:** अदालत ने इस बात पर जोर दिया कि सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए संपत्ति अधिग्रहण अधिकार को निजी समझौतों के माध्यम से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। इस तरह के समझौते भूमि अधिग्रहण पर राज्य के संप्रभु अधिकार को कमजोर करेंगे।
- **शक्ति का दुरुपयोग:** न्यायालय ने माना कि इस तरह की निजी व्यवस्था की अनुमति देना राज्य की शक्ति के साथ धोखाधड़ी होगी, जिससे वह उद्देश्य प्रभावी रूप से उलट जाएगा जिसके लिए भूमि अधिग्रहित की गई थी और जिसका उपयोग किया गया था।
- **सार्वजनिक उद्देश्य:** इस निर्णय ने इस सिद्धांत को मजबूत किया कि सार्वजनिक उद्देश्यों के लिए अधिग्रहित भूमि राज्य के नियंत्रण में रहनी चाहिए और इसका उपयोग इच्छित सार्वजनिक लाभ के लिए किया जाना चाहिए, जिससे अधिग्रहित भूमि का मनमाने ढंग से हस्तांतरण रोका जा सके।

फैसले के निहितार्थ:

- इस फैसले का भारत में भूमि अधिग्रहण और सार्वजनिक नीति पर महत्वपूर्ण प्रभाव है। यह भूमि अधिग्रहण प्रक्रियाओं में पारदर्शिता और जवाबदेही की आवश्यकता को रेखांकित करता है।
- यह निर्णय सरकारी भूमि अधिग्रहण शक्तियों की अखंडता की भी रक्षा करता है, यह सुनिश्चित करता है कि सार्वजनिक

कल्याण के लिए अधिग्रहित भूमि का निजी सौदों के माध्यम से दुरुपयोग नहीं किया जा सकता है।

संबंधित प्रावधान और मामले:

- भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 2013 मूल मालिक या उनके कानूनी उत्तराधिकारियों को अप्रयुक्त भूमि की वापसी के लिए एक तंत्र प्रदान करता है, लेकिन ऐसी वापसी विशिष्ट शर्तों और प्रक्रियाओं के अधीन है। इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने संबंधित मामलों में यह निर्णय दिया है कि अधिग्रहित भूमि को मूल स्वामी को वापस न करने का सरकार का निर्णय उचित होना चाहिए, न कि मनमाना।
- भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास और पुनर्स्थापन में उचित मुआवजा और पारदर्शिता का अधिकार आरएफसीटी-एलएआरआर अधिनियम, 2013 भूमि मालिकों के लिए उचित मुआवजा और प्रभावित लोगों के लिए पुनर्वास सुनिश्चित करता है। इसके लिए पीपीपी परियोजनाओं के लिए 70% और निजी परियोजनाओं के लिए 80% सहमति की आवश्यकता होती है, साथ ही सामाजिक प्रभाव आकलन (एसआईए) भी आवश्यक है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में मुआवजा बाजार दर से 4 गुना और शहरी क्षेत्रों में 2 गुना है।

शिक्षा प्रणाली में APAAR ID: संभावनाएँ और विवाद

संदर्भ:

हाल ही में राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP) 2020 के तहत स्वचालित स्थायी शैक्षणिक खाता रजिस्ट्री (APAAR) के कार्यान्वयन ने इसकी प्रभावशीलता और डेटा सुरक्षा को लेकर अभिवाहकों, शिक्षकों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के बीच गंभीर चिंताएँ उत्पन्न की हैं।

स्वचालित स्थायी शैक्षणिक खाता रजिस्ट्री (APAAR):

- APAAR ID एक पहल है, जिसे प्रत्येक छात्र को एक विशिष्ट डिजिटल पहचान प्रदान करने के लिए विकसित किया गया है। इसका उद्देश्य शैक्षणिक संस्थानों के बीच छात्रों के निर्बाध स्थानांतरण को सुगम बनाना है।
- सरकार के अनुसार, यह आईडी छात्रों के शैक्षणिक रिकॉर्ड, जैसे कि मार्कशीट, स्कूल की संबद्धता और अन्य प्रासंगिक विवरणों को एक मानकीकृत प्रारूप में संग्रहीत करेगी।
- इसके अतिरिक्त, APAAR ID को आधार से जोड़ा गया है और इसे डिजिलॉकर में संरक्षित किया गया है, जिससे यह न केवल छात्रों बल्कि शैक्षणिक अधिकारियों के लिए भी सुगमता से सुलभ हो जाती है।

क्या APAAR ID अनिवार्य है?

- हालाँकि सरकार APAAR ID को एक लाभकारी और स्वैच्छिक प्रणाली के रूप में प्रस्तुत कर रही है, लेकिन कई स्कूल और राज्य प्राधिकरण छात्रों को नामांकन के लिए प्रेरित कर रहे हैं। इससे माता-पिता के बीच इसकी वैकल्पिक प्रकृति को लेकर अस्पष्टता बनी हुई है।
- आधिकारिक दस्तावेजों के अनुसार, APAAR ID अनिवार्य नहीं है। हालांकि, CBSE और उत्तर प्रदेश सहित कुछ राज्यों के शैक्षणिक निकायों द्वारा जारी परिपत्रों में स्कूलों पर पंजीकरण में 100% संतृप्ति सुनिश्चित करने का दबाव डाला जा रहा है।

प्रमुख चिंताएँ:

- APAAR को लेकर प्रमुख चिंताओं में से एक डेटा सुरक्षा है, इंटरनेट फ्रीडम फाउंडेशन (IFF) सहित कई आलोचकों ने इसके निर्माण और कार्यान्वयन में पारदर्शिता की कमी को उजागर किया है।
- यह प्रणाली व्यक्तिगत और शैक्षणिक डेटा एकत्र करती है, लेकिन इसकी सुरक्षा के लिए कोई स्पष्ट कानूनी ढांचा नहीं है, जिससे संभावित दुरुपयोग की आशंका बढ़ जाती है।
- गोपनीयता संबंधी जोखिम भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, क्योंकि डेटा को शैक्षणिक प्लेटफॉर्म या तृतीय-पक्ष संस्थाओं के साथ साझा किया जा सकता है।
- डिजिटल पर्सनल डेटा प्रोटेक्शन एक्ट (2023) की धारा 9(3) के तहत बच्चों की ट्रैकिंग, व्यवहारिक निगरानी और लक्षित विज्ञापन पर प्रतिबंध लगाया गया है। इसके बावजूद, IFF ने चेतावनी दी है कि APAAR के तहत ऐसे जोखिमों को रोकने के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपाय उपलब्ध नहीं हैं।
- साइबर सुरक्षा को लेकर भी गंभीर चिंताएँ हैं, क्योंकि कमजोर डेटा सुरक्षा छात्रों के शैक्षणिक रिकॉर्ड को साइबर खतरों के प्रति संवेदनशील बना सकती है।
- इसके अलावा, डेटा दोहराव (duplication) का मुद्दा भी उठाया गया है, क्योंकि कई महत्वपूर्ण जानकारियाँ पहले से ही यूनिफाइड डिस्ट्रिक्ट इंफॉर्मेशन सिस्टम फॉर एजुकेशन प्लस (UDISE+) में संग्रहीत हैं। इस संदर्भ में, कई शिक्षकों ने APAAR की आवश्यकता और इसकी प्रभावशीलता पर सवाल उठाए हैं।

विकास और पर्यावरण संरक्षण पर सुप्रीम कोर्ट का निर्णय

संदर्भ:

हाल ही में एक ऐतिहासिक निर्णय में, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने औद्योगीकरण के माध्यम से विकास के अधिकार और स्वच्छ पर्यावरण के अधिकार के मध्य एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता को रेखांकित किया है। इस सन्दर्भ में न्यायालय ने दो अलग-अलग आदेशों 'एक राष्ट्रीय हरित अधिकरण (NGT) का और दूसरा मद्रास उच्च न्यायालय का, जिसने पर्यावरणीय मंजूरी न होने के कारण ऑरोविले, दूसरा टाउनशिप परियोजना में विकास गतिविधियां' को रद्द कर दिया।

निर्णय से मुख्य बिंदु:

- **मौलिक अधिकारों को संतुलित करना:**

» सर्वोच्च न्यायालय ने पुष्टि की कि स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 के तहत एक मौलिक अधिकार है। साथ ही, औद्योगीकरण के माध्यम से विकास का अधिकार भी मौलिक अधिकार ढांचे में महत्वपूर्ण स्थान रखता है, विशेष रूप से अनुच्छेद 14, 19 और 21 के अंतर्गत।

» यह निर्णय इस बात पर जोर देता है कि विकास और पर्यावरण संरक्षण दोनों ही समान रूप से महत्वपूर्ण अधिकार हैं और इन्हें संतुलित तरीके से अपनाया जाना चाहिए।

- **सतत विकास:**

» न्यायालय ने सतत विकास की आवश्यकता पर जोर दिया जोकि औद्योगीकरण को बढ़ावा देने और पर्यावरण की रक्षा के मध्य एक 'सुनहरा संतुलन' बनाता है। इस निर्णय में स्पष्ट किया गया कि आर्थिक विकास को पर्यावरणीय क्षति की कीमत पर नहीं किया जा सकता। बल्कि, सुनियोजित और जिम्मेदार विकास के माध्यम से दोनों का संतुलित और सामंजस्यपूर्ण सह-अस्तित्व सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

- **न्यायिक समीक्षा:**

» निर्णय में न्यायिक संयम (judicial restraint) के महत्व पर जोर दिया गया है तथा न्यायिक अतिक्रमण (judicial overreach) के विरुद्ध चेतावनी दी गई है।

» न्यायालय ने स्पष्ट किया कि स्वीकृत विकास योजनाओ 'जैसे ऑरोविले के लिए मास्टर प्लान' के कार्यान्वयन में न्यायपालिका को अनावश्यक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए, जब तक कि ऐसी असाधारण परिस्थितियाँ न हों जो इस हस्तक्षेप को उचित ठहराती हों।

» यह निर्णय न्यायिक प्रणाली द्वारा स्थापित योजनाओं और प्रक्रियाओं के सम्मान की आवश्यकता को पुष्ट करता है, जब तक कि कोई स्पष्ट कानूनी मुद्दा न हो।

मामले की पृष्ठभूमि:

- यह मामला तमिलनाडु में ऑरोविले टाउनशिप परियोजना से संबंधित विकास गतिविधियों पर केंद्रित था।
- 2022 में, राष्ट्रीय हरित अधिकरण (NGT) ने ऑरोविले फाउंडेशन को पर्यावरणीय मंजूरी (Environmental Clearance) की कमी के कारण निर्माण गतिविधियाँ रोकने का निर्देश दिया था। इसी तरह, मद्रास उच्च न्यायालय ने ऑरोविले टाउन डेवलपमेंट काउंसिल के पुनर्गठन से संबंधित फाउंडेशन द्वारा जारी अधिसूचना को रद्द कर दिया।
- इन न्यायिक आदेशों के खिलाफ ऑरोविले फाउंडेशन ने सुप्रीम कोर्ट में अपील की, जिसके परिणामस्वरूप सर्वोच्च न्यायालय ने हस्तक्षेप किया।

फैसले के निहितार्थ:

सुप्रीम कोर्ट के इस फैसले का भारत में विकास और पर्यावरण संरक्षण की नीतियों पर दूरगामी प्रभाव पड़ेगा। न्यायालय ने विकास और स्वच्छ पर्यावरण, दोनों को मौलिक अधिकार मानते हुए आर्थिक प्रगति और पारिस्थितिक स्थिरता के बीच संतुलन की स्पष्ट मिसाल पेश की है। यह निर्णय इस बात को रेखांकित करता है कि औद्योगिकीकरण और आर्थिक वृद्धि को सावधानी, जिम्मेदारी और स्थिरता के सिद्धांतों के साथ आगे बढ़ाया जाना चाहिए। यह भारत के विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच सामंजस्य स्थापित करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

न्यायिक सक्रियता और अतिक्रमण: संवैधानिक मर्यादा और लोकतांत्रिक संतुलन

न्यायिक अतिक्रमण एक ऐसा शब्द है जो उन परिस्थितियों को दर्शाता है जब न्यायपालिका अपनी सीमाओं से बाहर जाकर कार्य करती है और कार्यपालिका या विधायिका के पारंपरिक कार्यों में हस्तक्षेप करती है। भारत में न्यायिक सक्रियता और न्यायिक अतिक्रमण के बीच की महीन रेखा लंबे समय से चर्चा का विषय रही है। जहाँ न्यायिक सक्रियता को नागरिकों के अधिकारों की रक्षा और न्याय सुनिश्चित करने का साधन माना जाता है, वहीं न्यायिक अतिक्रमण को शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के लिए खतरा माना जाता है, जो लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का एक प्रमुख स्तंभ है।

हाल ही में, राज्यपालों द्वारा सुरक्षित रखे गए राज्य विधेयकों पर निर्णय लेने के लिए राष्ट्रपति को तीन महीने की समयसीमा निर्धारित करने वाला सुप्रीम कोर्ट का निर्देश, इस चर्चा को और तेज़ कर दिया हैं।

भारतीय संविधान में शक्तियों का पृथक्करण:

- भारतीय संविधान एक संरचनात्मक शक्तियों के पृथक्करण पर आधारित है, जहाँ:
  - विधायिका कानून बनाती है।
  - कार्यपालिका उन्हें लागू करती है।
  - न्यायपालिका कानूनों की व्याख्या करती है और विवादों का निपटारा करती है।
- हालाँकि भारत में अमेरिका की तरह कठोर पृथक्करण नहीं है, लेकिन एक कार्यात्मक विभाजन यह सुनिश्चित करता है कि कोई भी संस्था अपनी संवैधानिक सीमाओं से बाहर न जाए। न्यायिक अतिक्रमण तब होता है जब न्यायपालिका शासन या नीति निर्माण के मामलों में हस्तक्षेप करती है और अपनी व्याख्यात्मक और निर्णयात्मक भूमिकाओं से आगे बढ़ जाती है।
- न्यायपालिका का दायित्व यह सुनिश्चित करना है कि कानून और कार्यपालिका की कार्रवाई संविधान के अनुरूप हो। लेकिन जब न्यायपालिका, बिना किसी सक्षम कानून या लोकतांत्रिक विचार-विमर्श के अन्य संवैधानिक प्राधिकारियों को दिशा-निर्देश देने लगती है तो यह संस्थागत संतुलन के सिद्धांत को विकृत कर सकता है।

विलंबित विधेयकों पर सुप्रीम कोर्ट का निर्देश: एक उदाहरण

- इन संवैधानिक जटिलताओं को दर्शाने वाला हालिया उदाहरण सुप्रीम कोर्ट का 2024 का फैसला है, जिसमें राज्यपालों द्वारा सुरक्षित रखे गए राज्य विधेयकों पर निर्णय लेने के लिए राष्ट्रपति को तीन महीने की समयसीमा दी गई। अदालत ने यह भी कहा कि यदि इस अवधि से अधिक देरी होती है, तो उसका कारण रिकॉर्ड में दर्ज होना चाहिए और ऐसे विधेयकों को दोबारा पारित करने के बाद सुरक्षित रखने की कार्रवाई अमान्य मानी जाएगी।
- हालाँकि इसका उद्देश्य संघीय दक्षता को बनाए रखना और विधायी ठहराव को रोकना था, लेकिन इस फैसले ने कार्यपालिका की समय-सीमा और विवेकाधिकार में न्यायिक हस्तक्षेप पर गंभीर चिंता उत्पन्न की। इस निर्देश को न्यायिक अतिक्रमण का एक उदाहरण मानने के कई कारण है:
  - राष्ट्रपति एक संवैधानिक पद है, जिनके पास विवेकाधिकार होता है, जिसे न्यायिक समय-सीमा से बाधित नहीं किया जा सकता।
  - राष्ट्रपति को बाध्यकारी निर्देश देना संवैधानिक पदाधिकारियों

के बीच संतुलन को प्रभावित कर सकता है।

  » न्यायपालिका द्वारा समयसीमा निर्धारित करना कार्यपालिका के कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप है, जबकि इसे समर्थन देने वाला कोई वैधानिक ढांचा मौजूद नहीं है।

- यह निर्णय इस बात पर गहन विचार करने के लिए प्रेरित करता है कि न्यायिक समीक्षा कितनी दूर जा सकती है, इससे पहले कि वह हस्तक्षेप बन जाए—जो कि न्यायिक अतिक्रमण पर चल रही बहस का केंद्रीय विषय है।

पहलू	न्यायिक सक्रियता	न्यायिक अतिक्रमण
उद्देश्य	न्याय को सुनिश्चित करना	अति-सक्रिय होकर दायरे से बाहर जाना
वैधता	संविधान के अनुसार	सीमाओं का उल्लंघन
उदाहरण	पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार	नीति निर्धारण में हस्तक्षेप
प्रभाव	सकारात्मक	लोकतांत्रिक संतुलन पर खतरा

न्यायिक अतिक्रमण के अन्य प्रमुख उदाहरण:

- **श्याम नारायण चौकसे बनाम भारत संघ (2018):** सुप्रीम कोर्ट ने सिनेमा हॉल में राष्ट्रगान बजाना अनिवार्य कर दिया था, जिसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सांस्कृतिक नीति जो कार्यपालिका का क्षेत्र है, में हस्तक्षेप माना गया।
- **राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग (NJAC) निर्णय (2015):** न्यायिक नियुक्तियों में सुधार के लिए किए गए संवैधानिक संशोधन को खारिज कर दिया गया, जिसे न्यायपालिका के संस्थागत हितों की रक्षा और व्यापक जवाबदेही को नजरअंदाज़ करने के रूप में देखा गया।
- **हाईवे पर शराब बिक्री प्रतिबंध (2016):** सुप्रीम कोर्ट ने राष्ट्रीय राजमार्गों से 500 मीटर के भीतर शराब बिक्री पर प्रतिबंध लगा दिया, जिससे राज्य की राजस्व नीति और स्वायत्तता पर गंभीर प्रभाव पड़ा। यह निर्णय सड़क सुरक्षा से संबंधित कमजोर तर्कों पर आधारित था।
- **जॉली एलएलबी II केस (2021):** बॉम्बे हाई कोर्ट ने केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड द्वारा प्रमाणित फिल्म की समीक्षा के लिए समिति नियुक्त कर दी, जिसे नियामक प्राधिकरण के क्षेत्र में न्यायिक हस्तक्षेप माना गया।

अनुच्छेद 142 की भूमिका और संस्थागत जवाबदेही:

- अनुच्छेद 142 का उपयोग, जो सुप्रीम कोर्ट को "पूर्ण न्याय" के लिए आवश्यक आदेश पारित करने का अधिकार देता है, न्यायपालिका की कार्यात्मक पहुँच को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा चुका है।
- हालाँकि यह अक्सर असाधारण परिस्थितियों में उचित ठहराया जाता है, लेकिन बार-बार इस पर निर्भरता कुछ संरचनात्मक चिंताओं को जन्म देती है:
  » यह विधायी या कार्यपालिका ढांचे को दरकिनार कर सकता है, जिससे न्यायालय बिना वैधानिक प्रतिबंधों के कार्य कर सकता है।
  » यह बिना किसी लोकतांत्रिक बहस या संस्थागत नियंत्रण के बाध्यकारी मानदंड बना सकता है।
- हाल के वर्षों में न्यायिक जवाबदेही के सवाल भी उठे हैं। आंतरिक जांच और नैतिक मानकों से संबंधित मामलों में न्यायपालिका की बाहरी निरीक्षण से अपेक्षाकृत स्वतंत्रता, जवाबदेही की कमी को दर्शाती है। आलोचकों का मानना है कि न्यायिक स्वतंत्रता तभी सार्थक और वैध हो सकती है, जब उसके साथ पारदर्शी संस्थागत व्यवस्था भी हो।

संघवाद और शासन व्यवस्था में परस्पर हितों का टकराव:

- राष्ट्रपति की स्वीकृति पर सुप्रीम कोर्ट का निर्देश संघवाद के दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। राज्य विधेयकों पर राज्यपालों द्वारा विलंब, बार-बार सामने आने वाली समस्या रही है, जिससे शासन प्रणाली बाधित होती रही है। इस संदर्भ में, न्यायपालिका का हस्तक्षेप राज्य विधायिका की अधिकारिता को सशक्त करने और केंद्र के हस्तक्षेप को रोकने के रूप में देखा जा सकता है।
- हालाँकि, राष्ट्रपति जो मंत्रिपरिषद की सलाह पर कार्य करते हैं, पर सख्त समयसीमा लागू करना न्यायपालिका में शक्ति का केंद्रीकरण कर सकता है और कार्यपालिका की विवेकाधीन शक्ति को सीमित कर सकता है। इससे न्यायिक समीक्षा का स्वरूप संवैधानिक सुरक्षा उपाय से एक पर्यवेक्षी तंत्र में बदल सकता है, जिससे सरकार की शाखाओं के बीच संतुलन प्रभावित हो सकता है।

न्यायिक संयम:अतिक्रमण का समाधान:

- न्यायिक संयम का अर्थ है कि न्यायपालिका को आत्मानुशासन अपनाना चाहिए और नीति-निर्धारण के क्षेत्रों में हस्तक्षेप से बचना चाहिए। यह सिद्धांत न्यायिक निष्क्रियता नहीं, बल्कि संस्थागत भूमिकाओं के सम्मान और न्यायपालिका द्वारा शासन की भूमिका न निभाने की बात करता है। ऐतिहासिक निर्णय, जैसे कि:
  » अयोध्या मामला (2019), जिसमें न्यायालय ने भावनाओं के बजाय साक्ष्य के आधार पर निर्णय दिया।
  » इंडियन मेडिकल एसोसिएशन बनाम भारत संघ (2011), जिसमें चिकित्सा शिक्षा के नियमन से संबंधित निर्णयों में

हस्तक्षेप नहीं किया गया।

- ये ऐसे उदाहरण हैं जहाँ न्यायिक संयम अपनाया गया और लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं को अपना कार्य करने दिया गया। ऐसे दृष्टिकोण न्यायपालिका की विश्वसनीयता बनाए रखते हैं और लोकतंत्र को सुदृढ़ करते हैं।

वक्फ (संशोधन) अधिनियम 2025

सन्दर्भ:

हाल ही में संसद ने वक्फ (संशोधन) विधेयक, 2025 पारित किया है, जो अब "वक्फ (संशोधन) अधिनियम, 2025" के रूप में लागू हो गया है। यह विधेयक वक्फ अधिनियम, 1995 में महत्वपूर्ण संशोधन करता है, जिसका उद्देश्य वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन में पारदर्शिता, जवाबदेही और समावेशिता सुनिश्चित करना है।

वक्फ क्या है?

- वक्फ एक इस्लामी परंपरा और कानून पर आधारित व्यवस्था है, जिसमें कोई मुस्लिम व्यक्ति धार्मिक या परोपकारी उद्देश्यों के लिए अपनी संपत्ति का दान करता है।
- यह दान मस्जिद, स्कूल, अस्पताल या अन्य जनसेवा से जुड़े संस्थान स्थापित करने के लिए किया जाता है।
- वक्फ की गई संपत्ति को बेचा, उपहार में दिया, विरासत में सौंपा या गिरवी नहीं रखा जा सकता।
- एक बार वक्फ की घोषणा हो जाने के बाद, संपत्ति वाक़िफ़ (दानदाता) से अलग हो जाती है और इस्लामिक मान्यता के अनुसार वह संपत्ति ईश्वर (अल्लाह) की मानी जाती है, जो हमेशा के लिए सुरक्षित रहती है।

वक्फ (संशोधन) अधिनियम की आवश्यकता क्यों पड़ी?

यह अधिनियम वक्फ संपत्तियों से जुड़ी विभिन्न जटिलताओं और समस्याओं के समाधान के उद्देश्य से लाया गया है। इसके पीछे मुख्य कारण निम्नलिखित हैं:

- वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन में पारदर्शिता की कमी के आरोप लगते रहे हैं।
- वक्फ भूमि के अधूरे सर्वेक्षण और रिकॉर्ड में अनियमितताओं के कारण स्वामित्व को लेकर विवाद उत्पन्न होते हैं।
- मुस्लिम महिलाओं को वक्फ संपत्तियों में समुचित अधिकार और हिस्सा न मिलना, जो लैंगिक समानता के सिद्धांतों के विरुद्ध है।
- वक्फ भूमि पर अवैध कब्जे और उनसे जुड़े लंबित मुकदमे, जिनका समाधान समय पर नहीं हो पाता।
- वक्फ बोर्डों द्वारा मनमाने ढंग से संपत्तियों को वक्फ घोषित करना, जिससे कानूनी और सामाजिक विवाद बढ़ते हैं।
- सरकारी भूमि को वक्फ संपत्ति घोषित करने से संबंधित लगातार बढ़ते विवाद।
- वक्फ संपत्तियों के लेखा-जोखा, ऑडिट और वित्तीय पारदर्शिता की गंभीर कमी।
- वक्फ संपत्तियों से संबंधित प्रशासनिक कार्यों में लापरवाही और धीमी कार्यप्रणाली, जिससे कार्यक्षमता प्रभावित होती है।
- वक्फ ट्रस्ट की संपत्तियों का उद्देश्यपूर्ण और प्रभावी उपयोग न होना।
- केंद्रीय और राज्य वक्फ बोर्डों में सभी हितधारकों का समुचित प्रतिनिधित्व न होना, जिससे निर्णय प्रक्रिया पक्षपातपूर्ण मानी जाती है।

अधिनियम का नाम	वक्फ एक्ट 1995	यूनिफाइड वक्फ मैनेजमेंट इम्पावरमेंट एफिशिएंसी एंड डेवलपमेंट एक्ट 2025
वक्फ का गठन	वक्फ गठन की घोषणा यूजर्स या एंडोमेंट (वक्फ-अलल-औलाद) द्वारा किया जा सकती है.	नए बिल में वक्फ बाय यूजर्स को हटा दिया गया है .
वक्फ के रूप में सरकारी संपत्ति	स्पष्ट प्रावधान नहीं	सरकारी संपत्ति वक्फ नहीं होगी
वक्फ संपत्ति निर्धारित करने की शक्ति	वक्फ बोर्ड के पास वक्फ संपत्ति की जांच का अधिकार	इस प्रावधान को हटा गया
वक्फ का सर्वे	सर्वे करने के लिए सर्वे कमीशन और अतिरिक्त आयुक्तों की नियुक्ति	कलेक्टर को सर्वे करने का अधिकार
सेंट्रल वक्फ काउंसिल की कंपोजिशन	काउंसिल के सभी सदस्य मुस्लिम होने चाहिए	दो सदस्य गैर-मुस्लिम होने चाहिए
ट्रिब्यूनल के आदेश पर अपील	ट्रिब्यूनल का निर्णय अंतिम	ट्रिब्यूनल के निर्णयों को अंतिम मानने वाले प्रावधानों को हटाया
संप्रदायों के लिए अलग-अलग वक्फ बोर्ड	शिया वक्फ का हिस्सा 15 प्रतिशत से अधिक होने पर अलग बोर्ड	सभी संप्रदायों के लिए अलग-अलग वक्फ बोर्ड की अनुमति

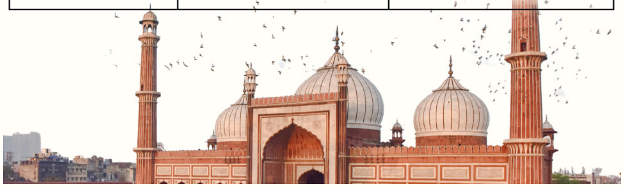

वक्फ (संशोधन) अधिनियम 2025 के मुख्य प्रावधान:

- **गैर-मुस्लिम संपत्तियों को वक्फ घोषित करने पर रोक:** यह विधेयक वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन को अधिक पारदर्शी और न्यायसंगत बनाने का प्रयास करता है। साथ ही, यह ऐतिहासिक धरोहरों और नागरिकों की निजी संपत्ति के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करता है। विभिन्न राज्यों में इस मुद्दे पर उत्पन्न विवादों और कानूनी संघर्षों को ध्यान में रखते हुए यह प्रावधान जोड़ा गया है।

- **मुस्लिम महिलाओं और उत्तराधिकारियों के अधिकार:** इस विधेयक का उद्देश्य मुस्लिम महिलाओं 'विशेष रूप से विधवाओं और तलाकशुदा महिलाओं' की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सामाजिक स्थिति को सुधारना है। इसके तहत स्वयं सहायता समूहों और आर्थिक सशक्तिकरण योजनाओं को बढ़ावा दिया जाएगा।
- **प्रशासनिक पारदर्शिता और दक्षता:** विधेयक वक्फ संपत्तियों के प्रबंधन और प्रशासन को संगठित, पारदर्शी और प्रभावी बनाने की दिशा में अनेक कदम उठाता है, जैसे:
  - » संपत्ति प्रबंधन में पारदर्शिता सुनिश्चित करना
  - » वक्फ बोर्ड और स्थानीय प्रशासन के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना
  - » सभी हितधारकों के अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करना
- **समावेशी प्रतिनिधित्व और सशक्तिकरण:** विधेयक वक्फ बोर्डों को मुस्लिम समुदाय के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व देने की दिशा में कदम बढ़ाता है, जिससे निर्णय लेने की प्रक्रिया अधिक लोकतांत्रिक और समावेशी बन सके। यह पिछड़े वर्गों और अन्य उपेक्षित समुदायों के सशक्तिकरण की दिशा में भी सहायक सिद्ध होगा।

तेलंगाना अनुसूचित जातियों का उप-वर्गीकरण करने वाला पहला राज्य बना

संदर्भ:

तेलंगाना सरकार ने आधिकारिक तौर पर तेलंगाना अनुसूचित जाति (आरक्षण का युक्तिकरण) अधिनियम, 2025 के कार्यान्वयन को अधिसूचित किया है, जो 1 अगस्त, 2024 को सुप्रीम कोर्ट के ऐतिहासिक फैसले के बाद अनुसूचित जातियों (एससी) के उप-वर्गीकरण को लागू करने वाला पहला भारतीय राज्य बन गया है। यह विकास आरक्षण ढांचे में एक महत्वपूर्ण प्रगति को दर्शाता है, जिसका उद्देश्य एससी उप-जातियों के बीच उनकी सापेक्ष सामाजिक-आर्थिक स्थितियों के आधार पर लाभों का समान वितरण सुनिश्चित करना है।

वर्गीकरण संरचना:

- 14 अप्रैल, 2025 से प्रभावी सरकारी अधिसूचना के अनुसार, तेलंगाना ने आरक्षण उद्देश्यों के लिए अपनी 59 अनुसूचित जाति उप-जातियों को तीन समूहों में विभाजित किया है:
  - » **समूह-I (सबसे पिछड़े एससी):** इसमें 15 उप-जातियाँ शामिल हैं, जिन्हें सबसे सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़ा माना जाता है। इस समूह को शिक्षा और रोजगार तक पहुँच को बढ़ावा देने के लिए 1% आरक्षण आवंटित किया गया है, भले ही वे एससी आबादी का केवल 0.5% हिस्सा हों।
  - » **समूह-II (मामूली रूप से लाभान्वित एससी):** इसमें 18 उप-जातियाँ शामिल हैं जिन्हें मौजूदा नीतियों के तहत सीमित लाभ मिला है। उन्हें 9% आरक्षण का हिस्सा दिया गया है।
  - » **समूह-III (अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति वाले एससी):** इसमें 26 उप-जातियां शामिल हैं जिनकी ऐतिहासिक रूप से अवसरों तक अधिक पहुंच रही है। इस समूह को 5% आरक्षण मिलता है।

उप-वर्गीकरण पर सुप्रीम कोर्ट का फैसला:

- सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि राज्यों को पिछड़ेपन के विभिन्न स्तरों को संबोधित करने के लिए मौजूदा आरक्षण कोटा के भीतर एससी और एसटी को उप-वर्गीकृत करने की संवैधानिक अनुमति है।
- इसका मतलब यह है कि अनुभवजन्य साक्ष्य और ऐतिहासिक नुकसान के आधार पर एससी को 15% आरक्षण कोटा के भीतर आंतरिक रूप से स्तरीकृत किया जा सकता है। भारत के मुख्य न्यायाधीश ने "उप-वर्गीकरण" और "उप-श्रेणीकरण" के बीच अंतर किया और इस बात पर जोर दिया कि ऐसे उपायों का इस्तेमाल राजनीतिक तुष्टिकरण के लिए नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इनका उद्देश्य वास्तविक उत्थान होना चाहिए।
- न्यायालय ने 'क्रीमी लेयर' सिद्धांत, जो पहले केवल अन्य पिछड़ा वर्ग (ओबीसी) पर लागू था, को एससी और एसटी तक भी बढ़ा दिया। नतीजतन, एससी और एसटी के भीतर आर्थिक और सामाजिक रूप से उन्नत व्यक्तियों को आरक्षण के लाभों से बाहर रखा जा सकता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि केवल वास्तव में वंचित लोगों को ही लाभ मिले।
- महत्वपूर्ण बात यह है कि फैसले में कहा गया है कि किसी भी उप-समूह के लिए 100% आरक्षण की अनुमति नहीं है और किसी भी उप-वर्गीकरण की न्यायिक समीक्षा की जानी चाहिए। इसके अलावा, आरक्षण के लाभ पहली पीढ़ी तक ही सीमित होने चाहिए; बाद की पीढ़ियाँ जिन्होंने पहले ही लाभ उठा लिया है और उच्च दर्जा प्राप्त कर लिया है, वे फिर से पात्र नहीं होंगी।

कार्यान्वयन और प्रभाव:

- कुल 59 एससी उप-जातियों में से 33 अपनी मौजूदा श्रेणियों में बनी हुई हैं, जबकि 26 उप-जातियों (एससी आबादी का 3.43%) को पुनर्वर्गीकृत किया गया है। यह नीति भविष्य में सरकारी नौकरियों में भर्ती का मार्गदर्शन करेगी, हालांकि यह पहले से अधिसूचित रिक्तियों पर लागू नहीं होगी।

इंडिया जस्टिस रिपोर्ट 2025

संदर्भ:

हाल ही 15 अप्रैल, 2025 को जारी इंडिया जस्टिस रिपोर्ट (आईजेआर) 2025, भारतीय राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में न्याय वितरण की स्थिति का व्यापक मूल्यांकन प्रदान करती है। टाटा ट्रस्ट द्वारा शुरू की गई और कई नागरिक समाज संगठनों और डेटा भागीदारों द्वारा समर्थित, रिपोर्ट चार प्रमुख स्तंभों: पुलिस, न्यायपालिका, जेल और कानूनी सहायता में राज्यों के प्रदर्शन का मूल्यांकन करती है।

रिपोर्ट की मुख्य विशेषताएं:

- **पुलिस बलों में लैंगिक प्रतिनिधित्व:** आईजेआर 2025 का एक प्रमुख निष्कर्ष वरिष्ठ पुलिस भूमिकाओं में महिलाओं का कम प्रतिनिधित्व है - 20.3 लाख कर्मियों में 1,000 से भी कम। किसी भी राज्य या केंद्र शासित प्रदेश ने पुलिस में महिलाओं के लिए अपने आरक्षित कोटे को पूरा नहीं किया है। बिहार में राज्य पुलिस में महिलाओं की हिस्सेदारी सबसे अधिक है, हालांकि ऐसा प्रतिनिधित्व पूरे देश में असमान है।
- **यातना और अवसंरचना संबंधी कमियाँ:** रिपोर्ट में इस बात पर प्रकाश डाला गया है कि भारत की पुलिस व्यवस्था में यातना एक लगातार समस्या बनी हुई है। इसमें कहा गया है कि 17% पुलिस स्टेशनों में सीसीटीवी निगरानी का अभाव है और लगभग 30% में महिला सहायता डेस्क का अभाव है, जो बुनियादी ढांचे और लैंगिक-संवेदनशील तंत्र में कमियों को दर्शाता है। हालाँकि पुलिस को प्रति व्यक्ति न्याय व्यय के रूप में सबसे अधिक ₹1,275 मिलते हैं, लेकिन हर 831 लोगों पर केवल एक सिविल पुलिस कर्मी है, जो पुलिस-जनसंख्या अनुपात के अपर्याप्त होने की ओर इशारा करता है।

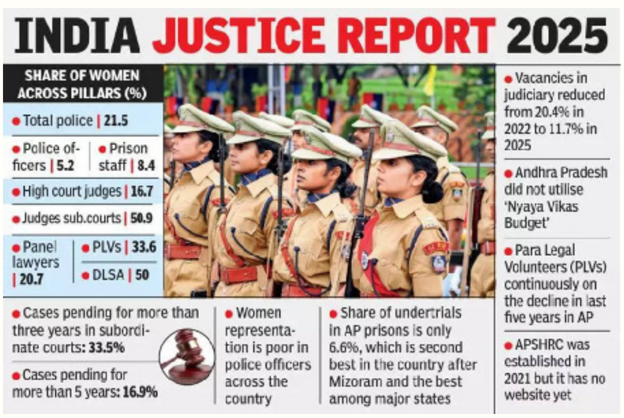

- **न्यायिक रिक्तियाँ और बजट आवंटन:** भारत में न्यायिक रिक्तियाँ बहुत अधिक हैं, गुजरात में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों और कर्मचारियों दोनों के मामले में सबसे अधिक रिक्तियाँ हैं। उत्तर प्रदेश में, उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के आधे से अधिक पद खाली हैं। बिहार में गंभीर देरी देखी गई है, जहाँ 71% परीक्षण और जिला न्यायालय के मामले तीन साल से अधिक समय से लंबित हैं। राष्ट्रीय स्तर पर, प्रति व्यक्ति न्यायपालिका व्यय ₹182 है, फिर भी कोई भी राज्य अपने वार्षिक बजट का 1% से अधिक इसके लिए आवंटित नहीं करता है।
- **जेल की स्थिति:** रिपोर्ट के अनुसार, उत्तर प्रदेश की जेलों में सबसे अधिक भीड़ है, जबकि दिल्ली में विचाराधीन कैदियों की संख्या 91% है। इसके विपरीत, उच्च बजट उपयोग, कम स्टाफ रिक्तियों और सबसे अच्छे अधिकारी कार्यभार- प्रति अधिकारी 22 कैदियों के साथ तमिलनाडु जेल प्रबंधन में सबसे आगे है।
  - » हालाँकि, तमिलनाडु के समग्र न्याय प्रदर्शन में गिरावट आई है। कमजोर बजट और प्रशिक्षण के कारण इसकी पुलिस रैंकिंग 2024 में तीसरे स्थान से गिरकर 2025 में 13वें स्थान पर आ गई। कानूनी सहायता में, यह कम फंडिंग और कम पैरालीगल स्वयंसेवकों के कारण 12वें स्थान से गिरकर 16वें स्थान पर आ गया।
- राष्ट्रीय स्तर पर, प्रति व्यक्ति जेल खर्च ₹57 है। प्रति कैदी औसत खर्च 2021-22 में ₹38,028 से बढ़कर 2022-23 में ₹44,110 हो गया। आंध्र प्रदेश ने सबसे अधिक खर्च किया- प्रति कैदी ₹2,67,673- जो राज्यों में व्यापक असमानताओं को दर्शाता है।
- **कानूनी सहायता:** कानूनी सहायता पर राष्ट्रीय प्रति व्यक्ति व्यय ₹6 प्रति वर्ष के साथ चिंताजनक रूप से कम बना हुआ है, जो इस महत्वपूर्ण स्तंभ की निरंतर उपेक्षा को दर्शाता है।

पंचायत उन्नति सूचकांक

संदर्भ:

हाल ही में पंचायती राज मंत्रालय ने सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) को स्थानीय स्तर पर लागू करने और ग्रामीण शासन व्यवस्था को सशक्त बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए, "पंचायत उन्नति सूचकांक (Panchayat Advancement Index - PAI)" लॉन्च किया है। भारत की 2.5 लाख से अधिक ग्राम पंचायतों की प्रगति और समावेशी विकास को मापने के लिए यह एक परिवर्तनकारी उपकरण है।

पंचायत उन्नति सूचकांक क्या है?

- पंचायत उन्नति सूचकांक (PAI) एक समग्र (Composite) सूचकांक है, जिसे स्थानीयकृत सतत विकास लक्ष्यों (LSDGs) के तहत तैयार किया गया है।

- इसमें कुल 435 स्थानीय संकेतक (जिनमें 331 अनिवार्य और 104 वैकल्पिक हैं) और 566 अलग-अलग आंकड़े शामिल हैं। ये सभी संकेतक 9 प्रमुख विषयों पर आधारित हैं, जो सांख्यिकी एवं कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय (MoSPI) के राष्ट्रीय संकेतक ढांचे (NIF) के अनुरूप तैयार किए गए हैं।
- यह सूचकांक भारत की SDG 2030 एजेंडा को नीचे से ऊपर (bottom-up) के दृष्टिकोण से, स्थानीय भागीदारी और जमीनी स्तर के विकास के माध्यम से हासिल करने की प्रतिबद्धता को दर्शाता है।

पंचायत उन्नति सूचकांक का उद्देश्य:

- पंचायत उन्नति सूचकांक का मुख्य उद्देश्य ग्राम पंचायतों के स्तर पर सतत विकास लक्ष्यों (SDGs) की दिशा में हुई प्रगति का आकलन और मूल्यांकन करना है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि स्थानीय स्तर पर सतत विकास को कितना अपनाया गया है और उसका क्रियान्वयन कितना प्रभावी रहा है।
- यह एक बहु-क्षेत्रीय और बहु-आयामी सूचकांक है, जो पंचायतों की समग्र, संतुलित और टिकाऊ प्रगति को मापने में सहायक होगा।

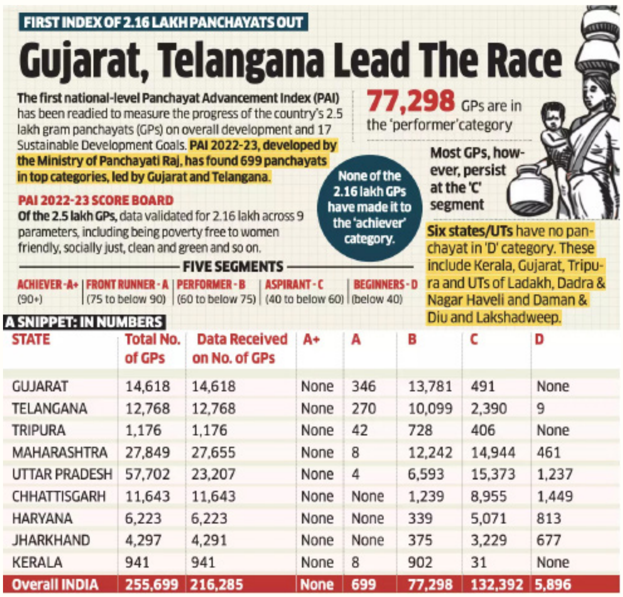

FIRST INDEX OF 2.16 LAKH PANCHAYATS OUT

Gujarat, Telangana Lead The Race

The first national-level Panchayat Advancement Index (PAI) has been readied to measure the progress of the country's 2.5 lakh gram panchayats (GPs) on overall development and 17 Sustainable Development Goals. PAI 2022-23, developed by the Ministry of Panchayati Raj, has found 699 panchayats in top categories, led by Gujarat and Telangana.

77,298 GPs are in the 'performer' category

Most GPs, however, persist at the 'C' segment

None of the 2.16 lakh GPs have made it to the 'achiever' category.

PAI 2022-23 SCORE BOARD

Of the 2.5 lakh GPs, data validated for 2.16 lakh across 9 parameters, including being poverty free to women friendly, socially just, clean and green and so on.

Six states/UTs have no panchayat in 'D' category. These include Kerala, Gujarat, Tripura and UTs of Ladakh, Dadra & Nagar Haveli and Daman & Diu and Lakshadweep.

FIVE SEGMENTS

ACHIEVER - A+ (90+) | FRONT RUNNER - A (75 to below 90) | PERFORMER - B (60 to below 75) | ASPIRANT - C (40 to below 60) | BEGINNERS - D (below 40)

A SNIPPET: IN NUMBERS

STATE	Total No. of GPs	Data Received on No. of GPs	A+	A	B	C	D
GUJARAT	14,618	14,618	None	346	13,781	491	None
TELANGANA	12,768	12,768	None	270	10,099	2,390	9
TRIPURA	1,176	1,176	None	42	728	406	None
MAHARASHTRA	27,849	27,655	None	8	12,242	14,944	461
UTTAR PRADESH	57,702	23,207	None	4	6,593	15,373	1,237
CHHATTISGARH	11,643	11,643	None	None	1,239	8,955	1,449
HARYANA	6,223	6,223	None	None	339	5,071	813
JHARKHAND	4,297	4,291	None	None	375	3,229	677
KERALA	941	941	None	8	902	31	None
Overall INDIA	255,699	216,285	None	699	77,298	132,392	5,896

पंचायतों की श्रेणियाँ (PAI स्कोर के आधार पर):

- पंचायतों द्वारा प्राप्त पीएआई स्कोर स्कोर और विषयगत प्रदर्शन के आधार पर इन ग्राम पंचायतों को पाँच श्रेणियों में बाँटा गया है:
  - अचीवर (उत्कृष्ट) – स्कोर 90 और उससे अधिक
  - फ्रंट रनर (आगुवा) – स्कोर 75 से 89.99
  - परफॉर्मर (प्रदर्शनकारी) – स्कोर 60 से 74.99
  - आकांक्षी (आकांक्षी) – स्कोर 40 से 59.99
  - शुरुआती (प्रारंभिक) – स्कोर 40 से कम

- **स्थानीयकृत सतत विकास लक्ष्यों के प्रमुख विषय:**
  - गरीबी मुक्त और आजीविका युक्त पंचायत
  - स्वस्थ पंचायत
  - बाल हितैषी पंचायत
  - जल संपन्न पंचायत
  - स्वच्छ और हरित पंचायत
  - आत्मनिर्भर बुनियादी ढाँचा युक्त पंचायत
  - सामाजिक न्याय और सामाजिक सुरक्षा युक्त पंचायत
  - सुशासन युक्त पंचायत
  - महिला हितैषी पंचायत

प्रभाव:

- पंचायत उन्नति सूचकांक के माध्यम से पंचायतों की वर्ष दर वर्ष प्रगति को ट्रैक किया जा सकेगा। इससे यह पता चल सकेगा कि कौन सी पंचायतें स्थानीय लक्ष्यों की पूर्ति की दिशा में आगे बढ़ रही हैं और किस पंचायत को और अधिक ध्यान व संसाधनों की आवश्यकता है।
- वित्त वर्ष 2022-23 का पहला आधारभूत पंचायत उन्नति सूचकांक (Baseline PAI) पंचायतों को स्थानीय लक्ष्य तय करने, ज़रूरी कार्यों की पहचान करने और प्रमाण आधारित पंचायत विकास योजनाएँ (PDPs) तैयार करने में मदद करेगा, जिससे वे तय किए गए लक्ष्यों को बेहतर ढंग से प्राप्त कर सकें।

राज्यवार पंचायतों की मुख्य विशेषताएं:

- **अग्रणी ग्राम पंचायतें :**
  - गुजरात : 346 (सर्वाधिक)
  - तेलंगाना : 270
- **उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाली ग्राम पंचायतें:**
  - गुजरात : 13,781
  - महाराष्ट्र : 12,242
  - तेलंगाना : 10,099
  - मध्य प्रदेश : 7,912
  - उत्तर प्रदेश : 6,593
- **आकांक्षी ग्राम पंचायतें (जिन्हें विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है):**
  - बिहार
  - छत्तीसगढ
  - आंध्र प्रदेश

भारत की समग्र पीएआई 2022-23 आंकड़ा :

- **कुल ग्राम पंचायतें :** 2,55,699

- **प्रस्तुत सत्यापित डेटा :** 2,16,285 पंचायतें
- **वर्गीकरण:**
- अग्रणी : 699 (0.3%)
    - उत्कृष्ट प्रदर्शन : 77,298 (35.8%)
    - उम्मीदवार : 1,32,392 (61.2%)
    - प्रारंभिक : 5,896 (2.7%)
    - अचीवर : 0 (कोई भी योग्य नहीं)

वरिष्ठ नागरिकों का अपने बच्चों को संपत्ति से बेदखल करने का अधिकार

सन्दर्भ:

हाल ही में सुप्रीम कोर्ट ने एक वरिष्ठ दंपत्ति द्वारा दायर उस याचिका को खारिज कर दिया, जिसमें उन्होंने "वरिष्ठ नागरिकों का भरण-पोषण एवं कल्याण अधिनियम, 2007" (Senior Citizens Act) के अंतर्गत अपने बेटे को उनके घर से बेदखल करने की माँग की थी।

बेदखली से इनकार के कारण:

- सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि प्रस्तुत मामले में ऐसा कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिला जिससे यह साबित हो सके कि बेटे ने अपने माता-पिता के साथ दुर्व्यवहार या उपेक्षा की हो। अदालत ने यह स्पष्ट किया कि हर मामले में बेदखली का आदेश देना अनिवार्य नहीं है। ऐसा आदेश तभी दिया जा सकता है जब पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हों कि वरिष्ठ नागरिक के साथ दुर्व्यवहार या उपेक्षा की गई है।
- सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि वरिष्ठ नागरिकों को अपने बच्चों या रिश्तेदारों से भरण-पोषण पाने का कानूनी अधिकार प्राप्त है। यदि यह जिम्मेदारी निभाई नहीं जाती, तो संबंधित वरिष्ठ नागरिक "वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007" के तहत न्यायाधिकरण में शिकायत दर्ज कर सकते हैं। न्यायाधिकरण परिस्थितियों और साक्ष्यों के आधार पर तय करेगा कि बेदखली का आदेश उचित है या नहीं।

वरिष्ठ नागरिक अधिनियम, 2007 के बारे में:

- इस अधिनियम का उद्देश्य वरिष्ठ नागरिकों को आर्थिक सुरक्षा, देखभाल और कल्याण प्रदान करना है।
- इसमें बच्चों को अपने माता-पिता का भरण-पोषण करने का कानूनी दायित्व दिया गया है।
- इसके साथ ही सरकार को यह जिम्मेदारी दी गई है कि वह वृद्धाश्रम और वरिष्ठ नागरिकों के लिए चिकित्सा सुविधाएँ सुनिश्चित करे।
- अधिनियम के तहत प्रशासनिक न्यायाधिकरण (Tribunal) और अपीलीय न्यायाधिकरण बनाए गए हैं ताकि वरिष्ठ नागरिकों को समय पर न्याय मिल सके।

वरिष्ठ नागरिक की परिभाषा:

- अधिनियम के अनुसार, जो व्यक्ति 60 वर्ष से अधिक आयु के हैं, उन्हें वरिष्ठ नागरिक माना जाता है।

भरण-पोषण का अधिकार:

- अधिनियम में यह प्रावधान किया गया है कि बच्चों या उत्तराधिकारियों का यह कानूनी दायित्व है कि वे अपने बुजुर्ग माता-पिता या वरिष्ठ नागरिकों (जो स्वयं अपना भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं) के भरण-पोषण का प्रबंध करें।
- यदि वरिष्ठ नागरिक स्वयं का भरण-पोषण करने में असमर्थ हैं, तो वे अपने बच्चों या उत्तराधिकारियों से वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए भरण-पोषण न्यायाधिकरण में जा सकते हैं।

त्यागने पर सजा:

- इस अधिनियम के अनुसार यदि कोई बच्चा या उत्तराधिकारी जानबूझकर वरिष्ठ नागरिक को अकेला छोड़ देता है, तो यह दंडनीय अपराध है।
- ऐसा करने पर ₹5,000 तक का जुर्माना या 3 महीने तक की जेल या दोनों हो सकते हैं।

संपत्ति और उत्तराधिकार का अधिकार:

- वरिष्ठ नागरिक अपने बच्चों से भरण-पोषण के साथ-साथ संपत्ति में हिस्सा मांग सकते हैं।
- यदि उन्हें उनकी संपत्ति या उत्तराधिकार से वंचित किया जाता है, तो वे इस अधिनियम के तहत न्याय की मांग कर सकते हैं।

रेलवे (संशोधन) विधेयक, 2024

संदर्भ:

भारत की संसद ने हाल ही में रेलवे (संशोधन) विधेयक, 2024 पारित किया है, जो रेलवे अधिनियम, 1989 में संशोधन करके रेलवे बोर्ड की शक्तियों और स्वायत्तता को बढ़ाने का प्रयास करता है। इस विधेयक का उद्देश्य रेलवे संचालन को सरल बनाना, प्रशासन में सुधार करना, अधिक जवाबदेही सुनिश्चित करना और भारतीय रेलवे की कार्यक्षमता को बढ़ाना है।

रेलवे (संशोधन) विधेयक, 2024 की प्रमुख विशेषताएँ-

इस विधेयक के तहत भारतीय रेलवे के प्रशासनिक ढांचे में कई महत्वपूर्ण बदलाव किए गए हैं, विशेषतः रेलवे बोर्ड से संबंधित:

- **भारतीय रेलवे बोर्ड अधिनियम, 1905 का निरसन:** यह विधेयक भारतीय रेलवे बोर्ड अधिनियम, 1905 को रद्द कर देता है और उसकी प्रावधानों को रेलवे अधिनियम, 1989 में समाहित करता है। इससे कानूनी प्रक्रियाएँ सरल होंगी और प्रशासनिक जटिलताएँ कम होंगी, जिससे रेलवे का संचालन अधिक प्रभावी और सुचारू होगा।
- **रेलवे बोर्ड में केंद्र सरकार की भूमिका बढ़ी:** केंद्र सरकार को रेलवे बोर्ड में विभिन्न शक्तियाँ और कार्य सौंपने का अधिकार मिलेगा। इससे प्रशासन को अधिक लचीलापन मिलेगा और निर्णय लेने की प्रक्रिया अधिक कुशल होगी।
- **रेलवे बोर्ड की संरचना और नियुक्ति प्रक्रिया:** केंद्र सरकार को यह अधिकार दिया गया है कि वह बोर्ड के सदस्यों की संख्या, उनकी योग्यता, अनुभव और सेवा की शर्तें तय कर सके। यह विधेयक रेलवे बोर्ड के अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति की प्रक्रिया को पारदर्शी और सक्षम बनाने की बात करता है।

भारतीय रेलवे के बारे में संक्षिप्त जानकारी:

- भारतीय रेलवे 68,000 किलोमीटर से अधिक पटरियों का संचालन करता है, जिससे यह दुनिया का चौथा सबसे बड़ा रेलवे नेटवर्क बन जाता है (अमेरिका, रूस और चीन के बाद)।
- भारतीय रेलवे प्रतिदिन लगभग 2.3 करोड़ यात्रियों को सेवा प्रदान करता है।
- 97% ब्रॉड-गेज लाइनों का विद्युतीकरण हो चुका है।
- भारत सरकार ने 2030 तक रेलवे में माल भाड़े की हिस्सेदारी 27% (2022) से बढ़ाकर 45% करने का लक्ष्य रखा है।

आगे की राह:

- **स्वतंत्र नियामक (Independent Regulator):** विशेषज्ञों का सुझाव है कि रेलवे क्षेत्र के प्रमुख पहलुओं जैसे किराया निर्धारण, सुरक्षा और प्रतिस्पर्धा की निगरानी के लिए एक स्वतंत्र नियामक संस्था बनाई जानी चाहिए। इससे उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा होगी और रेलवे क्षेत्र अधिक प्रतिस्पर्धी और प्रभावी बनेगा।
- **क्षेत्रीय इकाइयों को अधिक स्वायत्तता:** रेलवे के जोनल कार्यालयों को अधिक स्वायत्तता देने का सुझाव दिया गया है। इससे निर्णय लेने की प्रक्रिया तेज होगी और प्रत्येक जोन अपनी कार्यक्षमता के लिए स्वयं जिम्मेदार होगा।
- **निगमीकरण (Corporatization):** रेलवे के कार्यों को एक कॉर्पोरेट संस्था की तरह संचालित करने का भी सुझाव दिया गया है। इससे रेलवे की वित्तीय स्थिति मजबूत होगी, जवाबदेही बढ़ेगी और दीर्घकालिक स्थिरता सुनिश्चित होगी।

बाल तस्करी मामले पर सुप्रीम कोर्ट का निर्णय

सन्दर्भ:

हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने देशभर के अभिभावकों के लिए निर्देश जारी किया है, जिसमें बच्चों की सुरक्षा को लेकर अधिक सतर्क रहने की आवश्यकता बताई है। यह निर्देश देश में सक्रिय बाल तस्करी नेटवर्कों की बढ़ती घटनाओं के सन्दर्भ में दी गई है। सुप्रीम कोर्ट ने पिंकी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य मामले में इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा 13 आरोपियों को दी गई ज़मानत को रद्द कर दिया है। इन सभी पर एक अंतर-राज्यीय बाल तस्करी गिरोह का हिस्सा होने का गंभीर आरोप है।

मामले की पृष्ठभूमि:

- सुप्रीम कोर्ट उन आपराधिक अपीलों की सुनवाई कर रहा था, जिनमें इलाहाबाद हाईकोर्ट द्वारा कई आरोपियों को दी गई जमानत को चुनौती दी गई थी। इन आरोपियों पर भारतीय दंड संहिता, 1860 की धारा 363 (अपहरण), धारा 311 (बार-बार अपराध करने वाला), धारा 370(5) (नाबालिगों की तस्करी) के तहत आरोप लगाए गए हैं।
- यह मामला संदिग्ध बड़े पैमाने पर बाल तस्करी नेटवर्क से जुड़ा है, जो कथित तौर पर नाबालिगों (विशेष रूप से आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि के बच्चों के अपहरण) के खरीद और बिक्री में लिप्त है।

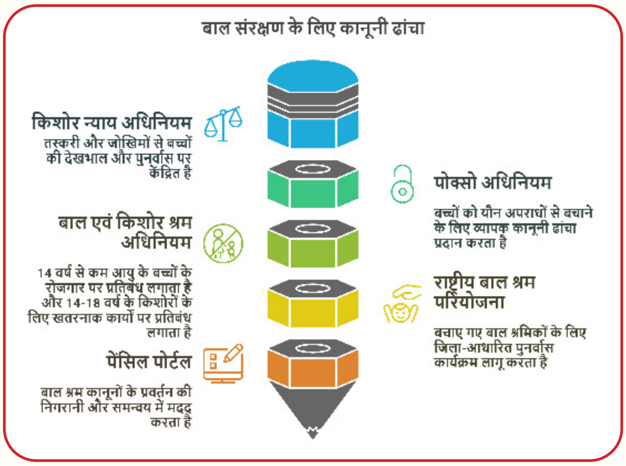

न्यायिक निर्देश और परिणाम:

- सुप्रीम कोर्ट ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा जारी जमानत आदेश को रद्द करते हुए सभी आरोपियों को तत्काल न्यायिक हिरासत के

लिए कमिटल कोर्ट (Committal Court) के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया।

- न्यायालय ने निम्नलिखित निर्देश जारी किए:
  - » मुकदमे की सुनवाई छह महीने के भीतर पूरी की जाएगी।
  - » विशेष लोक अभियोजकों की नियुक्ति की जाएगी।
  - » पीड़ित परिवारों के लिए गवाह सुरक्षा का प्रावधान सुनिश्चित किया जाएगा।
  - » पुलिस को दो महीने के भीतर फरार आरोपियों का पता लगाकर उन्हें गिरफ्तार करना होगा।
- इसके अतिरिक्त, स्वास्थ्य देखभाल संस्थानों से जुड़ी बाल तस्करी पर प्रभावी कदम उठाने के लिए, न्यायालय ने आदेश दिया कि यदि कोई अस्पताल नवजात शिशुओं की सुरक्षा में लापरवाही करता है, तो उसका लाइसेंस तुरंत निलंबित किया जाएगा और उसके खिलाफ कानूनी कार्रवाई की जाएगी।

सुप्रीम कोर्ट के अन्य प्रमुख निर्देश:

- **लापता बच्चों के मामले:** हर लापता बच्चे के मामले को संभावित अपहरण या तस्करी का मामला माना जाए, जब तक कि कुछ और साबित न हो।
- **अनिवार्य रिपोर्टिंग:** पुलिस और मानव तस्करी रोधी इकाइयों (AHTUs) को हर तस्करी के मामले की तत्काल रिपोर्टिंग करनी होगी।
- **राज्य-स्तरीय एंटी-ह्यूमन ट्रैफिकिंग ब्यूरो की स्थापना:** प्रत्येक राज्य की राजधानी में एक विशेष ब्यूरो स्थापित किया जाए, जो तस्करी रोधी प्रयासों का समन्वय करेगा।
- **बाल कल्याण समितियों (CWCs) को मजबूत बनाना:** प्रत्येक जिले में कुशल और प्रशिक्षित स्टाफ के साथ प्रभावी बाल कल्याण समितियाँ (CWCs) मौजूद हों, ताकि बच्चों के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित की जा सके।
- **बाल-मित्र अदालतों की स्थापना:** तेलंगाना और पश्चिम बंगाल जैसे सफल मॉडल्स को अपनाकर, ऐसी बाल-मित्र अदालतें स्थापित की जाएं जहाँ बच्चों को सुरक्षित और सहज महसूस हो।
- **पीड़ित सहायता प्रणाली को मजबूत करना:** बचाए गए बच्चों के लिए मानसिक स्वास्थ्य सेवाएं, कानूनी सहायता और पुनर्वास सेवाएं लागू की जाएं, ताकि उनका समग्र पुनर्वास सुनिश्चित हो सके।
- **समुदाय आधारित पुलिसिंग को बढ़ावा देना:** आम नागरिक की भागीदारी से तस्करी की पहचान, निगरानी और रिपोर्टिंग को बढ़ावा दिया जाए, ताकि अपराध की पहचान समय रहते हो सके।
- **गैर-सरकारी संगठन (NGO) के साथ समन्वय:** गैर-सरकारी संगठनों के साथ संपूर्ण समन्वय सुनिश्चित किया जाए, ताकि बचाव, पुनर्वास और जागरूकता अभियानों को प्रभावी तरीके से लागू किया जा सके।

लागू कानूनी ढांचा और सरकारी योजनाएं:

- **किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015:** यह अधिनियम तस्करी या अन्य जोखिमों का शिकार हुए बच्चों की देखभाल, संरक्षण और पुनर्वास पर ध्यान केंद्रित करता है।
- **पोक्सो अधिनियम, 2012:** यह अधिनियम बच्चों को यौन अपराधों से बचाने के लिए एक विस्तृत कानूनी ढांचा प्रदान करता है, जिसमें विशेष बाल-अनुकूल प्रक्रियाएं शामिल हैं।
- **बाल एवं किशोर श्रम (निषेध और विनियमन) अधिनियम, 1986:** यह अधिनियम 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के रोजगार पर प्रतिबंध लगाता है और 14-18 वर्ष के किशोरों के लिए खतरनाक कार्यों पर प्रतिबंध लगाता है।
- **राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना (एनसीएलपी):** यह परियोजना बचाए गए बाल श्रमिकों के लिए जिला-आधारित पुनर्वास कार्यक्रम लागू करती है।
- **पेंसिल पोर्टल:** यह एक केंद्रीकृत मंच है, जो बाल श्रम कानूनों के प्रवर्तन पर निगरानी रखने और अंतर-विभागीय समन्वय सुनिश्चित करने में मदद करता है।